



॥ ॐ ॥
॥ श्री परमात्मने नमः ॥
॥ श्री गणेशाय नमः ॥

॥ ऋग्वेद संहिता ॥





॥ ऋग्वेद ॥

॥ अथ चतुर्थ मण्डलं ॥



श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥



विषय सूची

सूक्त १.....	6
सूक्त २.....	14
सूक्त ३.....	22
सूक्त ४.....	28
सूक्त ५.....	34
सूक्त ६.....	40
सूक्त ७.....	45
सूक्त ८.....	50
सूक्त ९.....	53
सूक्त १०.....	56
सूक्त ११.....	59
सूक्त १२.....	62
सूक्त १३.....	65
सूक्त १४.....	68
सूक्त १५.....	71
सूक्त १६.....	75
सूक्त १७.....	84
सूक्त १८.....	93
सूक्त १९.....	99



सूक्त २०.....	104
सूक्त २१.....	109
सूक्त २२.....	114
सूक्त २३.....	119
सूक्त २४	124
सूक्त २५	129
सूक्त २६	133
सूक्त २७	136
सूक्त २८	139
सूक्त २९	142
सूक्त ३०.....	145
सूक्त ३१.....	153
सूक्त ३२.....	158
सूक्त ३३.....	166
सूक्त ३४	171
सूक्त ३५	176
सूक्त ३६	180
सूक्त ३७	184
सूक्त ३८.....	188
सूक्त ३९.....	193



सूक्त ४०.....	196
सूक्त ४१.....	199
सूक्त ४२	204
सूक्त ४३	209
सूक्त ४४	213
सूक्त ४५.....	216
सूक्त ४६.....	220
सूक्त ४७.....	223
सूक्त ४८	225
सूक्त ४९	227
सूक्त ५०	230
सूक्त ५१.....	235
सूक्त ५२	240
सूक्त ५३	243
सूक्त ५४	246
सूक्त ५५.....	249
सूक्त ५६.....	253
सूक्त ५७.....	256
सूक्त ५८	260



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त १

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – अग्नि, २-५ अग्नि वरुणौ । छंद – त्रिष्टुप्, १ अष्टिः, २
अतिजगती ३ धृति

त्वां ह्यग्ने सदमित्समन्यवो देवासो देवमरतिं न्येरिर इति क्रत्वा न्येरिरे ।
अमर्त्यं यजत मर्त्येष्व्वा देवमादेवं जनत प्रचेतसं विश्वमादेवं जनत
प्रचेतसम् ॥१॥

हे वरुणदेव ! आप अविनाशी तथा तेजस् सम्पन्न हैं । उत्साहयुक्त
समस्त देव अपने पराक्रम द्वारा आपको प्राप्त करते हैं । अनश्वर,
प्रकाशमान तथा अत्यन्त विद्वान् हे अग्निदेव ! देवताओं ने मानवों के
लिए कल्याणकारी यज्ञ के निमित्त आपको पैदा किया । आप समस्त
कर्मों को जानने वाले हैं । देवताओं ने समस्त यज्ञों में उपस्थित रहने
के लिए आपको उत्पन्न किया ॥१॥

स भ्रातरं वरुणमग्न आ ववृत्स्व देवाँ अच्छा सुमती यज्ञवनसं ज्येष्ठं
यज्ञवनसम् ।



ऋतावानमादित्यं चर्षणीधृतं राजानं चर्षणीधृतम् ॥२॥

हे अग्निदेव ! वरुणदेव आपके बन्धु हैं। आहुतियों के योग्य, यज्ञ का सेवन करने वाले, जल को धारण करने वाले, यज्ञों में वन्दनीय, सद्बुद्धि वाले वरुणदेव अत्यन्त ओज से परिपूर्ण हैं। ऐसे वरुणदेव को आप याजकों की ओर प्रेरित करें ॥२॥

सखे सखायमभ्या ववृत्स्वाशुं न चक्रं रथ्येव रंह्यास्मभ्यं दस्म रंह्या ।
अग्ने मृळीकं वरुणे सचा विदो मरुत्सु विश्वभानुषु ।
तोकाय तुजे शुशुचान शं कृध्यस्मभ्यं दस्म शं कृधि ॥३॥

हे श्रेष्ठ सखा अग्निदेव ! जैसे द्रुतगामी अश्व शीघ्र गमन करने वाले रथ को ले जाते हैं, उसी प्रकार आप अपने सखा वरुणदेव को हमारी ओर ले आँ। हे अग्निदेव ! आप वरुणदेव तथा तेजस्-सम्पन्न मरुद्गण के साथ सोमरस ग्रहण करें। हे तेजस्वी अग्निदेव ! आप हमारी सन्तानों को सुख प्रदान करें। हे दर्शनीय अग्निदेव ! आप हमें सुखी बनाएँ ॥३॥

त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान्देवस्य हेळोऽव यासिसीष्ठाः ।
यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्र मुमुग्ध्यस्मत् ॥४॥



हे अग्निदेव ! आप सर्वज्ञ, कान्तिमान्, पूजनीय और भली प्रकार आहुतियों को देवों तक पहुँचाने वाले हैं। आप हमारे लिए वरुण देवता को प्रसन्न करें और हमारे सब प्रकार के दुर्भाग्यों को नष्ट करें ॥४॥

स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ ।
अव यक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृळीकं सुहवो न एधि ॥५॥

हे अग्निदेव ! इस उषाकाल में अपनी रक्षक शक्ति सहित हमारे अत्यधिक निकट आकर, आप हमारी रक्षा करें तथा हमारी आहुतियों को वरुणदेव तक पहुँचाकर उन्हें तृप्त करें । सर्वदा आवाहन करने योग्य आप (अग्निदेव) स्वयं हमारी सुखदायी हवि को ग्रहण करें ॥५॥

अस्य श्रेष्ठा सुभगस्य संदग्देवस्य चित्रतमा मर्त्येषु ।
शुचि घृतं न तप्तमध्यायाः स्पर्हा देवस्य मंहनेव धेनोः ॥६॥

जिस प्रकार गोपाल (गाय पालने वाले) के पास गो-दुग्ध तथा घृत, पवित्र और तेजस् युक्त होते हैं तथा गो दान करने वाले का दान प्रशंसनीय होता है, उसी प्रकार श्रेष्ठ धनवान् अग्निदेव का प्रार्थनीय तेज मानवों के बीच अत्यन्त पूजनीय तथा स्पृहणीय होता है ॥६॥

त्रिरस्य ता परमा सन्ति सत्या स्पर्हा देवस्य जनिमान्यग्नेः ।
अनन्ते अन्तः परिवीत आगाच्छुचिः शुक्रो अर्यो रोरुचानः ॥७॥



महान् गुण-सम्पन्न अग्निदेव के तीन श्रेष्ठ रूप (अग्नि, वायु और सूर्य के नाम से) जाने जाते हैं । वे अग्निदेव अनन्त अन्तरिक्ष में संव्याप्त, सबको पवित्र करने वाले आलोक से युक्त तथा अत्यन्त तेजस्वी हैं। वे हमारे निकट ज्ञ स्थल पर पधारें ॥७॥

स दूतो विश्वेदभि वष्टि सद्मा होता हिरण्यरथो रंसुजिह्वः ।
रोहिदश्चो वपुष्यो विभावा सदा रण्वः पितुमतीव संसत् ॥८॥

वे अग्निदेव देवताओं का आवाहन करने वाले, सन्देशवाहक, स्वर्णिम रथ वाले तथा श्रेष्ठ ज्वालाओं वाले हैं । वे समस्त श्रेष्ठ गृहों में गमन करने की कामना करते हैं। रोहित वर्ण के घोड़ों वाले, सुन्दर, कान्तिमान् अग्निदेव धन-धान्य से सम्पन्न गृह की भाँति सुखकारी हैं ॥८॥

स चेतयन्मनुषो यज्ञबन्धुः प्र तं मह्ना रशनया नयन्ति ।
स क्षेत्यस्य दुर्यासु साधन्देवो मर्तस्य सधनित्वमाप ॥९॥

अध्वर्युगण रशना (अणि मंथन की रस्सी) द्वारा अग्निदेव को प्रकट करते हैं। यज्ञ में सबके हितैषी बन्धु अग्निदेव सभी लोगों को ज्ञान-सम्पन्न बनाते हैं । वे याजक के घर में उसके अभीष्ट को सम्पादित करते हुए विद्यमान रहते हैं । वे प्रकाशमान अग्निदेव अपने उपासक (याजको के साथ निवास करते हैं ॥९॥

स तू नो अग्निर्नयतु प्रजानन्नच्छा रत्नं देवभक्तं यदस्य ।



धिया यद्विश्वे अमृता अकृण्वन्द्यौषिता जनिता सत्यमुक्षन् ॥१०॥

जिस उत्कृष्ट ऐश्वर्य को सभी श्रेष्ठजन भजते हैं, सर्वज्ञाता अग्निदेव के उस महान् ऐश्वर्य को हम प्राप्त करें। समस्त अविनाशी देवताओं ने यज्ञ के निमित्त अग्निदेव को पैदा किया। द्युलोक उनके पालन करने वाले हैं। याजकगण उस अनश्वर अग्नि को घृत आदि की आहुतियों से सिंचित करते हैं ॥१०॥

स जायत प्रथमः पस्त्यासु महो बुध्रे रजसो अस्य योनौ ।
अपादशीर्षा गुहमानो अन्तायोयुवानो वृषभस्य नीळे ॥११॥

वे अग्निदेव (यज्ञादि कर्म सम्पन्न करने वाले) मनुष्यों के गृह में प्रथम अग्रणी होकर रहते हैं, तत्पश्चात् विशाल अन्तरिक्ष में, पुनः धरती पर पैदा हुए। वे अग्निदेव बिना सिर और पैर वाले हैं। वे सभी के अन्दर विद्यमान रहते हैं। वे जल बरसाने वाले बादलों के साथ (विद्युत् रूप में) अपने को मिला देते हैं ॥११॥

प्र शर्ध आर्त प्रथमं विपन्याँ ऋतस्य योना वृषभस्य नीळे ।
स्पर्हो युवा वपुष्यो विभावा सप्त प्रियासोऽजनयन्त वृष्णे ॥१२॥

अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए सात होताओं ने स्पृहणीय, नित्य युवा तथा सुन्दर शरीर वाले तेजोयुक्त अग्निदेव को प्रकट किया। हे अग्निदेव ! आपने जल के उत्पत्ति स्थान तथा जल बरसाने वाले मेघों



के स्थान आकाश में विद्यमान रहकर, प्रार्थनाओं द्वारा सर्वश्रेष्ठ शक्तियों को ग्रहण किया ॥१२॥

अस्माकमत्र पितरो मनुष्या अभि प्र सेदुर्कृतमाशुषाणाः ।
अश्मव्रजाः सुदुघा वव्रे अन्तरुदुस्त्रा आजन्नुषसो हुवानाः ॥१३॥

हमारे पितरों ने इस लोक में यज्ञन करते हुए अग्निदेव को ग्रहण किया था। उन्होंने उषा की प्रार्थना करते हुए पर्वतों के मध्य अन्धकारपूर्ण गुफाओं में छिपी हुई दुधारू गौओं (पोषक रसधाराओं या प्रकाश किरणों) को मुक्त किया ॥१३॥

ते मर्मजत ददवांसो अद्रि तदेषामन्ये अभितो वि वोचन् ।
पश्वयन्त्रासो अभि कारमर्चन्विदन्त ज्योतिश्चकृपन्त धीभिः ॥१४॥

उन पितरों ने पहाड़ों को नष्ट करके अग्निदेव को पवित्र बनाया। उनके इस कृत्य का अन्य लोगों ने सम्पूर्ण जगत् में वर्णन किया। उनको पशुओं की सुरक्षा का उपाय मालूम था। वाञ्छित फल प्रदान करने वाले अग्निदेव की उन्होंने प्रार्थना की तथा ज्योति-लाभ प्राप्त किया। अपने विवेक के द्वारा उन्होंने स्वयं को शक्ति से सम्पन्न बनाया ॥१४॥

ते गव्यता मनसा दध्रमुब्धं गा येमानं परि षन्तमद्रिम् ।
दृव्हं नरो वचसा दैव्येन व्रजं गोमन्तमुशिजो वि वव्रुः ॥१५॥

उन अंगिरस् गोत्रीय पितरों ने गो (पोषक धारा या प्रकाश किरण) प्राप्त करने की आकांक्षा से, अवरुद्ध द्वार वाले, भली-भाँति बन्द, सुदृढ़ गौओं से भरे हुए गोष्ठ (गोशाला) रूप पर्वत को अपने अग्नि विषयक वैदिक स्तोत्र की सामर्थ्य से खोल दिया ॥१५॥

ते मन्वत प्रथमं नाम धेनोस्त्रिः सप्त मातुः परमाणि विन्दन् ।
तज्जानतीरभ्यनूषत ब्रा आविर्भुवदरुणीर्यशसा गोः ॥१६॥

वाणी के शब्द स्तुत्य हैं, यह सर्वप्रथम समझकर अङ्गिरा आदि ऋषियों ने (गायत्री आदि) इक्कीस छन्दों में होने वाले स्तोत्रों को जाना । तत्पश्चात् उस वाणी से उषा की स्तुति की, जिस तेज से अरुण किरणें (सूर्य किरणें) प्रकट हुई ॥१६॥

नेशत्तमो दुधितं रोचत द्यौरुद्देव्या उषसो भानुरर्त ।
आ सूर्यो बृहतस्तिष्ठदज्राँ ऋजु मर्तेषु वृजिना च पश्यन् ॥१७॥

रात्रि द्वारा पैदा किया हुआ तुम, उषा देवी की प्रेरणा से विनष्ट हो गया। उसके बाद आकाश आलोकित हो गया और उषादेवी की प्रभा प्रकट हो गयीं । तत्पश्चात् मनुष्यों के अच्छे और बुरे कर्मों का निरीक्षण करते हुए सूर्य देव विशाल पर्वत के ऊपर आरूढ़ (प्रकट) हुए ॥१७॥

आदित्यश्चा बुबुधाना व्यख्यन्नादिद्रत्नं धारयन्त द्युभक्तम् ।
विश्वे विश्वासु दुर्यासु देवा मित्र धिये वरुण सत्यमस्तु ॥१८॥



सूर्योदय होने के बाद समस्त ऋषियों ने धरती पर अग्निदेव को प्रज्वलित किया तथा तेजोयुक्त आभूषणों को ग्रहण किया। उसके बाद समस्त पूजनीय देवगण सभी घरों में पधारे । बाधाओं का निवारण करने वाले तथा मित्ररूप हे अग्निदेव ! जो आपकी साधना करते हैं, उनकी समस्त कामनाएं पूर्ण हों ॥१८॥

अच्छा वोचेय शुशुचानमग्निं होतारं विश्वभरसं यजिष्ठम् ।
शुच्यूधो अतृणन्न गवामन्धो न पूतं परिषिक्तमंशोः ॥१९॥

हे अग्निदेव ! आप अत्यन्त प्रकाशवान्, देवताओं का आवाहन करने वाले तथा विश्व का पोषण करने वाले हैं। आप सर्वश्रेष्ठ तथा वन्दनीय हैं, अतः हम आपकी प्रार्थना करते हैं। याजक लोगों ने आपको आहुति प्रदान करने के लिए गौओं के स्तन से पवित्र दुग्ध नहीं दुहा है तथा सोम को अभिषुत नहीं किया है, फिर भी आप उनकी प्रार्थना को स्वीकार करें ॥१९॥

विश्वेषामदितिर्यज्ञियानां विश्वेषामतिथिर्मानुषाणाम् ।
अग्निर्देवानामव आवृणानः सुमृळीको भवतु जातवेदाः ॥२०॥

वे अग्निदेव अदिति के समान समस्त यज्ञीय देवताओं को पैदा करने वाले हैं तथा समस्त मानवों के वन्दनीय अतिथि हैं । मनुष्यों की प्रार्थनाओं को ग्रहण करने वाले अग्निदेव स्तोताओं के लिए सुख, समृद्धि तथा प्रसन्नता प्रदान करने वाले हों ॥२०॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त २

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – अग्नि । छंद – त्रिष्टुप,

यो मर्त्येष्वमृत ऋतावा देवो देवेष्वरतिर्निधायि ।
होता यजिष्ठा महा शुचध्वै हव्यैरग्निर्मनुष ईरयध्वै ॥१॥

जो अविनाशी अग्निदेव मनुष्यों के बीच में यथार्थ रूप से विद्यमान रहते हैं, देवताओं के बीच में रिपुओं को पराजित करने वाले के रूप में रहते हैं, वे सर्वाधिक वंदनीय अग्निदेव देवताओं का आवाहन करने वाले हैं। वे अपनी महिमा से याजकों को आहुतियों द्वारा प्रदीप्त करने की प्रेरणा देते हैं ॥१॥

इह त्वं सूनो सहसो नो अद्य जातो जातौ उभयाँ अन्तरग्रे ।
दूत ईयसे युयुजान ऋष्व ऋजुमुष्कान्वृषणः शुक्राँश्च ॥२॥

हे शक्ति के पुत्र अग्निदेव ! आप देखने योग्य हैं। आज आप हमारे इस यज्ञ कृत्य में प्रकट हुए हैं । आप अपने शक्तिशाली, प्रकाशमान, कोमल तथा पुष्ट अश्वों को रथ में नियोजित करके, उपस्थित देवताओं तथा मनुष्यों के बीच में दूत बनकर पहुँचते हैं ॥२॥



अत्या वृधसू रोहिता घृतसू ऋतस्य मन्ये मनसा जविष्ठा ।
अन्तरीयसे अरुषा युजानो युष्माँश्च देवान्विश आ च मर्तान् ॥३॥

हे सत्यरूप अग्निदेव ! आपके उन लाल रंग वाले तथा अन्न-जल की वर्षा करने वाले अश्वों की हम प्रार्थना करते हैं, जो मन से भी अधिक वेगवान् हैं। आप अपने प्रकाशवान् अश्वों को रथ में नियोजित करके मनुष्यों तथा ओं के बीच में विचरण करें ॥३॥

अर्यमणं वरुणं मित्रमेषामिन्द्राविष्णू मरुतो अश्विनोत ।
स्वश्चो अग्ने सुरथः सुराधा एदु वह सुहविषे जनाय ॥४॥

हे अग्निदेव ! आप श्रेष्ठ रथों, अश्वों तथा धनों से सम्पन्न हैं । आप इन मनुष्यों के बीच में श्रेष्ठ आहुतियों वाले याजक के लिए मित्र, वरुण, अर्यमा, इन्द्र, मरुद्गण, विष्णु तथा अश्विनीकुमारों को इस यज्ञस्थल पर ले आएँ ॥४॥

गोमाँ अग्नेऽविमाँ अश्वी यज्ञो नृवत्सखा सदमिदप्रमृष्यः ।
इळावाँ एषो असुर प्रजावान्दीर्घो रयिः पृथुबुध्नः सभावान् ॥५॥

हे बलशाली अग्निदेव ! हमारा यह यज्ञ गौओं, अश्व, भेड़ों, अन्न तथा मनुष्यों से सम्पन्न हो । यह यज्ञ आहुतियों तथा सन्तानों से सम्पन्न हो और हमेशा विद्यमान रहने वाले धन तथा श्रेष्ठ प्रेरणाओं से परिपूर्ण हो ॥५॥



यस्त इधं जभरत्सिष्विदानो मूर्धानं वा ततपते त्वाया ।
भुवस्तस्य स्वतवाँः पायुरग्ने विश्वस्मात्सीमघायत उरुष्य ॥६॥

हे अग्निदेव ! आपके लिए (यज्ञ के निमित्त) समिधाओं को चुनकर लाने वाले जो व्यक्ति पसीने से युक्त होते हैं, जो आपकी अभिलाषा से अपने सिर को लकड़ी के भार से पीड़ित करते हैं, उन व्यक्तियों का आप पोषण करें तथा उन्हें ऐश्वर्यवान् बनायें। इसके अलावा समस्त शत्रुओं से उनकी रक्षा करें ॥६॥

यस्ते भरादन्नियते चिदन्नं निशिषन्मन्द्रमतिथिमुदीरत् ।
आ देवयुरिनधते दुरोणे तस्मिन्नयिर्ध्रुवो अस्तु दास्वान् ॥७॥

हे अग्निदेवे ! धन-धान्य की अभिलाषा से जो आपको हविष्यान्न, हर्ष प्रदायक सोमरस तथा अतिथि के सदृश सम्मान प्रदान करते हैं, जो देवत्व की कामना से अपने गृह में आपको प्रदीप्त करते हैं। उन व्यक्तियों की सन्ताने उदार हों तथा धर्म-कर्तव्य का दृढ़ता से पालन करने वाली हों ॥७॥

यस्त्वा दोषा य उषसि प्रशंसात्प्रियं वा त्वा कृणवते हविष्मान् ।
अश्वो न स्वे दम आ हेम्यावान्तमंहसः पीपरो दाश्वान्सम् ॥८॥

हे अग्निदेव ! जो व्यक्ति प्रातः तथा सायंकाल आपकी प्रार्थना करते हैं और हविष्यान्न समर्पित कर आपको हर्षित करते हैं, उन व्यक्तियों



को गरीबी से उसी प्रकार पार करें, जिस प्रकार पथिक स्वर्णिम जीन वाले अश्वों से कठिन मार्गों को पार कर जाते हैं ॥८॥

यस्तुभ्यमग्रे अमृताय दाशद्दुवस्त्वे कृणवते यतसुक् ।
न स राया शशमानो वि योषन्नैनमंहः परि वरदघायोः ॥९॥

हे अग्रे ! आप अविनाशी हैं । जो याजक आपके निमित्त आहुतियाँ प्रदान करते हैं तथा सुवा को हाथ में लेकर आपकी परिचर्या करते हैं, वे कभी भी धनाभाव से ग्रसित न हों तथा हिंसक प्राणी उन्हें पीड़ित न कर सकें ॥९॥

यस्य त्वमग्रे अध्वरं जुजोषो देवो मर्तस्य सुधितं रराणः ।
प्रीतेदसद्धोत्रा सा यविष्ठासाम यस्य विधतो वृधासः ॥१०॥

हे तरुण अग्निदेव ! आप हर्ष तथा आलोक से सम्पन्न हैं । आप जिस व्यक्ति के श्रेष्ठ लोक कल्याणकारी भावनाओं से सम्पन्न यज्ञ भाग को ग्रहण करते हैं, वे याज्ञिक निश्चित रूप से हर्षित होते हैं। यज्ञादि सत्कर्मों को सम्पन्न करने वाले श्रेष्ठ याजकों का ही अनुसरण हम सभी करें ॥१०॥

चित्तिमचितिं चिनवद्वि विद्वान्पृष्ठेव वीता वृजिना च मर्तान् ।
राये च नः स्वपत्याय देव दितिं च रास्वादितिमुरुष्य ॥११॥

हे अग्निदेव ! जिस प्रकार अश्वपालक अश्व के पृष्ठ (पीठ) पर कसे हुए साज को उससे अलग कर देता है, उसी प्रकार आप व्यक्तियों के पाप तथा पुण्य को अलग-अलग करें । हे अग्निदेव ! आप हमें श्रेष्ठ सन्तानों से युक्त ऐश्वर्य प्रदान करें तथा दानशीलता प्रदान करके उदार बनाएँ ॥११॥

कविं शशासुः कवयोऽदब्धा निधारयन्तो दुर्यास्वायोः ।
अतस्त्वं दृश्याँ अग्न एतान्पङ्क्तिभिः पश्येरद्भुताँ अर्य एवैः ॥१२॥

हे अग्निदेव ! आप मेधावी हैं। आप श्रेष्ठ मनुष्यों के घरों में यज्ञाग्नि रूप में विद्यमान रहने वाले तथा परास्त न होने वाले हैं। देवों ने आपके मेधावी रूप की प्रार्थना की है । हे अग्निदेव आप अपने चलायमान तेज से समस्त देव मानवों को भी तेजस्वी बनाएँ ॥१२॥

त्वमग्ने वाघते सुप्रणीतिः सुतसोमाय विधते यविष्ठ ।
रत्नं भर शशमानाय घृष्वे पृथुश्चन्द्रमवसे चर्षणिप्राः ॥१३॥

नेतृत्व करने वालों में श्रेष्ठ तेजयुक्त तथा नित्य तरुण हे अग्निदेव ! आप सभी मनुष्यों की कामनाओं को पूर्ण करने वाले हैं। सोमरस अभिषुत करने वाले, परिचर्या करने वाले तथा प्रार्थना करने वाले याजकों को आप अत्यन्त हर्षप्रदायक सम्पत्तियाँ प्रदान करते हुए उनकी सब प्रकार से रक्षा करें ॥१३॥

अथा ह यद्वयमग्ने त्वाया पङ्क्तिभिर्हस्तेभिश्चकृमा तनूभिः ।
रथं न क्रन्तो अपसा भुरिजोर्ऋतं येमुः सुध्य आशुषाणाः ॥१४॥

हे अग्निदेव ! जिस प्रकार कोई शिल्पकार रथ को तैयार करता है, उसी प्रकार आपकी कामना करते हुए, यज्ञ कर्म में निरत तथा उत्तम कर्म करने वाले अगिरादि ऋषियों ने अपनी भुजाओं से (अरणि मंथन करके) सत्यरूप आपको प्रकट किया था। उसी के निमित्त हम भी अपने हाथों, पैरों तथा शरीर से कार्य करते हैं ॥१४॥

अधा मातुरुषसः सप्त विप्रा जायेमहि प्रथमा वेधसो नृन् ।
दिवस्पुत्रा अङ्गिरसो भवेमाद्रिं रुजेम धनिनं शुचन्तः ॥१५॥

हम सात सूर्य पुत्र सबसे पहले (जाग्रत् होने वाले) विद्वान् हैं। हमने माता उषा से (उषा काल में यज्ञ के निमित्त) अग्नि की किरणों को पैदा किया है। हम आलोकवान् सूर्यदेव के पुत्र अगिरा हैं। हम तेज-सम्पन्न होकर ऐश्वर्य वाले पहाड़ों (जल से सम्पन्न मेघों) को विदीर्ण करें ॥१५॥

अधा यथा नः पितरः परासः प्रत्नासो अग्न ऋतमाशुषाणाः ।
शुचीदयन्दीधितिमुक्थशासः क्षामा भिन्दन्तो अरुणीरप व्रन् ॥१६॥

हमारे पूर्वजों ने श्रेष्ठ, प्राचीन और तरूप यज्ञ कर्मों में निरत रहकर श्रेष्ठ स्थान तथा ओज को प्राप्त किया। उन लोगों ने स्तोत्रों को उच्चारित करके तम को नष्ट किया तथा अरुण रंगवाली उषा को प्रकाशित किया ॥१६॥



सुकर्माणः सुरुचो देवयन्तोऽयो न देवा जनिमा धमन्तः ।
शुचन्तो अग्निं ववृधन्त इन्द्रमूर्ध्वं गव्यं परिषदन्तो अगमन् ॥१७॥

जिस प्रकार लोहार धौकनी द्वारा लोहे को पवित्र बनाते हैं, उसी प्रकार श्रेष्ठ यज्ञादि कर्म में निरत तथा अभिलाषा करने वाले याजक यज्ञादि कर्म से मनुष्य जीवन को पवित्र बनाते हैं। वे अग्निदेव को प्रदीप्त करके इन्द्रदेव को समृद्ध करते हैं। चारों तरफ से घेर करके उन्होंने महान् गौओं (पोषक प्रवाहों) के झुण्ड को प्राप्त किया था ॥१७॥

आ यूथेव क्षुमति पश्वो अख्यद्देवानां यज्जनिमान्युग्र ।
मर्तानां चिदुर्वशीरकृप्रन्वृधे चिदर्य उपरस्यायोः ॥१८॥

हे तेजस्वी अग्निदेव ! जैसे अन्न से सम्पन्न घर में पशुओं के झुण्ड की सराहना की जाती है, उसी प्रकार जो लोग देवताओं के निकट उनकी प्रार्थना करते हैं, उनकी सन्तानें समर्थ होती हैं और उनके स्वामी पालन करने में सक्षम होते हैं ॥१८॥

अकर्म ते स्वपसो अभूम ऋतमवसन्नृषसो विभातीः ।
अनूनमग्निं पुरुधा सुश्वन्द्रं देवस्य मर्मृजतश्चारु चक्षुः ॥१९॥

हे आलोकवान् अग्निदेव ! हम आपकी उपासना करते हैं, जिससे हम सत्कर्म वाले होते हैं। आलोकमान उषाएँ आपके ही सम्पूर्ण तेज को



धारण करती हैं। उस तेज से लाभान्वित होते हुए हम विविध प्रकार से, हर्षकारी आप की उपासना करते हैं ॥१९॥

एता ते अग्न उचथानि वेधोऽवोचाम कवये ता जुषस्व ।
उच्छोचस्व कृणुहि वस्यसो नो महो रायः पुरुवार प्र यन्धि ॥२०॥

हे मेधावी अग्निदेव ! आप विधाता हैं । आपके निमित्त हम समस्त स्तोत्रों को उच्चारित करते हैं, आप इन्हें स्वीकार करके प्रदीप्त हों । आप हमें अत्यधिक ऐश्वर्यवान् बनाएँ। बहुतों द्वारा वरण करने योग्य हे अग्निदेव ! आप हमें श्रेष्ठ सम्पत्तियाँ प्रदान करें ॥२०॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ३

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – अग्नि, १ रुद्र । छंद – त्रिष्टुप,

आ वो राजानमध्वरस्य रुद्रं होतारं सत्ययजं रोदस्योः ।
अग्निं पुरा तनयित्वोरचित्ताद्विरण्यरूपमवसे कृणुध्वम् ॥१॥

हे सत्पुरुषो ! चंचल बिजली की तरह आने वाली मृत्यु के पूर्व ही अपनी रक्षा के लिए यज्ञ के स्वामी, देवों के आवाहक, रुद्र रूप, द्यावा-पृथिवी के बीच वास्तविक यजन प्रक्रिया चलाने वाले, स्वर्णिम आभायुक्त अग्निदेव का पूजन करें ॥१॥

अयं योनिश्चकृमा यं वयं ते जायेव पत्य उशती सुवासाः ।
अर्वाचीनः परिवीतो नि षीदेमा उ ते स्वपाक प्रतीचीः ॥२॥

हे अग्निदेव ! श्रेष्ठ परिधानों से अलंकृत स्त्री, जिस प्रकार पति की अभिलाषा करती हुई उसे अपने निकट श्रेष्ठ आसन प्रदान करती हैं, उसी प्रकार हम भी आपको श्रेष्ठ आसन (उत्तर वेदी के रूप में) प्रदान करते हैं । वहीं स्थान आपके लिए उपयुक्त है । हे सत्कर्म करने वाले



अग्निदेव ! आप अपनी तेजस्विता से अलंकृत होकर पधारें। हम आपकी वन्दना करते हैं ॥२॥

आशृण्वते अदृपिताय मन्म नृचक्षसे सुमृलीकाय वेधः ।
देवाय शस्तिममृताय शंस ग्रावेव सोता मधुषुद्यमीळे ॥३॥

हे अग्निदेव ! आप याजकों द्वारा की गई स्तुतियों को ध्यान पूर्वक सुनने वाले, सम्पूर्ण जगत् का एक दृष्टि से दर्शन करने वाले, सज्जनों को सुख प्रदान करने वाले, प्रखर, तेजस्वी तथा अविनाशी हैं ॥३॥

त्वं चित्रः शम्या अग्ने अस्या ऋतस्य बोध्यतचित्स्वाधीः ।
कदा त उक्था सधमाद्यानि कदा भवन्ति सख्या गृहे ते ॥४॥

सत्कर्म करने वाले, विद्वान् हे अग्निदेव ! आप ही हमारे यज्ञ के अनुष्ठान को समझें । आपके लिए गान किये गये स्तोत्र हमें कब हर्ष प्रदान करने वाले होंगे? हमारे घर पर आपको मित्रभाव से प्रतिष्ठित करने का अवसर कब प्रकट होगा? ॥४॥

कथा ह तद्वरुणाय त्वमग्ने कथा दिवे गर्हसे कन्न आगः ।
कथा मित्राय मीळ्हुषे पृथिव्यै ब्रवः कदर्यम्णे कद्ग्राय ॥५॥

हे अग्निदेव ! आप हमारे पाप कर्मों की चर्चा वरुणदेव से क्यों करते हैं ? आप सूर्यदेव से हमारी निन्दा क्यों करते हैं ? हम लोगों का कौन



सा अपराध है ? हर्ष प्रदाता मित्रदेव, पृथ्वी, अर्यमा और भगदेव नामक देवताओं से आपने हमारे प्रति कौन से वचन कहे हैं? ॥५॥

कद्विष्ण्यासु वृधसानो अग्ने कद्वाताय प्रतवसे शुभये ।
परिज्मने नासत्याय क्षे ब्रवः कदग्ने रुद्राय नृघ्ने ॥६॥

हे अग्निदेव ! आप जब यज्ञ की हवियों से संवर्द्धित होते हैं, तब उन कथाओं को क्यों कहते हैं ? महान् शक्तिशाली, कल्याणकारी, सभी स्थानों पर गमन करने वाले, सत्य के नायक वायुदेव से तथा पृथ्वी से उन बातों को क्यों कहते हैं ? हे अग्निदेव ! पाप करने वाले व्यक्तियों का संहार करने वाले रुद्रदेव से उस बात को क्यों कहते हैं? ॥६॥

कथा महे पुष्टिम्भराय पूष्णे कद्रुद्राय सुमखाय हविर्दे ।
कद्विष्णव उरुगायाय रेतो ब्रवः कदग्ने शरवे बृहत्यै ॥७॥

हे अग्निदेव ! श्रेष्ठ पुष्टि-प्रदायक पूषादेव से उस पाप कथा को क्यों कहते हैं ? श्रेष्ठ यज्ञ वाली आहुतियों से समृद्ध रुद्रदेव से, बहुप्रशंसनीय विष्णुदेव से उस पाप कर्म को क्यों कहते हैं ? बृहत् संवत्सर से इस पाप युक्त बात को क्यों कहते हैं? ॥७॥

कथा शर्धाय मरुतामृताय कथा सूरे बृहते पृच्छ्यमानः ।
प्रति ब्रवोऽदितये तुराय साधा दिवो जातवेदश्चिकित्वान् ॥८॥



हे अग्निदेव ! यथार्थभूत मरुतों से हमारे उस पापकर्म को क्यों कहते हैं? पूछे जाने पर आदित्य से, अदिति तथा शीघ्रगामी वायु से उस पापकर्म को क्यों कहते हैं? है अग्निदेव ! आप समस्त पदार्थों को जानने वाले हैं। आप सब कुछ जानकर दिव्यता प्रदान करें ॥८॥

ऋतेन ऋतं नियतमीळ आ गोरामा सचा मधुमत्पक्रमग्रे ।
कृष्णा सती रुशता धासिनैषा जामर्येण पयसा पीपाय ॥९॥

हे अग्निदेव ! हम त यज्ञ से सम्बद्ध त गौ (यज्ञ से उद्भूत पोषक प्रवाह) की याचना करते हैं। वह (ग) कच्ची अवस्था में भी मधुर परिपक्व दुग्ध (पोषक रस) संचरित करने में समर्थ होती हैं । वह श्यामवर्ण होने पर भी श्वेत पुष्टिवर्धक दुग्ध से प्रज्ञा का पालन करती हैं ॥९॥

ऋतेन हि ष्मा वृषभश्चिदक्तः पुमाँ अग्निः पयसा पृष्ठ्येन ।
अस्पन्दमानो अचरद्वयोधा वृषा शुक्रं दुदुहे पृश्निरूधः ॥१०॥

बलशाली तथा महान् अग्निदेव पोषण करने वाले दुग्ध से सिंचित होते हैं । अन्नप्रदाता वे अग्निदेव एक-एक स्थान पर विद्यमान रहकर भी अपनी सामर्थ्य से सभी जगह गमन करते हैं । पानी बरसाने वाले सूर्यदेव आकाश से दिव्यरस रूप प्राणपर्जन्य का दोहन करते हैं ॥१०॥

ऋतेनाद्रिं व्यसन्भिदन्तः समङ्गिरसो नवन्त गोभिः ।
शुनं नरः परि षदनुषासमाविः स्वरभवज्जाते अग्नौ ॥११॥

अङ्गिरावंशियों ने यज्ञ की सामर्थ्य से पर्वतों को नष्ट करके रिपुओं (बाधाओं को दूर किया और गौओं (प्रकाश किरणों) को ग्रहण किया। उसके बाद मनुष्यों ने हर्षपूर्वक उषा को प्राप्त किया। उसी समय अग्निदेव के प्रकट होने पर सूर्यदेव उदित हुए ॥११॥

ऋतेन देवीरमृता अमृक्ता अर्णोभिरापो मधुमद्भिरग्ने ।
वाजी न सर्गेषु प्रस्तुभानः प्र सदमित्स्रवितवे दधन्युः ॥१२॥

हे अग्निदेव ! अमरधर्मा, अविरल रूप से प्रवाहित होने वाली, मीठे जल वाली दिव्यं सरिताएँ, संग्राम में जाने वाले उत्साही घोड़े की तरह, यज्ञ द्वारा प्रेरित होकर हमेशा प्रवाहित होती हैं ॥१२॥

मा कस्य यक्षं सदमिद्धुरो गा मा वेशस्य प्रमिनतो मापेः ।
मा भ्रातुरग्ने अनृजोर्ऋणं वेर्मा सख्युर्दक्षं रिपोर्भुजेम ॥१३॥

हे अग्निदेव ! किसी हिंसा करने वाले के यज्ञ में आप कभी न जाएँ तथा पाप बुद्धि वाले हमारे पड़ोसी के यज्ञ में भी न जाएँ। हमें छोड़कर अन्य दुष्ट भ्राता के यज्ञ में न जाएँ और कपट स्वभाव वाले भाई की आहुति की अभिलाषा न करें। हम सभी किसी भी मित्र या शत्रु के अधीन न रहें ॥१३॥

रक्षा णो अग्ने तव रक्षणेभी रारक्षाणः सुमख प्रीणानः ।
प्रति ष्फुर वि रुज वीड्वंहो जहि रक्षो महि चिद्वावृधानम् ॥१४॥

हे सुमुख (यज्ञ रूप) अग्निदेव ! आप हम सबके संरक्षक होकर प्रसन्नतापूर्वक रक्षण साधनों द्वारा हमारी सुरक्षा करें और हम सबको तेजस्वी बनाएँ। आप हमारे कठिन-से-कठिन पापों को विनष्ट करें तथा बढ़े हुए भयंकर असुरों का विनाश करें ॥१४॥

एभिर्भव सुमना अग्ने अर्कैरिमान्स्पृश मन्मभिः शूर वाजान् ।
उत ब्रह्माण्यङ्गिरो जुषस्व सं ते शस्तिर्देववाता जरेत ॥१५॥

हे अग्निदेव ! आप हमारे अर्चन-योग्य स्तोत्रों द्वारा हर्षित मन वाले हों । हे पराक्रमी ! आप हमारे हविरूप अन्नों को मननीय स्तोत्रों के साथ स्वीकार करें । हे अङ्गिरस् को जानने वाले अग्निदेव ! आप हमारे स्तोत्रों को स्वीकार करें तथा देवताओं को हर्षित करने वाली प्रार्थनाओं से आप समृद्ध हों ॥१५॥

एता विश्वा विदुषे तुभ्यं वेधो नीथान्यग्ने निण्या वचांसि ।
निवचना कवये काव्यान्यशंसिषं मतिभिर्विप्र उक्थैः ॥१६॥

हे विधाता अग्निदेव ! आप विद्वान् तथा क्रान्तदर्शी हैं । हम विप्रगण आपके निमित्त फल प्रदायक, गूढ़, अत्यधिक व्याख्याओं से ग्रथित (गुथे हुए प्रार्थनाओं को मन्त्रों तथा उक्त्यों (स्तोत्रों) के साथ उच्चारित करते हैं ॥१६॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ४

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – रक्षोहाऽग्नि । छंद – त्रिष्टुप,

कृणुष्व पाजः प्रसितिं न पृथ्वीं याहि राजेवामवाँ इभेन ।
तृष्वीमनु प्रसितिं द्रूणानोऽस्तासि विध्य रक्षसस्तपिष्ठैः ॥१॥

हे अग्निदेव ! आप शत्रुओं को दूर करने में सक्षम हैं। जिस प्रकार सशक्त राजा हाथियों पर सवार होकर राक्षसी वृत्ति के शत्रुओं पर हमला करते हैं, वैसे ही आप भी हमला करें । पक्षियों को पकड़ने वाले विस्तृत आकार वाले जाल द्वारा दुष्टों को विविध प्रकार के कष्ट देकर प्रताड़ित करें ॥१॥

तव भ्रमास आशुया पतन्त्यनु स्पृश धृषता शोशुचानः ।
तपूंष्यग्ने जुह्वा पतंगानसंदितो वि सृज विष्वगुल्काः ॥२॥

वायु के सम्पर्क से डोलती हुई द्रुतगामी लपटों से असुरों को भस्म कर डालें । आहुति प्रदान करने पर आप बढ़ी हुई ज्वालाओं के द्वारा



असुरों का संहार करें । इस हेतु टूटकर गिरने वाले तारे की गति से अपने तेज को प्रेरित करें ॥२॥

प्रति स्पशो वि सृज तूर्णितमो भवा पायुर्विशो अस्या अदब्धः ।
यो नो दूरे अघशंसो यो अन्त्यग्रे माकिष्टे व्यथिरा दधर्षीत् ॥३॥

हे अदम्य अग्निदेव ! हमारे निकटस्थ या दूरस्थ जो भी शत्रु हैं, उन सबको वश में करने के लिए अति गतिशील सैनिकों को भेजें । हमारी सन्तानों की रक्षा करें । कोई भी आपके भक्तों को पीड़ा न पहुँचा सके ॥३॥

उदग्रे तिष्ठ प्रत्या तनुष्व न्यमित्राँ ओषतात्तिग्महेते ।
यो नो अरातिं समिधान चक्रे नीचा तं धक्ष्यतसं न शुष्कम् ॥४॥

हे अग्निदेव ! आप जीवन्त होकर अपनी ज्वालाओं का विस्तार करें। उन तीव्र ज्वालाओं के प्रभाव से शत्रुओं को पूर्णरूपेण भस्म कर डालें। हे ज्योतिर्मय ! हमारी प्रगति में जो बाधक हैं, उन्हें सूखे वृक्ष के समान ही समूल भस्म कर डालें ॥४॥

ऊर्ध्वो भव प्रति विध्याध्यस्मदाविष्कृणुष्व दैव्यान्यग्रे ।
अव स्थिरा तनुहि यातुजूनां जामिमजामिं प्र मृणीहि शत्रून् ॥५॥



हे अग्निदेव ! आप ऊर्ध्वगामी ज्वालाओं से युक्त होकर हमारे शत्रुओं को विध्वंस करें । प्राणियों को कष्ट देने वाले दुष्टों को विजय श्री से हीन करके, हमारे अपराजित शत्रुओं को विनष्ट करें ॥५॥

स ते जानाति सुमतिं यविष्ठ य ईवते ब्रह्मणे गातुमैरत् ।
विश्वान्यस्मै सुदिनानि रायो द्युम्नान्यर्यो वि दुरो अभि द्यौत् ॥६॥

हे नित्य युवा अग्निदेव ! आप तीव्र गति से ऊर्ध्वगमन करने वाले तथा महान् हैं । जो व्यक्ति आपकी प्रार्थना करते हैं, वे आपकी कृपा प्राप्त करते हैं। आप यज्ञ के स्वामी हैं। आप उस व्यक्ति के निमित्त समस्त शुभ दिनों , ऐश्वर्यों तथा रत्नों को धारण करें। आप उसके घर के सम्मुख प्रकाशित हों ॥६॥

सेदग्रे अस्तु सुभगः सुदानुर्यस्त्वा नित्येन हविषा य उक्थैः ।
पिप्रीषति स्व आयुषि दुरोणे विश्वेदस्मै सुदिना सासदिष्टिः ॥७॥

हे अग्निदेव ! जो याजक मन्त्रोच्चारण करते हुए आहुतियाँ समर्पित करके प्रतिदिन आपको तुष्ट करने की कामना करते हैं, वे सभी श्रेष्ठ, सौभाग्यशाली तथा दानी हों । कठिनाई से प्राप्त करने योग्य सौ वर्ष के आयुष्य को वे प्राप्त करें । उनके सभी दिन शुभ हों और वे यज्ञीय साधनों से परिपूर्ण रहें ॥७॥

अर्चामि ते सुमतिं घोष्यर्वाक्सं ते वावाता जरतामियं गीः ।
स्वश्वास्त्वा सुरथा मर्जयेमास्मे क्षत्राणि धारयेरनु द्यून् ॥८॥



हे अग्निदेव ! हम आपकी कृपालु-श्रेष्ठ बुद्धि की पूजा करते हैं। आपके लिए उच्चारित की जाने वाली वाणी, आपके गुणों का गान करे । पुत्र-पौत्रों, श्रेष्ठ अश्वों तथा रथों से सम्पन्न होकर हम आपकी अभ्यर्थना करेंगे। आप नित्यप्रति हमारे निमित्त समस्त पोषक शक्तियों को धारण करें ॥८॥

इह त्वा भूर्या चरेदुप त्मन्दोषावस्तर्दीदिवांसमनु द्यून् ।
क्रीळन्तस्त्वा सुमनसः सपेमाभि द्युम्ना तस्थिवांसो जनानाम् ॥९॥

हे अग्निदेव ! आप सदैव प्रज्वलित रहते हैं। इस जगत् में सभी आपकी समीपता का लाभ लेते हुए सदैव आपकी सेवा करते हैं । हम भी अपने शत्रुओं के ऐश्वर्यों को नियन्त्रित करते हुए उत्साह एवं हर्षपूर्वक आपकी उपासना करते हैं ॥९॥

यस्त्वा स्वश्वः सुहिरण्यो अग्न उपयाति वसुमता रथेन ।
तस्य त्राता भवसि तस्य सखा यस्त आतिथ्यमानुषगुजोषत् ॥१०॥

हे अग्निदेव ! जो व्यक्ति यज्ञ के लिए उपयोगी धन-ऐश्वर्य से सम्पन्न तथा श्रेष्ठ घोड़ों से योजित स्वर्णिम रथों द्वारा आपके निकट पहुँचते हैं, साथ ही जो आपका अतिथि के सदृश स्वागत-सम्मान करते हैं; सच्चे मित्र की भाँति आप उनकी सुरक्षा करते हैं ॥१०॥

महो रुजामि बन्धुता वचोभिस्तन्मा पितुर्गोतमादन्वियाय ।
त्वं नो अस्य वचसश्चिकिद्धि होतर्षविष्ठ सुक्रतो दमूनाः ॥११॥



हे सत्कर्मशील युवा, होतारूप अग्निदेव ! आपकी स्तुतियाँ करते हुए हमने जो बन्धुभाव अर्जित किया है, उससे हम बड़ी-बड़ी आसुरी शक्तियों को नष्ट करें। उन स्तोत्र वचनों को हमने अपने पिता गौतम ऋषि से प्राप्त किया था। हे रिपुओं का दमन करने वाले अग्निदेव ! आप हमारी प्रार्थना को सुनें ॥११॥

अस्वप्रजस्तरणयः सुशेवा अतन्द्रासोऽवृका अश्रमिष्ठाः ।
ते पायवः सध्यञ्चो निषद्याग्ने तव नः पान्त्वमूर ॥१२॥

हे सर्वज्ञाता अग्निदेव ! आपकी वे किरणें सदैव जाग्रत् रहने वाली, द्रुतगामी, हर्षप्रद, प्रमाद से दूर रहने वाली, हिंसा न करने वाली, न थकने वाली, परस्पर मिलकर चलने वाली तथा सुरक्षा करने वाली हैं। वे इस यज्ञ में पधार कर हमारी सुरक्षा करें ॥१२॥

ये पायवो मामतेयं ते अग्ने पश्यन्तो अन्धं दुरितादरक्षन् ।
ररक्ष तान्सुकृतो विश्ववेदा दिप्सन्त इद्रिपवो नाह देभुः ॥१३॥

हे अग्निदेव ! आपकी रक्षक किरणों ने अनुग्रह करके ममता के अन्धे पुत्र को पापों से बचाया था। आप सर्वज्ञ हैं। आपने उसके सम्पूर्ण पुण्यों की सुरक्षा की थी। हानि पहुँचाकर पराजित करने की कामना करने वाले शत्रु आपके कारण सफल नहीं हो सके ॥१३॥

त्वया वयं सधन्यस्त्वोतास्तव प्रणीत्यश्याम वाजान् ।
उभा शंसा सूदय सत्यतातेऽनुष्ठुया कृणुह्यहयाण ॥१४॥



(यज्ञस्थल पर) निःसंकोच पहुँचने वाले हे अग्निदेव ! हम याजक आपकी कृपा से आपके द्वारा संरक्षित होकर तथा आपके द्वारा निर्देशित पथ पर चलकर धन-धान्य का लाभ प्राप्त करें । हे सत्य का विस्तार करने वाले अग्निदेव ! आप हमारे निकटस्थ तथा दूरस्थ रिपुओं का विनाश करें और क्रम से सम्पूर्ण कार्य करें ॥१४॥

अया ते अग्ने समिधा विधेम प्रति स्तोमं शस्यमानं गृभाय ।
दहाशसो रक्षसः पाह्यस्मान्द्रुहो निदो मित्रमहो अवद्यात् ॥१५॥

हे अग्निदेव ! समिधाओं के द्वारा हम आपको प्रज्वलित करते हैं। आप हमारी स्तुतियों को ग्रहण करें और स्तुतिरहित असुरों का विनाश करें । सखा के सदृश, वंदनीय हे अग्निदेव ! आप रिपुओं, निन्दकों तथा विद्रोहियों से हमारी रक्षा करें ॥१५॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ५

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – वैश्वानरोऽग्नि । छंद – त्रिष्टुप,

वैश्वानराय मीळुषे सजोषाः कथा दाशेमाग्रये बृहद्भाः ।
अनूनेन बृहता वक्षथेनोप स्तभायदुपमित्र रोधः ॥१॥

सभी प्राणियों के प्रति समान भाव रखने वाले हम याजकगण, उन सुखकारी एवं तेजस्वी वैश्वानर अग्निदेव के निमित्त, किस प्रकार आहुति प्रदान करें ? जिस प्रकार स्तम्भ छप्पर को धारण करता है, उसी प्रकार वे अग्निदेव अपने अत्यधिक बृहत् शरीर से समस्त जगत् को धारण करते हैं ॥१॥

मा निन्दत य इमां मह्यं रातिं देवो ददौ मर्त्याय स्वधावान् ।
पाकाय गृत्सो अमृतो विचेता वैश्वानरो नृतमो यह्नो अग्निः ॥२॥

हे होताओ ! जो वैश्वानरदेव आहुतियों से सन्तुष्ट होकर, ज्ञानी तथा मरणधर्मा हम याजकों को ऐश्वर्य प्रदान करते हैं, उनकी आलोचना



न करें। वे अग्निदेव अत्यन्त मेधावान्, अविनाशी तथा बुद्धिमान् हैं, वे अत्यन्त श्रेष्ठ नायक तथा महिमावान् हैं ॥२॥

साम द्विबर्हा महि तिग्मभृष्टिः सहस्ररेता वृषभस्तुविष्मान् ।
पदं न गोरपगूळ्वं विविद्वानग्निर्मह्यं प्रेदु वोचन्मनीषाम् ॥३॥

वे अग्निदेव दोनों लोकों (द्यू तथा भूलोक) में अपनी लपटों को विस्तृत करने वाले, तीक्ष्ण ओजवाले, सहस्रों प्रकार की सामर्थ्यों वाले, अत्यन्त शौर्यवान् तथा साहसी हैं । वे गो पद के सदृश रहस्यमय हैं । विद्वानों के सहयोग से हम उनका ज्ञान प्राप्त करें ॥३॥

प्र ताँ अग्निर्भसत्तिग्मजम्भस्तपिष्ठेन शोचिषा यः सुराधाः ।
प्र ये मिनन्ति वरुणस्य धाम प्रिया मित्रस्य चेततो ध्रुवाणि ॥४॥

ज्ञानी मित्रदेव और वरुणदेव के प्रिय पात्रों को जो व्यक्ति विनष्ट करते हैं, उनको श्रेष्ठ धन वाले तथा तीक्ष्ण दाँतों वाले अग्निदेव अपने प्रखर तेज से भस्मसात् करें ॥४॥

अभ्रातरो न योषणो व्यन्तः पतिरिपो न जनयो दुरेवाः ।
पापासः सन्तो अनृता असत्या इदं पदमजनता गभीरम् ॥५॥

बन्धु विहीन तथा पति से विद्वेष करने वाली स्त्री जिस प्रकार दुःख पाती है, उसी प्रकार सत्यविहीन यज्ञानुष्ठान से रहित तथा अग्नि से



विद्वेष करने वाले असत्यभाषी पापी व्यक्ति नरक जैसी परिस्थितियाँ उत्पन्न करते हैं ॥५॥

इदं मे अग्ने कियते पावकामिनते गुरुं भारं न मन्म ।
बृहद्दधाथ धृषता गभीरं यद्दं पृष्ठं प्रयसा सप्तधातु ॥६॥

सभी को पवित्रता प्रदान करने वाले हे अग्निदेव ! जैसे कोई उदारचेता पुरुष कम याचना करने वाले को भी अधिक दान देता है, उसी प्रकार आप मुझ अहिंसक को, रिपुओं को परास्त करने योग्य बल से युक्त, गम्भार तथा महान् आश्रय प्रदान करने वाले सप्त धातुओं से सम्पन्न प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करें ॥६॥

तमिन्नेव समना समानमभि क्रत्वा पुनती धीतिरश्याः ।
ससस्य चर्मन्नधि चारु पृश्नेरग्रे रुप आरुपितं जबारु ॥७॥

अनेक रंगों वाली तथा समस्त पदार्थों को उत्पन्न करने वाली धरती पर द्रुतगामी वैश्वानर देव को प्रजापति ने विचरण करने के लिए आरोपित किया । हमारे द्वारा यज्ञादि सत्कर्मों के समय पहले ही मनोयोगपूर्वक की गई पवित्रताकारक प्रार्थनाएँ उन समदशी वैश्वानर को प्राप्त होती हैं ॥७॥

प्रवाच्यं वचसः किं मे अस्य गुहा हितमुप निणिग्वदन्ति ।
यदुस्रियाणामप वारिव व्रन्पाति प्रियं रुपो अग्रं पदं वेः ॥८॥



विद्वानों का मत है कि गोपालक जिस दूध को पानी के सदृश दुहते हैं, उसी दूध को वैश्वानरदेव गुहा में छिपाकर रखते हैं। वे विस्तृत धरती के प्रीतियुक्त तथा उत्तम प्रदेश की सुरक्षा करते हैं। हमारे इस वक्तव्य में अनुचित कौन सी बात है ? ॥८॥

इदमु त्यन्महि महामनीकं यदुस्रिया सचत पूर्व्य गौः ।
ऋतस्य पदे अधि दीद्यानं गुहा रघुष्यद्रघुयद्विवेद ॥९॥

जिन अग्निदेव की दुग्ध प्रदान करने वाली गौएँ (जल वर्षा करने वाली किरणे) यज्ञादि कर्मा में सहायक होती हैं, जो स्वयं आलोकवान् हैं, गुहा में निवास करते हैं तथा जो द्रुतगति से गमन करते हैं, सूर्यमण्डल में व्याप्त उन वन्दनीय वैश्वानर देव के विषय में हम जानते हैं ॥९॥

अथ द्युतानः पित्रोः सचासामनुत गुह्यं चारु पृश्रेः ।
मातुष्यदे परमे अन्ति षट्शोर्वृष्णः शोचिषः प्रयतस्य जिह्वा ॥१०॥

माता-पिता के सदृश द्यावा-पृथिवी के मध्य में आलोकित होनेवाले (वैश्वानर) सूर्यदेव गाय के श्रेष्ठ दुग्ध का मुख से पान करते हैं। बलशाली, तेजोयुक्त तथा प्रयत्नशील वैश्वानर की जिह्वा, गो माता के उत्कृष्ट स्थान में स्थित दूध को पीने की इच्छा करती है ॥१०॥

ऋतं वोचे नमसा पृच्छ्यमानस्तवाशसा जातवेदो यदीदम् ।
त्वमस्य क्षयसि यद्ध विश्वं दिवि यदु द्रविणं यत्पृथिव्याम् ॥११॥



किसी के द्वारा पूछे जाने पर हम यजमान नमस्कार करते हुए इस सत्य बात का निवेदन करते हैं कि हे अग्निदेव ! आपकी कृपा से जो कुछ भी हमें प्राप्त हुआ है, उसके आप ही अधिकारी हैं । द्यावा-पृथिवी में विद्यमान समस्त ऐश्वर्यों के भी आप स्वामी हैं ॥११॥

किं नो अस्य द्रविणं कद्ध रत्नं वि नो वोचो जातवेदश्चिकित्वान् ।
गुहाध्वनः परमं यन्नो अस्य रेकु पदं न निदाना अगन्म ॥१२॥

सभी प्राणियों के ज्ञाता हे अग्निदेव ! इस सम्पत्ति में से कौन सा ऐश्वर्य तथा रत्न हमारे लिए उपयुक्त है ? उसको आप बताएँ, क्योंकि आप सर्वज्ञाता हैं। हमारे योग्य गुफा में विद्यमान ऐश्वर्य को प्राप्त करने का श्रेष्ठ मार्ग हमें बताएँ, जिससे हम लक्ष्य पूर्ति के अभाव में निन्दित होकर अपने घर न लौटें ॥१२॥

का मर्यादा वयुना कद्ध वाममच्छा गमेम रघवो न वाजम् ।
कदा नो देवीरमृतस्य पत्नीः सूरौ वर्णेन ततनन्नुषासः ॥१३॥

धन प्राप्त करने की क्या सीमा है? वह मनोहर धन क्या है ? जिस प्रकार द्रुतगामी अश्व संग्राम की ओर गमन करते हैं, उसी प्रकार हमें समस्त ऐश्वर्यों की तरफ गमन करते हैं । अविनाशी आदित्यदेव की तेजस्वी पत्नियाँ उषाएँ अपने द्युलोक से हमें कब प्रकाशित करेंगी ? ॥१३॥

अनिरेण वचसा फल्वेन प्रतीत्येन कृधुनातृपासः ।
अथा ते अग्ने किमिहा वदन्त्यनायुधास आसता सचन्ताम् ॥१४॥



हे अग्निदेव ! रूखी, फलरहित, कठोर तथा अल्पाक्षर वाणी वाले अतृप्त लोग इस यज्ञ में आपकी क्या प्रार्थना करेंगे? शौर्य एवं आयुधों से रहित मनुष्य दुःख प्राप्त करते हैं ॥१४॥

अस्य श्रिये समिधानस्य वृष्णो वसोरनीकं दम आ रुरोच ।
रुशद्वसानः सुदृशीकरूपः क्षितिर्न राया पुरुवारो अद्यौत् ॥१५॥

प्रज्वलित रहने वाले, बल वाले तथा सबको निवास प्रदान करने वाले अग्निदेव का तेज यजमान के हित के लिए यज्ञमण्डप में सदैव आलोकित होता रहता है । शुभ्र तेजस्वी परिधान धारण करने के कारण उनका रूप मनोहर है। वे अनेकों के द्वारा आहूत होकर उसी प्रकार आलोकित होते हैं, जिस प्रकार धन-ऐश्वर्य को प्राप्त करके कोई राजपुरुष आलोकित होता है ॥१५॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ६

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – अग्नि । छंद – त्रिष्टुप,

ऊर्ध्व ऊ षु णो अध्वरस्य होतरग्रे तिष्ठ देवताता यजीयान् ।
त्वं हि विश्वमभ्यसि मन्म प्र वेधसश्चित्तिरसि मनीषाम् ॥१॥

यज्ञ के सम्पादक हे अग्ने ! आप सर्वश्रेष्ठ याज्ञिक हैं । अतः हम याजकों से आप ऊँचे स्थान पर विराजमान हों । आप ही हमारी स्तुतियों को सुनने वाले हैं। आप विद्वान् याजकों की बौद्धिक क्षमता को बढ़ाने वाले हैं ॥१॥

अमूरो होता न्यसादि विक्ष्वग्निर्मन्द्रो विदथेषु प्रचेताः ।
ऊर्ध्व भानुं सवितेवाश्रेन्मेतेव धूमं स्तभायदुप द्याम् ॥२॥

ज्ञानवान्, यज्ञसम्पादक, हर्षप्रदायक तथा मेधावी अग्निदेव यज्ञ में याजकों के बीच प्रतिष्ठित होकर सुशोभित होते हैं । वे आदित्य के



सदृश अपनी रश्मियों को ऊर्ध्वमुखी करते हैं तथा स्तम्भ के सदृश द्युलोक के ऊपर धूम्र को स्थापित करते हैं (अर्थात् यज्ञीय ऊर्जा का ऊर्ध्व लोकों तक विस्तार करते हैं) ॥२॥

यता सुजूर्णी रातिनी घृताची प्रदक्षिणिद्देवतातिमुराणः ।
उदु स्वरुर्नवजा नाक्रः पश्वो अनक्ति सुधितः सुमेकः ॥३॥

याजकों ने घृत से परिपूर्ण प्राचीन सुवा पात्र हाथ में सँभाल लिया है । यज्ञ संवर्धक अध्वर्युगण यज्ञ के चारों तरफ प्रदक्षिणा करते हैं तथा नवनिर्मित यूप सीधा खड़ा है। आक्रामक, प्रदीप्त, सर्वदर्शी तथा श्रेष्ठ प्रतिभाशाली अग्निदेव प्रज्वलित हो रहे हैं ॥३॥

स्तीर्णे बर्हिषि समिधाने अग्रा ऊर्ध्वो अध्वर्युर्जुषाणो अस्थात् ।
पर्यग्निः पशुपा न होता त्रिविष्ट्येति प्रदिव उराणः ॥४॥

कुश-आसनों के बिछाये जाने पर तथा अग्नि के प्रज्वलित होने पर याजक देवताओं को हर्षित करने के लिए खड़े होते हैं । यज्ञ सम्पादक, तेजस्वी तथा महान् गुण सम्पन्न अग्निदेव, समर्पित की गई आहुतियों को विस्तृत करते हुए तीनों लोकों में फैलाते हैं । इस प्रकार सबका पालन करते हैं ॥४॥

परि त्मना मितद्रुरेति होताग्निर्मन्द्रो मधुवचा ऋतावा ।



द्रवन्त्यस्य वाजिनो न शोका भयन्ते विश्वा भुवना यदभ्राट् ॥५॥

देवों का आवाहन करने वाले, सबको हर्ष प्रदान करने वाले तथा मधुर ध्वनि करने वाले यज्ञाग्नि देव, सामान्य गति से चारों ओर घूमते हैं। उनकी रश्मियाँ वेगवान् अश्व की तरह चारों ओर दौड़ती हैं और उनके प्रज्वलित होने पर सभी लोक उनसे भयभीत हो जाते हैं ॥५॥

भद्रा ते अग्ने स्वनीक संहृग्धोरस्य सतो विषुणस्य चारुः ।
न यत्ते शोचिस्तमसा वरन्त न ध्वस्मानस्तन्वी रेप आ धुः ॥६॥

हे श्रेष्ठ ज्वालाओं वाले अग्निदेव ! आप शत्रुओं को भयभीत करने वाले तथा सब जगह विद्यमान रहने वाले हैं। आपकी श्रेष्ठ तथा हितकारी छवि भली प्रकार दिखायी देती है; क्योंकि रात्रि के अंधकार द्वारा आपका आलोक ढुका नहीं जा सकता। आसुरी वृत्ति के दुष्टजन आपके शरीर में पाप की स्थापना (आपका दुरुपयोग) नहीं कर सकते ॥६॥

न यस्य सातुर्जनितीरवारि न मातरापितरा नू चिदिष्टौ ।
अधा मित्रो न सुधितः पावकोऽग्निर्दीदाय मानुषीषु विश्व ॥७॥

सबको पैदा करने वाले हे अग्निदेव ! आपके दान (पोषण या प्रकाश) को कोई रोक नहीं सकता। माता-पिता रूप द्युलोक तथा भूलोक



भी आपकी कामना को तुरन्त पूर्ण करने में सक्षम नहीं होते। आप ज्ञानवान् तथा शुद्ध करने वाले हैं। आप सज्जनों के मध्य परम हितैषी मित्र की भाँति प्रकाशित होते हैं ॥७॥

द्विर्यं पञ्च जीजनन्त्संवसानाः स्वसारो अग्निं मानुषीषु विक्षु ।
उषर्बुधमथर्यो न दन्तं शुक्रं स्वासं परशुं न तिग्मम् ॥८॥

बहिन रूप दसों अँगुलियाँ जिन अग्निदेव को अरणि मन्थन द्वारा प्रकट करती हैं; वे अग्निदेव प्रातः काल में जागने वाले, आहुतियों को ग्रहण करने वाले, तेज वाले तथा सुन्दर शरीर वाले हैं। वे तीक्ष्ण फरसे की तरह विरोधी असुरों का संहार करने वाले हैं ॥८॥

तव त्ये अग्ने हरितो घृतस्ना रोहितास ऋज्वञ्चः स्वञ्चः ।
अरुषासो वृषण ऋजुमुष्का आ देवतातिमहन्त दस्माः ॥९॥

हे अग्निदेव ! आपके वे घोड़े (प्रकाश किरणे) यज्ञ में बुलाये जाते हैं। वे लाल रंग वाले, श्रेष्ठ चाल वाले, आलोक फैलाने वाले, सुगठित शरीर वाले, घृत बढ़ाने वाले, युवा तथा दर्शनीय हैं ॥९॥

ये ह त्ये ते सहमाना अयासस्त्वेषासो अग्ने अर्चयश्चरन्ति ।
श्येनासो न दुवसनासो अर्थं तुविष्वणसो मारुतं न शर्धः ॥१०॥



हे अग्ने ! आपकी वे किरणें रिपुओं को परास्त करने वाली, प्रकाशित होने वाली, गतिशील तथा वंदनीय हैं । वे अश्वों के सदृश अपने निर्धारित स्थान पर गमन करती हैं तथा मरुतों की तरह अत्यधिक शब्द करती हैं ॥१०॥

अकारि ब्रह्म समिधान तुभ्यं शंसात्युक्थं यजते व्यू धाः ।
होतारमग्निं मनुषो नि षेदुर्नमस्यन्त उशिजः शंसमायोः ॥११॥

हे प्रज्वलित अग्निदेव ! आपके निमित्त हम याजकों ने स्तोत्र रचित किये हैं। हम उक्थों (स्तोत्रों) का उच्चारण करते हैं तथा यज्ञ करते हैं। आप उन्हें ग्रहण करें । यजमानों द्वारा प्रार्थनीय होता रूप अग्निदेव की पूजा करते हुए श्रेष्ठ ऐश्वर्य की अभिलाषा से याजकगण यज्ञस्थल पर आसीन होते हैं ॥११॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ७

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – अग्नि । छंद – त्रिष्टुप, १ जगती, २-६ अनुष्टुप ,

अयमिह प्रथमो धायि धातृभिर्होता यजिष्ठो अध्वरेष्वीड्यः ।
यमप्रवानो भृगवो विरुरुचुर्वनेषु चित्रं विभ्वं विशेषिशे ॥१॥

देवों के आवाक, यज्ञीय कर्मों के निर्वाहक अग्निदेव यज्ञों में ऋत्विजों के द्वारा प्रशंसनीय स्तुतियों को प्राप्त करने वाले हैं। यज्ञीय कार्य हेतु इस यज्ञवेदी में इन्हें स्थापित किया गया है। यजमानों के उत्कर्ष हेतु भृगुवंशी ऋषियों ने इन विलक्षण एवं विस्तृत कर्मों के सम्पादक अग्निदेव को वनों में प्रज्वलित किया ॥१॥

अग्ने कदा त आनुषग्भुवद्देवस्य चेतनम् ।
अथा हि त्वा जगृभ्रिरे मर्तासो विक्ष्वीड्यम् ॥२॥



हे अग्निदेव ! आप मनुष्यों द्वारा प्रार्थनीय तथा आलोक सम्पन्न हैं। सभी लोग आपको जीवन दाता के रूप में ग्रहण करते हैं। आपका आलोक हर तरफ कब विस्तृत होगा? ॥२॥

ऋतावानं विचेतसं पश्यन्तो द्यामिव स्तृभिः ।
विश्वेषामध्वराणां हस्कतरिं दमेदमे ॥३॥

वे अग्निदेव ज्ञान से युक्त, माया से रहित तथा समस्त यज्ञों को आलोकित करने वाले हैं। जैसे नक्षत्रों के द्वारा द्युलोक सुशोभित होता है, उसी प्रकार आप मनुष्यों के यज्ञगृह को सुशोभित करते हैं ॥३॥

आशुं दूतं विवस्वतो विश्वा यश्चर्षणीरभि ।
आ जभुः केतुमायवो भृगवाणं विशेविशे ॥४॥

जो अग्निदेव द्रुतगामी, याजकों के संदेशवाहक, केतुस्वरूप, तेजोमय तथा अपनी विशेषताओं से समस्त मनुष्यों का उपकार करने वाले हैं; उनको सभी मनुष्य अपने गृहों में प्रतिष्ठित करते हैं ॥४॥

तमीं होतारमानुषक्चिकित्वांसं नि षेदिरे ।
रण्वं पावकशोचिषं यजिष्ठं सप्त धामभिः ॥५॥



यज्ञ सम्पादक, ज्ञानवान्, मनोहर, पवित्र दीप्ति वाले, होताओं में सर्वश्रेष्ठ तथा सात रंग वाली प्रकाश किरणों से सम्पन्न अग्निदेव को यज्ञमानों ने उपयुक्त स्थान पर स्थापित किया हैं ॥५॥

तं शश्वतीषु मातृषु वन आ वीतमश्रितम् ।
चित्रं सन्तं गुहा हितं सुवेदं कूचिदर्धिनम् ॥६॥

अद्भुत ज्ञान वाले उन अग्निदेव को याजकों ने प्रतिष्ठित किया है, जो जल तथा वृक्षों के समूह में विद्यमान रहने वाले, गुफा में रहने वाले, आहुति ग्रहण करने वाले तथा कमनीय होकर भी पास में न रखने लायक हैं ॥६॥

ससस्य यद्वियुता सस्मिन्नूधनृतस्य धामत्रणयन्त देवाः ।
महाँ अग्निर्ममसा रातहव्यो वैरध्वराय सदमिदतावा ॥७॥

वे अग्निदेव साधकों द्वारा नित्य नमनपूर्वक सम्पन्न किये जाने वाले यज्ञों को जानते हैं । वे श्रेष्ठ सत्यवान् तथा आहुतियों को ग्रहण करने वाले हैं । याजकगण प्रातः काल निद्रा को त्यागकर यज्ञादि श्रेष्ठ कर्म करते हुए उन अग्निदेव को हर्षित करते हैं ॥७॥

वैरध्वरस्य दूत्यानि विद्वानुभे अन्ता रोदसी संचिकित्वान् ।
दूत ईयसे प्रदिव उराणो विदुष्टरो दिव आरोधनानि ॥८॥

हे विद्वान् अग्निदेव ! आप यज्ञदूत के (अपने) कार्य के ज्ञाता हैं तथा द्यावा-पृथिवी के बीच में विद्यमान आकाश को जानने वाले हैं । आप अत्यन्त प्राचीन, सबको समृद्ध करने वाले, रिपुओं से पराजित न होने वाले तथा देवताओं के संदेशवाहक हैं । आप दिव्य लोक से भी ऊँचे स्थान में गमन करते हैं ॥८॥

कृष्णं त एम रुशतः पुरो भाश्चरिष्ण्वर्चिर्वपुषामिदेकम् ।
यदप्रवीता दधते ह गर्भं सद्यश्चिज्जातो भवसीदु दूतः ॥९॥

हे तेजसम्पन्न अग्निदेव ! आपका पथ काले रंग का है तथा आपकी प्रभा श्रेष्ठ है । आपका गमनशील तेज तेजस्वी पदार्थों में सर्वश्रेष्ठ है । जब अरणियों के बीच में आप पैदा होते हैं, तब पैदा होकर आप यजमानों के संदेशवाहक हो जाते हैं ॥९॥

सद्यो जातस्य ददृशानमोजो यदस्य वातो अनुवाति शोचिः ।
वृणक्ति तिग्मामतसेषु जिह्वां स्थिरा चिदन्ना दयते वि जम्भैः ॥१०॥

अरणिमन्थन के पश्चात् पैदा हुए अग्निदेव का ओज दिखायी देने लगता है । जब अग्नि की लपटों को लक्ष्य बनाकर हवा चलती है, तब वे काष्ठ के ढेर में अपनी तीक्ष्ण लपटों को संयुक्त कर देते हैं और



कठोर-से कठोर अन्नरूप काष्ठों को अपने तीक्ष्ण दाँतों (लपटों) से भक्षण कर जाते हैं ॥१०॥

तृषु यदन्ना तृषुणा ववक्ष तृषु दूतं कृणुते यद्वा अग्निः ।
वातस्य मेळिं सचते निजूर्वन्नाशुं न वाजयते हिन्वे अर्वा ॥११॥

वे अग्निदेव अपनी द्रुतगामी किरणों द्वारा अन्नरूप काष्ठों को शीघ्र ही भग्नीभूत कर देते हैं। उसके बाद वे अपने आप को संदेशवाहक बना लेते हैं। वे समिधाओं को जलाकर वायु५पाहों से युक्त हो जाते हैं । जिस प्रकार घुड़सवार घोड़े को परिपुष्ट करता है, उसी प्रकार अग्निदेव अपनी लपटों को तेजस्वी बनाते हुए सबको प्रेरणा देते हैं ॥११॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ८

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – अग्नि । छंद – गायत्री

दूतं वो विश्ववेदसं हव्यवाहममर्त्यम् ।
यजिष्ठमृञ्जसे गिरा ॥१॥

सम्पूर्ण ज्ञान से सम्पन्न हे अग्निदेव ! आप हविवाहक हैं । आप समस्त देव शक्तियों के प्रतिनिधि हैं, यज्ञ के साधनरूप हैं । हम आपसे स्तुति के माध्यम से अनुकूल होने की प्रार्थना करते हैं । आप सदा कृपावान् बने रहें ॥१॥

स हि वेदा वसुधितिं महौं आरोधनं दिवः ।
स देवाँ एह वक्षति ॥२॥

महिमावान् वे अग्निदेव समस्त ऐश्वर्यों के ज्ञाता हैं। वे दिव्यलोक के श्रेष्ठतम स्थानों के भी ज्ञाता हैं । इसलिए वे समस्त इन्द्रादिदेवों का हमारे इस यज्ञ में आवाहन करें ॥२॥



स वेद देव आनमं देवाँ ऋतायते दमे ।
दाति प्रियाणि चिद्वसु ॥३॥

वे आलोकवान् अग्निदेव इन्द्रादिदेवों को नमन-वन्दन करने की विधि को जानते हैं । यज्ञ की कामना करने वालों को वे यज्ञ मण्डप में अभीष्ट ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥३॥

स होता सेदु दूत्यं चिकित्वाँ अन्तरीयते ।
विद्वान् आरोधनं दिवः ॥४॥

याजकों से प्राप्त हव्य को देवताओं तक पहुँचाने वाले वे होतारूप अग्निदेव दूत के कार्य को भली-भाँति जानने वाले हैं। वे स्वर्ग लोक के आरोहण-योग्य स्थान को जानने वाले तथा सब जगह विद्यमान रहते हैं ॥४॥

ते स्याम ये अग्नये ददाशुर्हव्यदातिभिः ।
य ई पुष्यन्त इन्धते ॥५॥

जो याजक आहुति प्रदान करके उन अग्निदेव को हर्षित करते हैं; उन्हें समिधाओं द्वारा प्रज्वलित करते हुए समृद्ध करते हैं, ऐसे याजक के समान हम भी यज्ञादि श्रेष्ठ कर्म करते हुए अग्निदेव को प्रसन्न करें ॥५॥



ते राया ते सुवीर्यैः ससवांसो वि शृण्विरे ।
ये अग्रा दधिरे दुवः ॥६॥

जो याजक अग्निदेव को हवि प्रदान करते हुए उनकी सेवा करते हैं,
वे समस्त ऐश्वर्यों से सम्पन्न होकर प्रसिद्धि प्राप्त करते हैं। ऐसे याजक
शक्तिशाली पुत्रों आदि से भी सम्पन्न होते हैं ॥६॥

अस्मे रायो दिवेदिवे सं चरन्तु पुरुस्पृहः ।
अस्मे वाजास ईरताम् ॥७॥

अनेकों द्वारा स्पृहणीय ऐश्वर्य नित्य हमारे समीप आए। वे अग्निदेव
हमारे यज्ञों में विविध प्रकार से धन-धान्य प्रदान करें ॥७॥

स विप्रश्चर्षणीनां शवसा मानुषाणाम् ।
अति क्षिप्रेव विध्यति ॥८॥

वे मेधावी अग्निदेव अपनी सामर्थ्य द्वारा मानवों के कष्टों को द्रुतगामी
बाणों के सदृश तीक्ष्ण प्रहार करके पूर्णरूपेण नष्ट कर देते हैं ॥८॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ९

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – अग्नि । छंद – गायत्री

अग्ने मृळ महौ असि य ईमा देवयुं जनम् ।
इयेथ बर्हिरासदम् ॥१॥

हे अग्निदेव ! आप उपासकों को समृद्ध और सुखी बनाएँ, क्योंकि आप सामर्थ्यवान् हैं-महान् हैं । उपासक यजमानों के समीप पवित्र कुश-आसन पर बैठने के लिये आप पधारें ॥१॥

स मानुषीषु दूळभो विक्षु प्रावीरमर्त्यः ।
दूतो विश्वेषां भुवत् ॥२॥

असुरों द्वारा किये गये प्रहार जिनको नष्ट नहीं कर सकते, मनुष्यलोक में स्वतन्त्र रूप से विचरने वाले वे अनश्वर अग्निदेव सम्पूर्ण देवताओं के दूत हैं ॥२॥

स सद्म परि णीयते होता मन्द्रो दिविष्टिषु ।



उत पोता नि षीदति ॥३॥

वे अग्निदेव यज्ञ मण्डप के चारों तरफ ले जाये जाते हैं। सोमयज्ञों में प्रार्थनीय वे अग्निदेव यज्ञ सम्पादक, होता तथा परिशोधक के रूप में विराजते हैं ॥३॥

उत ग्रा अग्निरध्वर उतो गृहपतिर्दमे ।
उत ब्रह्मा नि षीदति ॥४॥

वे अग्निदेव प्रार्थनीय एवं यज्ञादि कर्म सम्पन्न करने वाले होतारूप हैं। वे यज्ञ-मण्डप में गृह मी तथा ब्रह्मा रूप में विद्यमान रहते हैं ॥४॥

वेषि ह्यध्वरीयतामुपवक्ता जनानाम् ।
हव्या च मानुषाणाम् ॥५॥

हे अग्निदेव ! आप यज्ञों में याजकों द्वारा प्रदत्त आदृतियों की अभिलाषा करते हैं । (यज्ञ में विद्यमान मनुष्यो को) श्रेष्ठ प्रेरणाएँ प्रदान करते हैं ॥५॥

वेषीद्वस्य दूत्यं यस्य जुजोषो अध्वरम् ।
हव्यं मर्तस्य वोव्हवे ॥६॥



हे अग्निदेव ! आहुतियाँ ग्रहण करने के लिए आप जिस याजक के यज्ञ को स्वीकार करते हैं, उसके हव्य को देवताओं तक पहुँचाकर दूत का कार्य भी करते हैं ॥६॥

अस्माकं जोषध्वरमस्माकं यज्ञमङ्गिरः ।
अस्माकं शृणुधी हवम् ॥७॥

अङ्गिरारूप हे अग्निदेव ! आप हमारे यज्ञ में हव्य को ग्रहण करें तथा हमारी स्तुति को सुने ॥७॥

परि ते दूळभो रथोऽस्माँ अश्रोतु विश्वतः ।
येन रक्षसि दाशुषः ॥८॥

किसी से प्रभावित न होने वाला आपका वह रथ जिससे आप (लोकहित हेतु) दान देने वालों की रक्षा करते हैं; उससे हम सबकी चारों ओर से भली-भाँति रक्षा करें ॥८॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त १०

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – अग्नि । छंद – पदपंक्ति; ४, ६, ७ उष्णिग्वा, ५ महापद
पंक्ति ८ उष्णिक

अग्ने तमद्याश्वं न स्तोमैः क्रतुं न भद्रं हृदिस्पृशम् ।
ऋध्यामा त ओहैः ॥१॥

हे अग्निदेव ! आज हम याजकगण यज्ञ के समान (हितकारी), अश्व के समान गतिशील, आपके यश को बढ़ाने के लिए ओह नामक हृदयस्पर्शी स्तोत्रों का प्रयोग करते हैं ॥१॥

अथा ह्यग्ने क्रतोर्भद्रस्य दक्षस्य साधोः ।
रथीर्ऋतस्य बृहतो बभूथ ॥२॥

हे अग्निदेव ! कल्याणकारी, बलवर्द्धक, अभीष्ट प्रदान करने वाले और सत्य स्वरूप आप महान् हैं तथा हमारे यज्ञ के मुख्य आधार हैं ॥२॥

एभिर्नो अर्केर्भवा नो अर्वाज्स्वर्ण ज्योतिः ।



अग्ने विश्वेभिः सुमना अनीकैः ॥३॥

हे अग्निदेव ! सूर्य के सम्मान तेजस्वी, श्रेष्ठमना, आप पूज्य इन्द्रादि देवों के साथ हमारे यज्ञ में पधारें ॥३॥

आभिष्टे अद्य गीर्भिर्गृणन्तोऽग्ने दाशेम ।
प्र ते दिवो न स्तनयन्ति शुष्माः ॥४॥

हे अग्निदेव ! आज हम श्रेष्ठतम स्तोत्रों का उच्चारण करते हुए आपकी प्रार्थना करते हैं। हम आपको आहुतियाँ प्रदान करते हैं । आपकी तेजस्वी लपटें मेघसदृश ध्वनि करती हैं ॥४॥

तव स्वादिष्ठाग्ने संदृष्टिरिदा चिदह इदा चिदक्तोः ।
श्रिये रुक्मो न रोचत उपाके ॥५॥

हे अग्निदेव ! आपकी प्रीतियुक्त प्रभा आभूषण के सदृश हैं । समस्त पदार्थों को आश्रय देने के लिए वह रात-दिन सुशोभित होती है ॥५॥

घृतं न पूतं तनूररेपाः शुचि हिरण्यम् ।
तत्ते रुक्मो न रोचत स्वधावः ॥६॥



हे अन्नसम्पन्न अग्निदेव । आपका स्वरूप शुद्ध घृत के सदृश
पापरहित हैं। आपका पवित्र तथा मनोहर तेज आभूषण के सदृश
आलोकवान् है ॥६॥

कृतं चिद्धि ष्मा सनेमि द्वेषोऽग्र इनोषि मर्तात् ।
इत्था यजमानादृतावः ॥७॥

हे सत्य से सम्पन्न अग्ने ! यज्ञ करने वाले मनुष्यों के प्राचीन से प्राचीन
पाप को भी आप दूर कर देते हैं ॥७॥

शिवा नः सख्या सन्तु भ्रात्राग्ने देवेषु युष्मे ।
सा नो नाभिः सदने सस्मिन्नूधन् ॥८॥

हे अग्निदेव ! देवताओं तथा आपके साथ हमारी मित्रता और बन्धुत्व
भाव कल्याणकारी हो । यह मित्रता यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों के रूप में हम
सबका मंगल करे ॥८॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ११

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – अग्नि । छंद – त्रिष्टुप,

भद्रं ते अग्ने सहसिन्ननीकमुपाक आ रोचते सूर्यस्य ।

रुशदृष्टो दृष्टो नक्तया चिदरूक्षितं दृष्ट आ रूपे अन्नम् ॥१॥

हे बलशाली अग्निदेव ! आपका हितकारी तेजस दिन में भी चारों तरफ आलोकित होता है तथा सुन्दर और देखने योग्य तेजस् रात्रि में भी दिखाई देता है । आप सौंदर्यवान् हैं । सिग्ध आज्य (घृत) हव्य के रूप में आपको समर्पित किया जाता है ॥१॥

वि षाह्यग्रे गृणते मनीषां खं वेपसा तुविजात स्तवानः ।

विश्वेभिर्यद्वावनः शुक्र देवैस्तन्नो रास्व सुमहो भूरि मन्म ॥२॥

विभिन्न रूपों में प्रकट होने वाले है अग्निदेव ! यज्ञादि कर्मों के साथ प्रार्थना करने वालों से आप प्रशंसित होकर उनके लिए स्वर्गलोक के द्वार (उन्नति का मार्ग) खोल देते हैं । श्रेष्ठतम तेज से सम्पन्न हे अग्निदेव



! समस्त देवताओं तथा याजकों को जो महान् ऐश्वर्य प्रदान करते हैं, वही हमको भी प्रदान करें ॥२॥

त्वदग्रे काव्या त्वन्मनीषास्त्वदुक्था जायन्ते राध्यानि ।
त्वदेति द्रविणं वीरपेशा इत्याधिये दाशुषे मर्त्याय ॥३॥

हे अग्रे ! उत्कृष्ट चिन्तन करने वाली बुद्धि (प्रज्ञा) तथा आराधनीय स्तोत्र आपके द्वारा उत्पन्न किये गये हैं। शुभ कर्म करने वाले तथा दान देने वाले मनुष्य के निमित्त पुष्टिकारक ऐश्वर्य भी आपके द्वारा प्रकट किये गये हैं ॥३॥

त्वद्वाजी वाजम्भरो विहाया अभिष्टिकृज्जायते सत्यशुष्मः ।
त्वद्रयिर्देवजूतो मयोभुस्त्वदाशुर्जुवाँ अग्रे अर्वा ॥४॥

हे अग्रे ! बलशाली, अन्न से सम्पन्न, श्रेष्ठ यज्ञ कर्म तथा सत्यबल से सम्पन्न (पुरुष या पुत्र) आपके द्वारा ही पैदा होते हैं। देवताओं के द्वारा प्रेरित हर्षप्रदायक ऐश्वर्य तथा द्रुतगामी (अश्व) भी आपके द्वारा ही उत्पन्न होते हैं ॥४॥

त्वामग्रे प्रथमं देवयन्तो देवं मर्ता अमृत मन्द्रजिह्वम् ।
द्वेषोयुतमा विवासन्ति धीभिर्दमूनसं गृहपतिममूरम् ॥५॥



हे अविनाशी अग्ने ! आप देवताओं में सर्वश्रेष्ठ, महान् गुणसम्पन्न, हर्षप्रदायक जिह्वा वाले, असुरों के संहारक, दुष्टों के विनाशक, गृहपति तथा ज्ञानी हैं। देवाभिलाषी याजकगण विवेक द्वारा आपकी परिचर्या करते हैं ॥५॥

आरे अस्मदमतिमारे अंह आरे विश्वां दुर्मतिं यन्निपासि ।
दोषा शिवः सहसः सूनो अग्ने यं देव आ चित्सचसे स्वस्ति ॥६॥

बल से उत्पन्न होने वाले हे अग्निदेव ! आप रात्रि के समय कल्याणकारी तथा तेजस्वी होकर हमारे हित के लिए हमारी सुरक्षा करते हैं। जिस प्रकार आप याजकों का पोषण करते हैं, उसी प्रकार हमारे अविवेक को दूर करें । हमारे समीप से पाप तथा दुर्बुद्धि को भी दूर करें ॥६॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त १२

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – अग्नि । छंद – त्रिष्टुप,

यस्त्वामग्नं इनधते यतस्रुक्तिस्ते अन्नं कृणवत्सस्मिन्नहन् ।
स सु द्युमैरभ्यस्तु प्रसक्षत्तव क्रत्वा जातवेदश्चिकित्वान् ॥१॥

हे सर्वज्ञाता अग्निदेव ! जो व्यक्ति सुक् (सुवा या इन्द्रियों) को संयमित करके आप (अग्नि या प्राणाग्नि) को प्रदीप्त करते हैं तथा जो नित्य तीनों सवनों में हवि रूप अन्न प्रदान करते हैं, वे इन तुष्टिकारक कार्यों द्वारा आपके तेज को प्राप्त करते हैं। उस तेजस्विता के द्वारा सभी शत्रुओं को परास्त करते हैं ॥१॥

इध्मं यस्ते जभरच्छश्रमाणो महो अग्ने अनीकमा सपर्यन् ।
स इधानः प्रति दोषामुषासं पुष्यत्रयिं सचते घ्नन्नमित्रान् ॥२॥

हे अग्निदेव ! आप महान् हैं । जो मनुष्य परिश्रमपूर्वक आपके निमित्त समिधाएँ लाते हैं और सभी जगह विद्यमान आपके तेज की उपासना



करते हैं, जो प्रातः-सायं आपको प्रज्वलित करते हैं, वे सभी बलशाली होकर अपने रिपुओं का विनाश करते हैं तथा ऐश्वर्य प्राप्त करते हैं ॥२॥

अग्निरीशे बृहतः क्षत्रियस्याग्निर्वाजस्य परमस्य रायः ।
दधाति रत्नं विधत्ते यविष्ठो व्यानुषङ्गर्त्याय स्वधावान् ॥३॥

शौर्य एवं पराक्रम के धनी वे अग्निदेव श्रेष्ठ अन्न तथा धनों के स्वामी हैं। अत्यन्त शक्ति तथा धन-धान्य से सम्पन्न अग्निदेव, स्तोताओं को परम ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥३॥

यच्चिद्धि ते पुरुषत्रा यविष्ठाचित्तिभिश्चकृमा कच्चिदागः ।
कृधी ष्वस्माँ अदितेरनागान्व्येनांसि शिश्रथो विष्वगग्ने ॥४॥

चिरयुवक हे अग्निदेव ! यदि आपके उपासकों के बीच हमने भूलवश कोई पाप किया हो, तो आप हमें उन समस्त पापों से मुक्त करें । सब जगह विद्यमान रहने वाले हे अग्निदेव ! आप हमारे पापों को शिथिल करें ॥४॥

महश्चिदग्न एनसो अभीक ऊवद्दिवानामुत मर्त्यानाम् ।
मा ते सखायः सदमिद्रिषाम यच्छा तोकाय तनयाय शं योः ॥५॥



हे अग्निदेव ! हमारे मित्र होने के कारण आप हमें इन्द्र आदि देवताओं
अथवा मानवों के प्रति अज्ञानवेश किये गये पापों से दण्डित न करें ।
आप हमारे पुत्र तथा पौत्रों को हर्ष और आरोग्य प्रदान करें ॥५॥

यथा ह त्यद्वसवो गौर्यं चित्पदि षिताममुञ्चता यजत्राः ।
एवो ष्वस्मन्मुञ्चता व्यंहः प्र तार्यन्ते प्रतरं न आयुः ॥६॥

हे पूजनीय तथा सबको आश्रय प्रदान करने वाले अग्निदेव ! जिस
प्रकार आपने पैर बँधी गौ को छुड़ाया था, उसी प्रकार हमारे पापों से
हमें मुक्त करें । हे अग्निदेव ! आप हमारी आयु को और भी अधिक
बढ़ायें ॥६॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त १३

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – अग्नि । छंद – त्रिष्टुप,

प्रत्यग्निरुषसामग्रमख्यद्विभातीनां सुमना रत्नधेयम् ।
यातमश्विना सुकृतो दुरोणमुत्सूर्यो ज्योतिषा देव एति ॥१॥

सुन्दर मनवाले अग्निदेव उषाओं के पूर्व ही रत्न के सदृश देदीप्यमान
अपने ओज को फैलाते हैं । हे अश्विनीकुमारो ! आप यज्ञादि सत्कर्म
करने वालों के गृह में गमन करें । तेजस्वी सूर्यदेव उदित हो रहे हैं
॥१॥

ऊर्ध्वं भानुं सविता देवो अश्रेद्द्रप्सं दविध्वद्गविषो न सत्वा ।
अनु व्रतं वरुणो यन्ति मित्रो यत्सूर्यं दिव्यारोहयन्ति ॥२॥

जिस प्रकार बलशाली वृषभ गौओं की इच्छा करके धूल को उड़ाते
हैं, उसी प्रकार तेजस्वी आदित्य अपनी रश्मियों को ऊपर की ओर



फैलाते हैं । जब रश्मियाँ आदित्य को द्युलोक में चढ़ाती हैं, तब मित्रावरुण अपने-अपने कर्मों का अनुगमन करते हैं ॥२॥

यं सीमकृण्वन्तमसे विपृचे ध्रुवक्षेमा अनवस्यन्तो अर्थम् ।
तं सूर्य हरितः सप्त यद्भीः स्पशं विश्वस्य जगतो वहन्ति ॥३॥

अपने स्थान पर दृढ़ रहने वाले तथा अपने कर्म का परित्याग न करने वाले देवताओं ने चारों तरफ की तमिस्री को नष्ट करने के लिए जिन आदित्यदेव का सृजन किया, उन सम्पूर्ण जगत् का अवलोकन करने वाले आदित्यदेव को सात अश्व वहन करते हैं ॥३॥

वहिष्ठेभिर्विहरन्यासि तन्तुमवव्ययत्रसितं देव वस्म ।
दविध्वतो रश्मयः सूर्यस्य चर्मैवावाधुस्तमो अस्वन्तः ॥४॥

हे आलोकवान् सूर्यदेव ! आप अपनी रश्मियों को बिखेरते हुए तथा काली रात रूपी आवरण को नष्ट करते हुए अपने शक्तिशाली अश्वों द्वारा सब जगह गमन करते हैं । कम्पायमान आपकी रश्मियाँ आकाश के बीच में चर्म के समान विद्यमान अंधकार को दूर करती हैं ॥४॥

अनायतो अनिबद्धः कथायं न्यङ्ङुत्तानोऽव पद्यते न ।



कया याति स्वधया को ददर्श दिवः स्कम्भः समृतः पाति नाकम्
॥५॥

बिना आश्रय तथा बन्धन के ये सूर्यदेव किस शक्ति से ऊपर की ओर
गमन करते हैं? वे नीचे क्यों नहीं पतित होते ? इसे किसने देखा है ?
द्युलोक के आश्रय रूप होकर वे सत्यरूप सूर्यदेव स्वर्ग की सुरक्षा
करते हैं ॥५॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त १४

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – अग्नि । छंद – त्रिष्टुप,

प्रत्यग्निरुषसो जातवेदा अख्यदेवो रोचमाना महोभिः ।
आ नासत्योरुगाया रथेनेमं यज्ञमुप नो यातमच्छ ॥१॥

देवत्व सम्पन्न, सर्वज्ञाता अग्निदेव (सूर्य रूप में अपने ओज द्वारा तेजयुक्त उषा को आलोकित करते हैं । हर प्रकार से प्रार्थनीय हे अश्विनीकुमारो ! आप भी अपने रथ द्वारा हमारे यज्ञ में पधारें ॥१॥

ऊर्ध्वं केतुं सविता देवो अश्रेज्योतिर्विश्वस्मै भुवनाय कृण्वन् ।
आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं वि सूर्यो रश्मिभिश्चेकितानः ॥२॥

वे सवितादेव, सम्पूर्ण लोकों को प्रकाशित करते हुए अपनी ऊर्ध्वमुखी रश्मियों का आश्रय लेते हैं। वे सबका अवलोकन करने वाले हैं। अपनी रश्मियों के द्वारा द्यावा-पृथिवी तथा अन्तरिक्ष को परिपूर्ण करते हैं ॥२॥

आवहन्त्यरुणीज्योतिषागान्मही चित्रा रश्मिभिश्चेकिताना ।
प्रबोधयन्ती सुविताय देव्युषा ईयते सुयुजा रथेन ॥३॥

ऐश्वर्य धारण करने वाली, रक्तवर्ण वाली, ज्योति से सम्पन्न रश्मियों के माध्यम से सुन्दर उषा प्रकट होती हैं। वे प्राणियों को जाग्रत् करती हुई उनका कल्याण करने के निमित्त अपने श्रेष्ठ रथ द्वारा सर्वत्र गम्र करती हैं ॥३॥

आ वां वहिष्ठा इह ते वहन्तु रथा अश्वास उषसो व्युष्टौ ।
इमे हि वां मधुपेयाय सोमा अस्मिन्यज्ञे वृषणा मादयेथाम् ॥४॥

हे अश्विनीकुमारो ! उषा के आलोकित होने पर, रथ को खींचने में अत्यन्त सक्षम आपके घोड़े हमारे इस यज्ञ में आप दोनों को ले आएँ । हे शक्तिशाली अश्विनीकुमारो ! यह सोमरस आपके लिए है, अतः इस यज्ञ में सोमरस पान करके आनन्दित हों ॥४॥

अनायतो अनिबद्धः कथायं न्यङ्कुत्तानोऽव पद्यते न ।
कया याति स्वधया को ददर्श दिवः स्कम्भः समृतः पाति नाकम्
॥५॥



बिना आश्रय तथा बन्धन के सूर्यदेव किस शक्ति से ऊपर की ओर गमन करते हैं? वे नीचे क्यों नहीं पतित होते? इसे किसने देखा है ? द्युलोक के आश्रय रूप होकर वे सत्यरूप सूर्यदेव स्वर्ग की सुरक्षा करते हैं ॥५॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त १५

ऋषि – वामदेवो गौतमः

देवता – अग्नि, ७-८ सोमकः साहदेव्य, ९-१० आश्विनौ । छंद –
गायत्री

अग्निर्होता नो अध्वरे वाजी सन्परि णीयते ।
देवो देवेषु यज्ञियः ॥१॥

यज्ञ के होता, देवों के भी देव तथा यजनीय अग्निदेव यज्ञ मण्डप में
द्रुतगामी अश्वों के द्वारा लाये जाते हैं ॥१॥

परि त्रिविष्ट्यध्वरं यात्यग्नी रथीरिव ।
आ देवेषु प्रयो दधत् ॥२॥

वे देव देवों के निमित्त अन्न ग्रहण करके रथी के सदृश यज्ञस्थल के
चारों ओर तीन बार चक्कर लगाते हैं ॥२॥

परि वाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत् ।



दधद्रत्नानि दाशुषे ॥३॥

सर्वज्ञ, अन्नो के स्वामी अग्निदेव याजकों द्वारा दिये गये हवनीय पदार्थों को स्वीकार करते हैं तथा परमार्थ-परायणों को धन-धान्य से परिपूर्ण बनाते हैं ॥३॥

अयं यः सृज्ये पुरो दैववाते समिध्यते ।
द्युमाँ अमित्रदम्भनः ॥४॥

रिपुओं का संहार करने वाले, देदीप्यमान अग्निदेव को देवताओं के द्वारा इच्छित विजय प्राप्त करने के उद्देश्य से सबसे आगे प्रदीप्त किया जाता है ॥४॥

अस्य घा वीर ईवतोऽग्नेरीशीत मर्त्यः ।
तिग्मजम्भस्य मीळ्हुषः ॥५॥

तेजस्वी ज्वालाओं वाले, इच्छित परिणाम वाले तथा गमन करने वाले अग्निदेव की भक्ति करने वाले व्यक्ति पराक्रमी बनकर समस्त धनों के स्वामी बनते हैं ॥५॥

तमर्वन्तं न सानसिमरुषं न दिवः शिशुम् ।
मर्मृज्यन्ते दिवेदिवे ॥६॥



द्रुतगामी अश्वों और द्युलोक पुत्र आदित्य के सदृश प्रकाशमान तथा सबके द्वारा प्रार्थनीय अग्निदेव की याजकगण नित्य प्रति परिचर्या करते हैं ॥६॥

बोधघन्मा हरिभ्यां कुमारः साहदेव्यः ।
अच्छा न हूत उदरम् ॥७॥

जब 'सहदेव' के पुत्र सोमक नामक राजा ने हमें अश्व प्रदान करने का विचार किया, तब हम भली प्रकार उनके समीप पहुँचे। वहाँ से सन्तुष्ट होकर लौटे ॥७॥

उत त्या यजता हरी कुमारात्साहदेव्यात् ।
प्रयता सद्य आ ददे ॥८॥

उन प्रशंसा के योग्य तथा प्रयत्नशील अश्वों को हमने सहदेव के पुत्र 'सोमक' से ग्रहण किया ॥८॥

एष वां देवावश्विना कुमारः साहदेव्यः ।
दीर्घायुरस्तु सोमकः ॥९॥



हे अश्विनीकुमारो ! आपके प्रीति पात्र 'सहदेव' पुत्र 'सोमक' दीर्घ आयुष्य वाले हों ॥९॥

तं युवं देवावश्विना कुमारं साहदेव्यम् ।
दीर्घायुषं कृणोतन ॥१०॥

हे अश्विनीकुमारो ! 'सहदेव' के पुत्र 'सोमक' को आप दोनों लम्बी आयु प्रदान करें ॥१०॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त १६

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्र । छंद – त्रिष्टुप,

आ सत्यो यातु मघवाँ ऋजीषी द्रवन्त्वस्य हरय उप नः ।
तस्मा इदन्धः सुषुमा सुदक्षमिहाभिपित्वं करते गृणानः ॥१॥

व्यवहार कुशल, सत्यनिष्ठ तथा धनवान् इन्द्रदेव हमारे समीप पधारें । दौड़ते हुए उनके अश्व (उन्हें साथ लेकर) हमारे समीप शीघ्र ही पहुँचे । उन इन्द्रदेव के निमित्त हम याजक अन्नरूप सोमरस अभिषुत करते हैं। तृप्त होकर वे हमारी कामनाओं को पूर्ण करें ॥१॥

अव स्य शूराध्वनो नान्तेऽस्मिन्नो अद्य सवने मन्दध्यै ।
शंसात्युक्थमुशनेव वेधाश्चिकितुषे असुर्याय मन्म ॥२॥

हे शूरवीर इन्द्रदेव ! जिस प्रकार लक्ष्य पर पहुँचे हुए अश्वों को मुक्त करते हैं, उसी प्रकार आप हमें मुक्त करें; ताकि हम इस यज्ञ में आपको हर्षित करने के लिए भली-भाँति परिचर्या कर सकें । हे



इन्द्रदेव ! आप सर्वज्ञाता तथा असुरों का संहार करने वाले हैं ।
याजकगण उशना' ऋषि के सदृश उत्तम स्तोत्रों को उच्चारित करते
हैं ॥२॥

कविर्न निण्यं विदधानि साधन्वृषा यत्सेकं विपिपानो अर्चात् ।
दिव इथा जीजनत्सप्त कारूनहा चिच्चक्रुर्वयुना गृणन्तः ॥३॥

जब यज्ञों को सम्पादित करते हुए तथा सोमपान ग्रहण करते हुए वे
इन्द्रदेव पूजे जाते हैं, तब वे द्युलोक से सप्त रश्मियों को उत्पन्न करते
हैं। जैसे विद्वान् गूढ़ अर्थों को जानते हैं, उसी प्रकार कामना की वर्षा
करने वाले इन्द्रदेव समस्त कार्यों को जानते हैं। उनकी रश्मियों की
सहायता से याजकगण अपने कर्मों को सम्पन्न करते हैं ॥३॥

स्वयद्विदि सुदृशीकमर्कैर्महि ज्योती रुरुचुर्यद्भ वस्तोः ।
अन्धा तमांसि दुधिता विचक्षे नृभ्यश्चकार नृतमो अभिष्टौ ॥४॥

जब विस्तृत तथा तेजोयुक्त द्युलोक प्रकाशित होकर, दर्शनीय बनता
है-तब सभी के आवास भी आलोकित होते हैं । जगत् के श्रेष्ठ नायक
सूर्यदेव ने उदित होकर मनुष्यों के देखने के निमित्त सघन तमिस्रा
को विनष्ट कर दिया है ॥४॥

ववक्ष इन्द्रो अमितमृजीष्णुभे आ पप्रौ रोदसी महित्वा ।



अतश्चिदस्य महिमा वि रेच्यभि यो विश्वा भुवना बभूव ॥५॥

अपरिमित महिमा को धारण करने वाले इन्द्रदेव ने समस्त भुवनों पर अपना अधिकार कर लिया है । सोमरस पान करने वाले वे इन्द्रदेव अपनी महिमा के द्वारा द्यावा-पृथिवी दोनों को पूर्ण करते हैं । इसीलिए इनकी महानता की कोई तुलना नहीं की जा सकती ॥५॥

विश्वानि शक्रो नर्याणि विद्वानपो रिरेच सखिभिर्निकामैः ।
अश्मानं चिद्ये बिभिदुर्वचोभिर्ब्रजं गोमन्तमुशिजो वि ववुः ॥६॥

वे इन्द्रदेव मनुष्यों के समस्त कल्याणकारी कार्यों के ज्ञाता हैं । कामना करने वाले सखाभाव युक्त मरुतों के निमित्त उन्होंने जल वृष्टि की । जिन मरुतों ने अपनी ध्वनि के द्वारा मेघों को भी विदीर्ण कर दिया, उन आकांक्षा करने वाले मरुतों ने गौओं (किरणों) के भण्डार खोल दिये ॥६॥

अपो वृत्रं वव्रिवांसं पराहन्प्रावत्ते वज्रं पृथिवी सचेताः ।
प्राणार्णसि समुद्रियाण्यैनोः पतिर्भवञ्छवसा शूर धृष्णो ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! सुरक्षा करने वाले आपके वज्र ने जब पानी को अवरुद्ध करने वाले मेघ को विनष्ट किया, तब पानी बरसने से धरती चैतन्य



हुई । हे रिपुओं के संहारक, पराक्रमी इन्द्रदेव ! आपने अपनी शक्ति से लोकपति होकर आकाश में स्थित जल को प्रेरित किया ॥७॥

अपो यदद्रिं पुरुहूत दर्दराविर्भुवत्सरमा पूर्वं ते ।
स नो नेता वाजमा दर्षि भूरिं गोत्रा रुजन्नङ्गिरोभिर्गृणानः ॥८॥

बहुतों के द्वारा आहूत किये जाने वाले हे इन्द्रदेव ! जब 'सरमा' ने आपके निमित्त गौओं (प्रकाश किरणों) को प्रकट किया, तब आपने जल से परिपूर्ण मेघों को विदीर्ण किया । अंगिरा वंशियों से स्तुत्य होकर आप हमें प्रचुर अन्न प्रदान करें ॥८॥

अच्छा कविं नृमणो गा अभिष्टौ स्वर्षाता मघवन्नाधमानम् ।
ऊतिभिस्तमिषणो द्युम्नहूतौ नि मायावानब्रह्मा दस्युरर्त ॥९॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! मनुष्य आपका सम्मान करते हैं। ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए आप कुत्स' के पास गये थे। उनके द्वारा प्रार्थना करने पर रिपुओं के विप्लव से आपने उन्हें रक्षित किया था। कुटिल याजकों के कार्यों को आपने अपनी बुद्धि से जाना और कुत्स के ऐश्वर्य की कामना करने वाले रिपुओं को संग्राम में नष्ट किया था ॥९॥

आ दस्युघ्ना मनसा याह्यस्तं भुवत्ते कुत्सः सख्ये निकामः ।
स्वे योनौ नि षदतं सरूपा वि वां चिकित्सदतचिद्ध नारी ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! आपने मन में रिपुओं का संहार करने की कामना करके 'कुत्स' के घर में आगमन किया था। कुत्स भी आपके संग मित्रता करने के लिए अत्यधिक लालायित हुए थे। इसके बाद आप दोनों अपने घर में बैठे थे, तब सत्यावलोकन करने वाली 'शची' आप दोनों की एक जैसी आकृति देखकर द्विविधा में पड़ गई थी ॥१०॥

यासि कुत्सेन सरथमवस्युस्तोदो वातस्य हर्योरीशानः ।
ऋज्रा वाजं न गन्धं युयूषन्कविर्यदहन्पार्याय भूषात् ॥११॥

जिस दिन दूरदर्शी कुत्स (कुण्ठाग्रस्त साधक) योग्य अन्न (आहार) की तरह ऋजुता (सरलता) को अपनाकर (संकट से) पार होने के लिए तत्पर होता है, तब उसके रक्षण की कामना से शत्रुहन्ता, वायुवेगवाले अश्वों के स्वामी आप (इन्द्रदेव) कुत्स के साथ एक ही रथ पर आरूढ़ हो जाते हैं ॥११॥

कुत्साय शुष्णमशुषं नि बर्हीः प्रपित्वे अहः कुयवं सहस्रा ।
सद्यो दस्यून्प्र मृण कुत्स्येन प्र सूरश्चक्रं वृहतादभीके ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! 'कुत्स' की सुरक्षा के लिए आपने अत्यन्त बलशाली 'शुष्ण' नामक असुर का संहार किया था। आपने दिवस के पूर्व भाग (पूर्वाह्न) में ही सहस्रों सैनिकों वाले 'कुयव' राक्षस का संहार किया।



अनेकों स्वजनों से घिर कर आपने उसी क्षण अपने वज्र से दस्युओं का भी विनाश किया तथा युद्ध में सूर्य के सदृश तेजस्वी शस्त्रास्त्रों को नष्ट किया ॥१२॥

त्वं पिपुं मृगयं शूशुवांसमृजिष्वने वैदथिनाय रन्धीः ।
पञ्चाशत्कृष्णा नि वपः सहस्रात्कं न पुरो जरिमा वि दर्दः ॥१३॥

हे इन्द्रदेव ! वैदथि के पुत्र ऋजिष्वा' के निमित्त आपने, अत्यन्त शक्तिशाली असुर 'पिपु' तथा 'मृगया' को विनष्ट किया। आपने पचास हजार श्याम वर्ण वाले राक्षसों का संहार किया। जिस प्रकार बुढ़ापा सौन्दर्य को नष्ट कर देता है अथवा पुराने वस्त्रों को फाड़ दिया जाता है, उसी प्रकार आपने रिपुओं के नगरों को नष्ट किया था ॥१३॥

सूर उपाके तन्वं दधानो वि यत्ते चेत्यमृतस्य वर्षः ।
मृगो न हस्ती तविषीमुषाणः सिंहो न भीम आयुधानि बिभ्रत् ॥१४॥

हे अविनाशी इन्द्रदेव ! जब आप सूर्य के समीप अपने देह को धारण करते हैं, तब आपका रूप और अधिक आलोकित होने लगता है ।
हे इन्द्रदेव ! आप शक्तिशाली हाथी के सदृश विकराल रिपुओं की सेनाओं को भस्मसात् । करते हैं । जब आप हथियार धारण करते हैं, तब सिंह की तरह भयंकर होते हैं ॥१४॥



इन्द्रं कामा वसूयन्तो अग्मन्त्स्वर्मीळ्हे न सवने चकानाः ।
श्रवस्यवः शशमानास उक्थैरोको न रण्वा सुदृशीव पुष्टिः ॥१५॥

असुरों द्वारा पैदा किये गये भय को दूर करने की तथा धन की कामना करने वाले याजकगण, युद्ध के समान यज्ञों में देदीप्यमान इन्द्रदेव से अन्न की याचना करते हैं । वे याजकगण स्तोत्रों द्वारा प्रार्थना करते हुए उनके पास गमन करते हैं । वे इन्द्रदेव निवास स्थान के सदृश हर्षदायक और मनोहर हैं तथा श्रेष्ठ धन के समान दर्शनीय हैं ॥१५॥

तमिद्व इन्द्रं सुहवं हुवेम यस्ता चकार नर्या पुरूणि ।
यो मावते जरित्रे गध्यं चिन्मक्षू वाजं भरति स्पार्हाराधाः ॥१६॥

स्पृहणीय ऐश्वर्य वाले जिन इन्द्रदेव ने मनुष्यों के कल्याण के लिए अनेकों ख्यातिपूर्ण कार्य सम्पन्न किये तथा जो हम याजकों के निमित्त ग्रहणीय अन्न तुरन्त प्रदान करते हैं, ऐसे श्रेष्ठ आवाहन योग्य इन्द्रदेव को हम सबकी सहायता के लिए बुलाते हैं ॥१६॥

तिग्मा यदन्तरशनिः पताति कस्मिञ्चिच्छूर मुहुके जनानाम् ।
घोरा यदर्य समृतिर्भवात्यध स्मा नस्तन्वो बोधि गोपाः ॥१७॥



हे शूरवीर इन्द्रदेव ! जब मनुष्यों के किसी भी संग्राम में हम याजकों के ऊपर तीक्ष्ण वज्रपात हो अथवा घमासान युद्ध हो, तब आप हमारे शरीरों के संरक्षक बनें ॥१७॥

भुवोऽविता वामदेवस्य धीनां भुवः सखावृको वाजसातौ ।
त्वामनु प्रमतिमा जगन्मोरुशंसो जरित्रे विश्वध स्याः ॥१८॥

हे इन्द्रदेव ! 'वामदेव' ऋषि द्वारा सम्पन्न किये जा रहे यज्ञ-कृत्य के आप संरक्षक हों। आप कपट रहित होकर संग्राम में हमारे सखा हों । हम श्रेष्ठ ज्ञानी बनकर आपका अनुसरण करें और आप हम स्तोताओं के निमित्त सदैव प्रार्थनीय हों ॥१८॥

एभिर्नृभिरिन्द्र त्वायुभिष्ट्वा मघवद्भिर्मघवन्विश्व आजौ ।
द्यावो न द्युमैरभि सन्तो अर्यः क्षपो मदेम शरदश्च पूर्वैः ॥१९॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! हम समस्त युद्धों में धन से सम्पन्न हों । द्युलोक के सदृश ओजस्वी अपने सहायक मरुतों के साथ होकर आप रिपुओं को परास्त करें । हम अनेक वर्षों तक रात-दिन आपको हर्षित करते रहें ॥१९॥

एवेदिन्द्राय वृषभाय वृष्णे ब्रह्माकर्म भृगवो न रथम् ।
नूचिद्यथा नः सख्या वियोषदसन्न उग्रोऽविता तनूपाः ॥२०॥



जिस प्रकार भृगुवंशियों ने इन्द्रदेव को रथ प्रदान किया था, उसी प्रकार हम शक्तिशाली तथा इच्छाओं की पूर्ति करने वाले इन्द्रदेव के निमित्त स्तोत्र पाठ करते हैं। इस प्रकार हमारी उनको मित्रता परिपक्व हो । वे हमारे शरीर के पोषक तथा संरक्षक हों ॥२०॥

नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो न पीपेः ।
अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः ॥२१॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार सरिताएँ जल प्रदान करती हैं, उसी प्रकार आप स्तुतियों द्वारा प्रशंसित होकर हम याजकों के लिए अन्न प्रदान करें। हे अश्ववान् इन्द्रदेव ! हम आपके निमित्त अभिनव स्तोत्रों को रचते हैं, जिससे हम रथों से युक्त होकर आपके सेवक बने रहें ॥२१॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त १७

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्र । छंद – त्रिष्टुप,

त्वं महौं इन्द्र तुभ्यं ह क्षा अनु क्षत्रं मंहना मन्यत द्यौः ।
त्वं वृत्रं शवसा जघन्वान्सृजः सिन्धूरहिना जग्रसानान् ॥१॥

हे महान् इन्द्रदेव ! आपके क्षात्र-बल का धरती अनुसरण करती है
तथा आपके महत्त्व को महिमावान् द्युलोक स्वीकार करता है ।
आपने अपनी सामर्थ्य से वृत्र का संहार किया तथा 'अहि' द्वारा
अवरुद्ध की गयी सरिताओं को प्रवाहित किया ।१॥

तव त्विषो जनिमन्त्रेजत द्यौ रेजद्भूमिर्भियसा स्वस्य मन्योः ।
ऋघायन्त सुभ्वः पर्वतास आर्दन्ध्रानि सरयन्त आपः ॥२॥

महान् तेजस्विता से सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! आपके पैदा होते ही, आपके
मन्यु से भयभीत होकर आकाश-पृथिवी काँपने लगे तथा बृहत् मेघों



के समूह भयभीत होने लगे । इन मेघों ने जीवों की प्यास को बुझाते हुए मरुस्थल में भी जल को प्रेरित किया (बरसाया) ॥२॥

भिनद्गिरिं शवसा वज्रमिष्णन्नाविष्कृण्वानः सहसान ओजः ।
वधीद्वृत्रं वज्रेण मन्दसानः सरन्नापो जवसा हतवृष्णीः ॥३॥

रिपुओं को परास्त करने वाले इन्द्रदेव ने अपने ओज को प्रकट करके अपनी शक्ति से वज्र को प्रेरित किया और मेघों को विदीर्ण किया। उन्होंने सोमपान से हर्षित होकर अपने वज्र द्वारा वृत्र का संहार किया। वृत्र के नष्ट हो जाने पर जल आवरण (अवरोध) रहित होकर वेग के साथ प्रवाहित होने लगा ॥३॥

सुवीरस्ते जनिता मन्यत द्यौरिन्द्रस्य कर्ता स्वपस्तमो भूत् ।
य ई जजान स्वयं सुवज्रमनपच्युतं सदसो न भूम ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आप प्रशंसनीय श्रेष्ठ वज्र को धारण करने वाले, अपने स्थान से च्युत न होने वाले तथा ऐश्वर्य से सम्पन्न हैं। आपको पैदा करने वाले प्रकाशमान प्रजापति ने स्वयं को श्रेष्ठ सन्तानवान् स्वीकारा। आपको जन्म देने वाले प्रजापति, श्रेष्ठ कर्म करने वाले थे ॥४॥

य एक इच्छ्यावयति प्र भूमा राजा कृष्तीनां पुरुहूत इन्द्रः ।



सत्यमेनमनु विश्वे मदन्ति रातिं देवस्य गृणतो मघोनः ॥५॥

समस्त मनुष्यों के राजा, अनेकों द्वारा आवाहन किये जाने वाले इन्द्रदेव अकेले होकर भी अनेकों रिषुओं को अपने स्थान से च्युत कर देते हैं । समस्त धनवान् मनुष्य उन इन्द्रदेव को आनन्दित करते हैं, जो महान् गुणों से सम्पन्न तथा याजकों को ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं ॥५॥

सत्रा सोमा अभवन्नस्य विश्वे सत्रा मदासो बृहतो मदिष्ठाः ।
सत्राभवो वसुपतिर्वसूनां दत्रे विश्वा अधिथा इन्द्र कृष्टीः ॥६॥

समस्त सोमरस उन इन्द्रदेव के निमित्त है। यह हर्षप्रदायक सोमरस उनको तृप्त करता है । वे समस्त ऐश्वर्यों के स्वामी हैं । हे इन्द्रदेव ! आप समस्त मनुष्यों का पोषण करते हुए उन्हें उत्तम ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥६॥

त्वमध प्रथमं जायमानोऽमे विश्वा अधिथा इन्द्र कृष्टीः ।
त्वं प्रति प्रवत आशयानमहिं वज्रेण मघवन्वि वृश्चः ॥७॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! पैदा होते ही सर्वप्रथम आपने समस्त मनुष्यों को वृत्र के प्रकोप से बचाया। प्रवाहशील जल को अवरुद्ध करके सोने वाले 'अहि' को आपने अपने वज्र से विनष्ट किया ॥७॥



सत्राहणं दाधृषिं तुम्रमिन्द्रं महामपारं वृषभं सुवज्रम् ।
हन्ता यो वृत्रं सनितोत वाजं दाता मघानि मघवा सुराधाः ॥८॥

शत्रु समूह के संहारक, उन्हें भयभीत करने वाले, (पराजित करके) भगा देने वाले, अत्यधिक शक्तियुक्त, श्रेष्ठ वज्रधारक, वृत्रहन्ता, अन्नदायक, धनरक्षक इन्द्रदेव अपने उपासकों को धन प्रदान करने वाले हैं ॥८॥

अयं वृतश्चातयते समीचीर्य आजिषु मघवा शृण्व एकः ।
अयं वाजं भरति यं सनोत्यस्य प्रियासः सख्ये स्याम ॥९॥

जो संग्राम में अकेले ही विजय प्राप्त करने वाले के रूप में विख्यात हैं, ऐसे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ने एकत्रित हुए रिपुओं को विनष्ट कर दिया। वे इन्द्रदेव जिस व्यक्ति को अन्न प्रदान करने की कामना करते हैं, उसे देते ही रहते हैं। उनके साथ हमारी मित्रता प्रीतियुक्त हो ॥९॥

अयं शृण्वे अध जयन्नुत घ्नन्नयमुत प्र कृणुते युधा गाः ।
यदा सत्यं कृणुते मन्युमिन्द्रो विश्वं दृक्कं भयत एजदस्मात् ॥१०॥

वे इन्द्रदेव रिपुओं को युद्ध में जीतकर उनका विनाश करते हुए ख्याति प्राप्त करते हैं। वे शत्रुओं से गौएँ छीनकर लाते हैं। वे इन्द्रदेव



जब सचमुच क्रोध करते हैं, तब समस्त स्थावर-जंगम जगत् उनसे भयभीत होने लगता है ॥१०॥

समिन्द्रो गा अजयत्सं हिरण्या समश्रिया मघवा यो ह पूर्वीः ।
एभिर्नृभिर्नृतमो अस्य शाकै रायो विभक्ता सम्भरश्च वस्वः ॥११॥

जिन्होंने शत्रुओं से युद्ध करके उनके स्वर्ण भण्डार, गौओं, अश्वों तथा उनकी विशाल सेनाओं को जीतकर अपने अधिकार में कर लिया। सभी शक्तिशाली, धनवान् तथा श्रेष्ठ मनुष्यों द्वारा उन इन्द्रदेव की स्तुति की जाती है। वे इन्द्रदेव सभी को अपना ऐश्वर्य वितरित कर देते हैं, फिर भी सभी ऐश्वर्यों से सम्पन्न बने रहते हैं ॥११॥

कियत्स्विदिन्द्रो अध्येति मातुः कियत्पितुर्जनितुर्यो जजान ।
यो अस्य शुष्मं मुहुकैरियर्ति वातो न जूतः स्तनयद्विरभ्रैः ॥१२॥

वे इन्द्रदेव अपने माता-पिता के पास से कितनी शक्ति प्राप्त करते हैं ? जिन्होंने अपने उत्पन्न करने वाले प्रजापति के पास से इस दिखायी पड़ने वाले जगत् को प्रकट किया तथा उन्हीं के पास से इस जगत् को बारम्बार सामर्थ्य प्रदान किया, वे इन्द्रदेव गर्जना करने वाले मेघों द्वारा प्रेरित वायु के समान बुलाये जाते हैं ॥१२॥

क्षियन्तं त्वमक्षियन्तं कृणोतीयर्ति रेणुं मघवा समोहम् ।



विभञ्जनुरशनिमाँ इव द्यौरुत स्तोतारं मघवा वसौ धात् ॥१३॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप निराश्रितों को आश्रय प्रदान करते हैं तथा किये गये पापों को विनष्ट करते हैं। आप द्युलोक के सदृश सुदृढ़ वज्र धारण करने वाले हैं और रिपुओं का संहार करने वाले हैं। आप धनवान् हैं, इसलिए स्तोताओं को भी धन प्रदान करते हैं ॥१३॥

अयं चक्रमिषणत्सूर्यस्य न्येतशं रीरमत्ससृमाणम् ।
आ कृष्ण ई जुहुराणो जिघर्ति त्वचो बुध्रे रजसो अस्य योनौ ॥१४॥

उन इन्द्रदेव ने आदित्य के चक्र को प्रेरित किया और संग्राम के निमित्त गमन करने वाले 'एतश' को लौटाया। कुटिल चाल वाले और काले रंग वाले मेघों ने तेजस्वी जल के मूल स्थान आकाश में विद्यमान इन्द्रदेव को अभिषिक्त किया ॥१४॥

असिक्न्यां यजमानो न होता ॥१५॥

रात्रि के समय याजकगण सोमरस के द्वारा इन्द्रदेव का अभिषेक करते हैं। वे भी रात्रि में ही सभी मनुष्यों को परम ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥१५॥



गव्यन्त इन्द्रं सख्याय विप्रा अश्वयन्तो वृषणं वाजयन्तः ।
जनीयन्तो जनिदामक्षितोतिमा च्यावयामोऽवते न कोशम् ॥१६॥

हम ज्ञानी याजक गौओं, घोड़ों, अत्रों तथा स्त्रियों की कामना करते हैं
। जिस प्रकार पिपासु जल-कुण्ड में से जलपूर्ण पात्र को निकालते हैं,
उसी प्रकार हम भी सृजनात्मक क्षमता प्रदान करने वाले तथा कभी
नष्ट न होने वाले रक्षण-साधनों से सम्पन्न उन इन्द्रदेव को अपनी ओर
बुलाते हैं ॥१६॥

त्राता नो बोधि ददृशान आपिरभिख्याता मर्दिता सोम्यानाम् ।
सखा पिता पितृतमः पितृणां कर्तेमु लोकमुशते वयोधाः ॥१७॥

हे इन्द्रदेव ! आप रक्षक की तरह सबका अवलोकन करते हुए हमारी
सुरक्षा करें । सोम अभिषवकर्ता साधकों के लिए आप हर्षित करने
वाले सखा हैं। प्रजापति की तरह आपकी प्रसिद्धि है। आप पालन
करने वालों में सर्वश्रेष्ठ पालक हैं। आप इस लोक के स्रष्टा हैं और
याजकों के अन्नप्रदाता हैं ॥१७॥

सखीयतामविता बोधि सखा गृणान इन्द्र स्तुवते वयो धाः ।
वयं ह्या ते चकृमा सबाध आभिः शमीभिर्महयन्त इन्द्र ॥१८॥



हे प्रशंसनीय इन्द्रदेव ! हम आपकी मित्रता की कामना करते हैं । आप हमारे संरक्षक और हमारे मित्र हो । आप याजकों के निमित्त अन्न धारण करें । हे इन्द्रदेव ! हम संकटग्रस्त होकर इन स्तोत्रों द्वारा आपकी प्रार्थना करते हुए आपको आहूत करते हैं ॥१८॥

स्तुत इन्द्रो मघवा यद्ध वृत्रा भूरीण्येको अप्रतीनि हन्ति ।
अस्य प्रियो जरिता यस्य शर्मन्नकिर्देवा वारयन्ते न मर्ताः ॥१९॥

जब धनवान् इन्द्रदेव हम मनुष्यों के द्वारा प्रशंसित होते हैं, तब वे पीछे न हटने वाले अनेक रिपुओं को अकेले ही विनष्ट कर देते हैं। उन इन्द्रदेव की शरण में रहने वाले प्रिय याजक को न तो देवता नष्ट कर सकते हैं और न ही मनुष्य नष्ट कर सकते हैं ॥१९॥

एवा न इन्द्रो मघवा विरप्शी करत्सत्या चर्षणीधृदनर्वा ।
त्वं राजा जनुषां धेह्यस्मे अधि श्रवो माहिनं यज्जरित्रे ॥२०॥

अनेक प्रकार के शब्द करने वाले, मनुष्यों के धारणकर्ता, रिपुरहित तथा ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव हमारी सत्य अभिलाषाओं को पूर्ण करने वाले हैं । हे इन्द्रदेव ! आप सम्पूर्ण जन्मधारियों के सम्राट् हैं । स्तुति करने वाले लोग जिस महान् कीर्ति को आप से प्राप्त करते हैं, उस कीर्ति को आप हम मनुष्यों को प्रचुर परिमाण में प्रदान करें ॥२०॥



नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो न पीपेः ।
अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः ॥२१॥

हे इन्द्रदेव ! जिस तरह सरिताओं को जल प्रवाह पूर्ण करते हैं, उसी प्रकार आप प्राचीन ऋषियों द्वारा प्रशंसित होकर तथा हमारे द्वारा स्तुत होकर हम याजकों को अन्न से पूर्ण करें । हे अश्ववान् इन्द्रदेव ! हमने अपनी बुद्धि द्वारा आपके निमित्त स्तोत्र तैयार किया है, अतः हम रथवान् हों और आपकी सेवा करें ॥२१॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त १८

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्र, अदिति, वामदेव। छंद – त्रिष्टुप,

अयं पन्था अनुवित्तः पुराणो यतो देवा उदजायन्त विश्वे ।
अतश्चिदा जनिषीष्ट प्रवृद्धो मा मातरममुया पत्तवे कः ॥१॥

यह पथ सनातन है । समस्त देवता और मनुष्य इसी मार्ग से पैदा हुए हैं तथा प्रगति की है । हे मनुष्यो ! आप अपने उत्पन्न होने की आधाररूपा अपनी माता को विनष्ट न करें ॥१॥

नाहमतो निरया दुर्गहिततिरश्चता पार्श्वान्निर्गमाणि ।
बहूनि मे अकृता कर्त्त्वानि युध्यै त्वेन सं त्वेन पृच्छे ॥२॥

यह पूर्वोक्त मार्ग अत्यन्त दुरूह है; अतः हम इस मार्ग से गमन नहीं करेंगे । हम बगल के मार्ग से निकलेगे । अन्यो के द्वारा करने योग्य अनेकों कार्य हमें करने हैं। हमें एक साथ लड़ना है तथा एक-एक से पूछना है ॥२॥

परायतीं मातरमन्वचष्ट न नानु गान्यनु नू गमानि ।
त्वष्टुर्गृहे अपिबत्सोममिन्द्रः शतधन्यं चम्बोः सुतस्य ॥३॥

मरणासन्न हुई माता को हम देख चुके हैं, अतः हम प्राचीन मार्ग का अनुसरण नहीं करेंगे। तुरन्त ही अन्य मार्ग पर अनुगमन करेंगे। लकड़ी के बर्तन में सोमरस अभिषुत करने वाले त्वष्टा के गृह में इन्द्रदेव ने अनेकों प्रकार से लाभ प्रदान करने वाले सोमरस का पान किया ॥३॥

किं स ऋधक्कृणवद्यं सहस्रं मासो जभार शरदश्च पूर्वीः ।
नही न्वस्य प्रतिमानमस्त्यन्तर्जतिषूत ये जनित्वाः ॥४॥

अदिति ने उन शक्तिशाली इन्द्रदेव का अनेकों वर्षों तथा महीनों तक पालन किया । इसलिए वे इन्द्रदेव विपरीत कार्य क्यों करेंगे? अब तक पैदा हुए तथा पैदा होने वालों में से कोई भी उनकी बराबरी नहीं कर सकता ॥४॥

अवद्यमिव मन्यमाना गुहाकरिन्द्रं माता वीर्येणा न्यूष्टम् ।
अथोदस्थात्स्वयमत्कं वसान आ रोदसी अपृणाज्जायमानः ॥५॥



माता ने गर्भ-गुहा में पैदा होने वाले इन्द्रदेव को समर्थ मानकर शक्तिपूर्वक बाहर निकाला। पैदा होते ही इन्द्रदेव अपने ओज को धारण करके स्वयं उठ खड़े हुए और द्यावा-पृथिवी को अपने तेज से पूर्ण कर दिया ॥५॥

एता अर्षन्त्यललाभवन्तीर्ऋतावरीरिव संक्रोशमानाः ।
एता वि पृच्छ किमिदं भनन्ति कमापो अद्रिं परिधिं रुजन्ति ॥६॥

हर्ष ध्वनि करती हुई जल से पूर्ण ये सरिताएँ कल-कल करती हुई प्रवाहित हो रही हैं। हे वे ! ये सरिताएँ क्या कहती हैं ? इनसे पूछे। क्या ये इन्द्रदेव का गुणगान करती हैं? उन इन्द्रदेव के आयुध जल को आवृत करने वाले मेघों को विदीर्ण करते हैं ॥६॥

किमु ष्विदस्मै निविदो भनन्तेन्द्रस्यावद्यं दिधिषन्त आपः ।
ममैतान्पुत्रो महता वधेन वृत्रं जघन्वाँ असृजद्वि सिन्धून् ॥७॥

इन्द्रदेव द्वारा वृत्र का संहार करने पर लगे ब्रह्महत्या के पाप के विषय में वेद-वाणी क्या निर्देश देती है ? उनके पाप कर्म को पानी ने फेन रूप में ग्रहण किया। मेरे पुत्र इन्द्रदेव ने अपने हथियार वज्र से वृत्र का संहार किया और इन सरिताओं को प्रवाहित किया ॥७॥

ममच्चन त्वा युवतिः परास ममच्चन त्वा कुषवा जगार ।



ममच्चिदापः शिशवे ममृज्युर्ममच्चिदिन्द्रः सहसोदतिष्ठत् ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी माता अदिति ने हर्षित होकर, आपको उत्पन्न किया। एक बार 'कुषवा' नाम वाली राक्षसी ने आपको निगलने का प्रयास किया था। सूतिका गृह में आप राक्षसी का वध करने के लिए तैयार हो गये थे। जब आप बालक थे, तब जल ने आपको हर्षित किया था। उसके बाद आप अत्यधिक सामर्थवान् होकर उठ खड़े हुए ॥८॥

ममच्चन ते मघवन्व्यंसो निविविध्वाँ अप हनू जघान ।
अथा निविद्ध उत्तरो बभूवाञ्छिरो दासस्य सं पिणग्वधेन ॥९॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! 'व्यंस' नामक राक्षस ने मदयुक्त होकर आपकी ओड़ी पर प्रहार किया। इसके बाद अत्यधिक बलशाली होकर आपने उस राक्षस के सिर को वज्र से विदीर्ण कर दिया ॥९॥

गृष्टिः ससूव स्थविरं तवागामनाधृष्यं वृषभं तुम्रमिन्द्रम् ।
अरीव्हं वत्सं चरथाय माता स्वयं गातुं तन्व इच्छमानम् ॥१०॥

जैसे गौ बछड़े को पैदा करती हैं, उसी प्रकार अदिति माता अपनी इच्छानुसार विचरण करने के लिए इन्द्रदेव को उत्पन्न करती हैं। वे इन्द्रदेव उम्र से प्रौढ़, अत्यन्त शक्तिशाली, रिपुओं से अजेय, प्रेरक, न



मारे जाने वाले तथा स्वयं गमन के लिए शरीर की अभिलाषा करने वाले हैं ॥१०॥

उत माता महिषमन्ववेनदमी त्वा जहति पुत्र देवाः ।
अथाब्रवीद्वृत्रमिन्द्रो हनिष्यन्त्सखे विष्णो वितरं वि क्रमस्व ॥११॥

माता अदिति ने अपने महिमावान् वत्स इन्द्र से निवेदन किया कि ये देवगण आपका परित्याग कर रहे हैं। इसके बाद वृत्र का संहार करने की अभिलाषा करते हुए इन्द्रदेव ने विष्णु से कहा कि हे सखा विष्णु ! आप श्रेष्ठ पराक्रमी हों ॥११॥

कस्ते मातरं विधवामचक्रच्छयुं कस्त्वामजिघांसच्चरन्तम् ।
कस्ते देवो अधि मार्षीक आसीद्यत्प्राक्षिणाः पितरं पादगृह्य ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! जब आपके पिता के चरण को पकड़कर फेंका गया, तब आपकी माता अदिति को किस देव ने विधवा किया ? जिस समय आप शयन कर रहे थे तथा गमन कर रहे थे, उस समय आपको किस देव ने मारने की अभिलाषा की थी ? आपकी अपेक्षा और कौन देवता अधिक सुख प्रदान करते हैं? ॥१२॥

अवर्त्या शुन आन्त्राणि पेचे न देवेषु विविदे मर्दितारम् ।
अपश्यं जायाममहीयमानामधा मे श्येनो मध्वा जभार ॥१३॥



हमने क्षुधा से पीड़ित होकर कुत्ते की अभक्षणीय अंतड़ियों को भी पकाया । हमने देवताओं में इन्द्रदेव के अलावा किसी दूसरे देवता को सुख प्रदान करने वाला नहीं पाया । जब हमने अपनी पत्नी को अपमानित होते हुए पाया, तब वे इन्द्रदेव ही हमारे लिए मधुर आहार लाये ॥१३॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त १९

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्र । छंद – त्रिष्टुप,

एवा त्वामिन्द्र वज्रिन्नत्र विश्वे देवासः सुहवास ऊमाः ।
महामुभे रोदसी वृद्धमृष्वं निरेकमिद्वृणते वृत्रहत्ये ॥१॥

वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! सुरक्षा करने वाले समस्त देवगण
तथा द्यावा-पृथिवी वृत्र का संहार करने के लिए आपका आवाहन
करते हैं। आप प्रार्थनीय, वृद्ध, महान् तथा दर्शनीय हैं ॥१॥

अवासृजन्त जिब्रयो न देवा भुवः सम्राळिन्द्र सत्ययोनिः ।
अहन्नहिं परिशयानमर्णः प्र वर्तनीररदो विश्वधेनाः ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार वृद्ध पिता तरुण पुत्र को प्रेरणा देते हैं, उसी
प्रकार समस्त देवता रिपुओं का विनाश करने के लिए आपको प्रेरणा
देते हैं । हे इन्द्रदेव ! आप सत्य के आश्रय स्थान हैं। आप सम्पूर्ण
लोको के अधिष्ठाता हैं। जल के चारों ओर शयन करने वाले 'अहि'



का विनाश करके, सबको हर्षित करने वाली सरिताओं को अपने ही प्रेरित किया है ॥२॥

अतृष्णुवन्तं वियतमबुध्यमबुध्यमानं सुषुपाणमिन्द्र ।
सप्त प्रति प्रवत आशयानमहिं वज्रेण वि रिणा अपर्वन् ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आपने अतृप्त इच्छाओं से युक्त, शिथिल अंग वाले, अज्ञानी, शयन करने की कामना करने वाले, सप्त सरिताओं को आवृत करने वाले तथा अंतरिक्ष में निवास करने वाले वृत्र का वज्र द्वारा संहार किया ॥३॥

अक्षोदयच्छवसा क्षाम बुध्नं वार्ष वातस्तविषीभिरिन्द्रः ।
दृह्णान्यौभ्नादुशमान ओजोऽवाभिनत्कुकुभः पर्वतानाम् ॥४॥

जैसे वायुदेव अपनी शक्ति द्वारा पानी को हिलाते हैं, उसी प्रकार इन्होंने अपनी शक्ति द्वारा द्युलोक तथा भूलोक को कैपा दिया । बलाकांक्षी इन्द्रदेव ने अत्यन्त शक्तिशाली रिपुओं का विनाश किया तथा पर्वतों (मेघों) के पंखों को छिन्न-भिन्न कर दिया ॥४॥

अभि प्र दद्रुर्जनयो न गर्भं रथा इव प्र ययुः साकमद्रयः ।
अतर्पयो विसृत उब्ज ऊर्मिन्त्वं वृताँ अरिणा इन्द्र सिन्धून् ॥५॥



हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार माताएँ अपने पुत्र के समीप जाती हैं, उसी प्रकार मरुद्गण आपके समीप जाते हैं । जिस प्रकार संग्राम में रथ साथ गमन करते हैं, उसी प्रकार आयुध आपके साथ गमन करते हैं। आपने मेघों को विदीर्ण करके, नदियों को तुष्ट किया तथा अवरुद्ध की हुई नदियों को प्रवाहित किया ॥५॥

त्वं महीमवनिं विश्वधेनां तुर्वीतये वय्याय क्षरन्तीम् ।
अरमयो नमसैजदर्णः सुतरणाँ अकृणोरिन्द्र सिन्धून् ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! राजा 'तुर्वीत' तथा 'वय्य' के लिए आपने पृथ्वी को, तुष्ट करने वाली, धान्य प्रदान करने वाली तथा अन्न-जल से समृद्ध बनाया । हे इन्द्रदेव ! आपने सरिताओं को सरलतापूर्वक पार करने योग्य बनाया ॥६॥

प्राग्युवो नभन्वो न वक्का ध्वस्त्रा अपिन्वद्युवतीऋतज्ञाः ।
धन्वान्यज्राँ अपृणक्तृषाणाँ अधोगिन्द्रः स्तर्यो दंसुपत्नीः ॥७॥

उन इन्द्रदेव ने रिपु सहायक सेनाओं के सदृश किनारों को नष्ट करने वाली, पानी से भरी हुई तथा अन्न पैदा करने वाली सरिताओं को परिपूर्ण किया। उन्होंने मरुस्थलों तथा प्यासे व्यक्तियों को तृप्त किया और दस्युओं द्वारा नियन्त्रित गौओं को दुहा ॥७॥



पूर्वीरुषसः शरदश्च गूर्ता वृत्रं जघन्वाँ असृजद्वि सिन्धून् ।
परिष्ठिता अतृणद्वद्धधानाः सीरा इन्द्रः स्रवितवे पृथिव्या ॥८॥

इन्द्रदेव ने घने अन्धकार में आवृत उषाओं को एवं वर्षों (१२महीनों के समुच्चय) को वृत्रासुर का वध करके विमुक्त किया। उन्होंने मेघों को विदीर्ण कर वृत्र द्वारा अवरुद्ध नदियों को प्रवाहित कर पृथ्वी को तृप्त किया ॥८॥

वम्प्रीभिः पुत्रमग्नवो अदानं निवेशनाद्धरिव आ जभर्थ ।
व्यन्थो अख्यदहिमाददानो निर्भूदुखच्छित्समरन्त पर्व ॥९॥

हे अश्ववान् इन्द्रदेव ! आपने दीमकों द्वारा भक्ष्यमान 'अमु' के पुत्र को उनके स्थान (बिल) से बाहर निकाला। बाहर निकाले जाते समय अन्धे 'अ'-पुत्र ने अहि (सर्प) को भली प्रकार देखा। उसके बाद चींटियों द्वारा काटे गये अंगों को आपने (इन्द्रदेव ने) संयुक्त किया (जोड़ा) ॥९॥

प्र ते पूर्वाणि करणानि विप्राविद्धाँ आह विदुषे करांसि ।
यथायथा वृष्यानि स्वगूर्तापांसि राजन्नर्याविवेषीः ॥१०॥

तेजस् सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! आप सर्वज्ञाता तथा स्वयं प्रशंसित हैं। आपने मनुष्यों के लिए कल्याणकारी तथा पराक्रम से सम्पन्न कर्मों



को जिस प्रकार पूर्ण किया, उन समस्त ज्ञानयुक्त कर्मों के ज्ञाता हम 'वामदेव' ऋषि उन सबका वर्णन करते हैं ॥१०॥

नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो न पीपेः ।
अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! आप प्राचीन ऋषियों द्वारा प्रशंसित होकर तथा हमारे द्वारा स्तुत होकर हमें सरिताओं के सदृश अन्न से पूर्ण करें । हे अश्ववान् इन्द्रदेव ! हम अपनी मेधा द्वारा आपके लिए अभिनव स्तोत्रों को रचते हैं, जिससे हम रथों तथा दासों से सम्पन्न हों ॥११॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त २०

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्र । छंद – त्रिष्टुप,

आ न इन्द्रो दूरादा न आसादभिष्टिकृदवसे यासदुग्रः ।
ओजिष्ठेभिर्नृपतिर्वज्रबाहुः संगे समत्सु तुर्वणिः पृतन्यून् ॥१॥

अभीष्ट को पूर्ण करने वाले, अत्यन्त तेजस्वी, बलों से युक्त, मनुष्यों के पालक, वज्रधारी, अनेक छोटे-बड़े युद्धों में शत्रुओं का मर्दन करने वाले, इन्द्रदेव हमारी रक्षा के निमित्त दूरस्थ देश से आयें और यदि निकट हों, तो वहाँ से भी आयें ॥१॥

आ न इन्द्रो हरिभिर्यात्वच्छार्वाचीनोऽवसे राधसे च ।
तिष्ठाति वज्री मघवा विरप्शीमं यज्ञमनु नो वाजसातौ ॥२॥

महान् ऐश्वर्यवान् वज्रधारी इन्द्रदेव हमारी रक्षा के निमित्त और धन देने के निमित्त हमारे लिये अनुकूल होकर हरिनामक अश्वों से भली



प्रकार पधारे । हमारे इस यज्ञ में अपने उपयुक्त हविष्यान्न के भाग को ग्रहण करने के लिए यहाँ (यज्ञशाला में) विराजमान हों ॥२॥

इमं यज्ञं त्वमस्माकमिन्द्र पुरो दधत्सनिष्यसि क्रतुं नः ।
श्वघ्नीव वज्रिन्त्सनये धनानां त्वया वयमर्य आजिं जयेम ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! हम लोगों का मित्र की भाँति हित चाहते हुए, आप हमारे द्वारा किये जाने वाले यज्ञों को ग्रहण करें । वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार शिकारी हरिण का शिकार करता है, उसी प्रकार हम आपकी सहायता से ऐश्वर्य लाभ के लिए किये जा रहे युद्धों में विजय प्राप्त करें ॥३॥

उशन्तु षु णः सुमना उपाके सोमस्य नु सुषुतस्य स्वधावः ।
पा इन्द्र प्रतिभृतस्य मध्वः समन्धसा ममदः पृष्ठयेन ॥४॥

हे अन्नवान् इन्द्रदेव ! आप हर्षित मन से हमारे समीप पधारे तथा हमारे द्वारा अभिषुत मधुर सोमरस का पान करें । हमारे पृष्ठ भाग में विद्यमान अन्न रूप सोमरस का पान करके हर्षित हों ॥४॥

वि यो ररप्श ऋषिभिर्नविभिर्वृक्षो न पक्वः सृण्यो न जेता ।
मर्यो न योषामभि मन्यमानोऽच्छा विवक्त्रि पुरुहूतमिन्द्रम् ॥५॥



जो इन्द्रदेव फल वाले वृक्ष के समान तथा आयुध संचालन में कुशल योद्धा के समान नवीन ऋषियों द्वारा अनेक प्रकार से प्रशंसित होते हैं, उन बहुतों द्वारा आहूत इन्द्रदेव की हम वैसे ही प्रार्थना करते हैं, जैसे मनुष्य अपनी पत्नी की प्रशंसा करता है ॥५॥

गिरिर्न यः स्वतवाँ ऋष्व इन्द्रः सनादेव सहसे जात उग्रः ।
आदर्ता वज्रं स्थविरं न भीम उद्रेव कोशं वसुना न्यूष्टम् ॥६॥

जो महान् तथा पराक्रमी इन्द्रदेव पर्वत के सदृश बलशाली हैं। वे रिपुओं को विजित करने के लिए पुरातन काल से ही पैदा हुए हैं तथा जल से पूर्ण कलश के सदृश तेज से युक्त विशाल वज्र को धारण करते हैं ॥६॥

न यस्य वर्ता जनुषा न्वस्ति न राधस आमरीता मघस्य ।
उद्धावृषाणस्तविषीव उग्रास्मभ्यं दद्धि पुरुहूत रायः ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आपके पैदा होने मात्र से ही कोई विनाशक नहीं रहा तथा आपके द्वारा प्रदान किये गये ऐश्वर्य का भी कोई विनाशक नहीं रहा। हे शक्तिशाली, पराक्रमी तथा बहुतों द्वारा आहूत इन्द्रदेव ! आप अत्यधिक सामर्थ्यवान् हैं। आप हमें ऐश्वर्य प्रदान करें ॥७॥

ईक्षे रायः क्षयस्य चर्षणीनामुत व्रजमपवर्तासि गोनाम् ।



शिक्षानरः समिथेषु प्रहावान्वस्वो राशिमभिनेतासि भूरिम् ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आप मनुष्यों के ऐश्वर्य तथा घर पर नियंत्रण करने वाले हैं और गौओं के गोष्ठ को खोलने वाले हैं। आप ज्ञान के द्वारा मनुष्य को ऊँचा उठाने वाले तथा संग्राम में रिपुओं पर प्रहार करने वाले हैं। आप प्रचुर धन-सम्पदा को प्राप्त कराने वाले हैं ॥८॥

कया तच्छृण्वे शच्या शचिष्ठो यया कृणोति मुहु का चिट्ष्वः ।
पुरु दाशुषे विचयिष्ठो अंहोऽथा दधाति द्रविणं जरित्रे ॥९॥

शक्तिशाली तथा महान् इन्द्रदेव किस सामर्थ्य के द्वारा विख्यात हैं? वे जिसके द्वारा बारम्बार कर्म करते हैं, वह कौन सी सामर्थ्य है? वे इन्द्रदेव दानदाता के पापों को नष्ट करते हैं तथा याजकों को ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥९॥

मा नो मर्धीरा भरा दद्धि तन्नः प्र दाशुषे दातवे भूरि यत्ते ।
नव्ये देष्णे शस्ते अस्मिन्त उक्थे प्र ब्रवाम वयमिन्द्र स्तुवन्तः ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! आप हम मनुष्यों का वध न करें; बल्कि हमारा पोषण करें । हे इन्द्रदेव ! आपका जो प्रचुर धन हविप्रदाता को प्रदान करने के लिए है, उस धन को हमें प्रदान करें । हम आपका स्तवन करते



हैं । इस अभिनव, दान देने योग्य, अनुशासित यज्ञ में हम आपका विशेष रूप से गुणगान करते हैं ॥१०॥

नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो न पीपेः ।
अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! आप प्राचीन ऋषियों द्वारा प्रशंसित होकर तथा हमारे द्वारा स्तुत होकर, हमें सरिताओं के सदृश अन्नो से परिपूर्ण करें । हे अश्ववान् इन्द्रदेव ! हम अपनी मेधा के द्वारा आपके लिए अभिनव स्तोत्रों को रचते हैं, जिससे हम रथों तथा दासों (सेवक) से सम्पन्न हों ॥११॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त २१

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्र । छंद – त्रिष्टुप्,

आ यात्विन्द्रोऽवस उप न इह स्तुतः सधमादस्तु शूरः ।
वावृधानस्तविषीर्यस्य पूर्वीर्द्यौर्न क्षत्रमभिभूति पुष्यात् ॥१॥

वे इन्द्रदेव द्युलोक की तरह तेजस् सम्पन्न हैं। उनके प्रभूत बल है ।
वे हमारी सुरक्षा के लिए पधारें । स्तुतियों से सन्तुष्ट होकर इस यज्ञ में
हमें हर्ष प्रदान करें तथा रिपुओं को पराजित करने वाले बल को पुष्ट
करें ॥१॥

तस्येदिह स्तवथ वृष्यानि तुविद्युम्नस्य तुविराधसो नृन् ।
यस्य क्रतुर्विदथ्यो न सम्राट् साहान्तरुत्रो अभ्यस्ति कृष्टीः ॥२॥

जो इन्द्रदेव शासक के समान रिपुओं को पराजित तथा उनका
विनाश करने वाले हैं, उनकी कुशलता और सामर्थ्य मनुष्यों पर



नियन्त्रण करती है । हे याजको ऐसे ओजस्वी और प्रचुर ऐश्वर्य वाले देव की आप प्रार्थना करें ॥२॥

आ यात्विन्द्रो दिव आ पृथिव्या मक्षू समुद्रादुत वा पुरीषात् ।
स्वर्णरादवसे नो मरुत्वान्परावतो वा सदनादृतस्य ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आप सभी मरुद्गणों के साथ दिव्यलोक से, भूलोक से, अन्तरिक्ष लोक से, जल से, सूर्यलोक से, दूर प्रदेश से तथा यज्ञस्थल से हमारी सुरक्षा के लिए पधारें ॥३॥

स्थूरस्य रायो बृहतो य ईशे तमु ष्टवाम विदथेष्विन्द्रम् ।
यो वायुना जयति गोमतीषु प्र धृष्णुया नयति वस्यो अच्छ ॥४॥

जो इन्द्रदेव समस्त महान् ऐश्वर्यों के अधिपति हैं, जो प्राणरूपी शक्ति के सहयोग से गौओं की प्राप्ति के निमित्त संग्राम में शत्रु की सेनाओं पर विजय प्राप्त करते हैं। जो याजकों को श्रेष्ठ ऐश्वर्य प्रदान करते हैं, उन इन्द्रदेव की हम इस यज्ञमण्डप में स्तुति करते हैं ॥४॥

उप यो नमो नमसि स्तभायन्निर्यति वाचं जनयन्यजध्वै ।
ऋञ्जसानः पुरुवार उक्थैरेन्द्रं कृण्वीत सदनेषु होता ॥५॥

जो इन्द्रदेव समस्त लोकों को आश्रय प्रदान करते हैं और यज्ञ करने वाले याजकों के निमित्त गर्जनापूर्वक जल बरसाते-अन्न उपलब्ध कराते हैं । जो स्तोत्रों द्वारा वंदनीय हैं तथा कर्मों को पूर्ण करने वाले हैं; उन इन्द्रदेव को याजकगण यज्ञों में हर्षित करते हैं ॥५॥

धिषा यदि धिषण्यन्तः सरण्यान्त्सदन्तो अद्रिमौशिजस्य गोहे ।
आ दुरोषाः पास्त्यस्य होता यो नो महान्त्संवरणेषु वह्निः ॥६॥

उशिक् वंशज के आवास पर स्तोतागण स्तुति करते हुए जब सोम कूटने के लिए तत्पर होते हैं, तब वे इन्द्रदेव आगमन करते हैं। वे संग्राम में हम मनुष्यों की सहायता करने वाले हैं। वे याजकों द्वारा आयोजित यज्ञ के सम्पादक हैं। उनका क्रोध अत्यन्त भयंकर है ॥६॥

सत्रा यदीं भार्वरस्य वृष्णः सिषक्ति शुष्मः स्तुवते भराय ।
गुहा यदीमौशिजस्य गोहे प्र यद्धिये प्रायसे मदाय ॥७॥

जगत् का पालन-पोषण करने वाले प्रजापति के पुत्र तथा अभीष्ट की वर्षा करने वाले इन्द्रदेव की सामर्थ्य स्तुति करने वाले याजकों की सुरक्षा करती है । वह सामर्थ्य याजकों का पोषण करने के लिए उनके गुफा रूप हृदय में प्रकट होती है । वह सामर्थ्य याजकों के अंतरंग तथा कर्म में विद्यमान रहती है। उनके हर्ष तथा कामनाओं की प्राप्ति के लिए पैदा होकर उनका सदैव पालन करती है ॥७॥



वि यद्वरांसि पर्वतस्य वृण्वे पयोभिर्जिन्वे अपां जवांसि ।
विदद्वौरस्य गवयस्य गोहे यदी वाजाय सुध्यो वहन्ति ॥८॥

इन्द्रदेव ने मेघों को आवरणरहित किया और सरिताओं के प्रवाह को जल से परिपूर्ण किया, उन शक्तिशाली इन्द्रदेव के लिए मेधावी यजमान जब यज्ञमण्डप पर सोमरस तैयार करते हैं, तब वे याजकों को गौ आदि धन-धान्य प्रदान करते हैं ॥८॥

भद्रा ते हस्ता सुकृतोत पाणी प्रयन्तारा स्तुवते राध इन्द्र ।
का ते निषत्तिः किमु नो ममत्सि किं नोदुदु हर्षसे दातवा उ ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! आपके हितकारी दोनों हाथ श्रेष्ठ कर्म करने वाले हैं तथा याजक को ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं । हे इन्द्रदेव ! आपका निवास स्थान कहाँ है ? आप हमें हर्षित क्यों नहीं करते ? हमें ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए आप शीघ्र ही प्रसन्न क्यों नहीं होते ? ॥९॥

एवा वस्व इन्द्रः सत्यः सम्राड्भुन्ता वृत्रं वरिवः पूरवे कः ।
पुरुष्तुत क्रत्वा नः शग्धि रायो भक्षीय तेऽवसो दैव्यस्य ॥१०॥

इस प्रकार प्रशंसित होकर सत्यनिष्ठ, धन के स्वामी तथा वृत्र को मारने वाले, इन्द्रदेव याजकों को ऐश्वर्य प्रदान करते हैं। है बहुप्रशंसित



इन्द्रदेव ! हम मनुष्यों की प्रार्थनाओं से सन्तुष्ट होकर आप हमें धन-
धान्य प्रदान करें, जिससे हम श्रेष्ठ ऐश्वर्य का सेवन कर सकें ॥१०॥

नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो न पीपेः ।
अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! आप प्राचीन ऋषियों द्वारा स्तुत होकर तथा हमारे द्वारा
प्रशंसित होकर हमें सरिताओं के सदृश अन्नों से परिपूर्ण करें । हे
अश्ववान् इन्द्रदेव ! हम अपनी बुद्धि द्वारा आपके लिए अभिनव स्तोत्रों
का गान करते हैं, जिससे हम रथों तथा दासों से सम्पन्न हों ॥११॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त २२

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्र । छंद – त्रिष्टुप,

यन्न इन्द्रो जुजुषे यच्च वष्टि तन्नो महान्करति शुष्या चित् ।
ब्रह्म स्तोमं मघवा सोममुक्त्वा यो अश्मानं शवसा बिभ्रदेति ॥१॥

महाबलशाली इन्द्रदेव हम मनुष्यों के हविष्यान्न का सेवन करते हैं।
वे अपने वज्र को धारण करते हुए शक्ति के साथ पधारते हैं। वे
आहुति, स्तुति, सोमरस तथा स्तोत्रों को स्वीकार करते हैं ॥१॥

वृषा वृषन्धिं चतुरश्रिमस्यन्नुग्रो बाहुभ्यां नृतमः शचीवान् ।
श्रिये परुष्णीमुषमाण ऊर्णा यस्याः पर्वाणि सख्याय विव्ये ॥२॥

कामनाओं की वर्षा करने वाले इन्द्रदेव अपनी भुजाओं द्वारा
वर्षणकारी चार धाराओं वाले वज्र को रिपुओं के ऊपर फेंकते हैं । वे
अत्यन्त पराक्रमी, श्रेष्ठ नायक तथा कर्मवान् होकर परुष्णी नदी को



परिपूर्ण करते हैं। उन्होंने 'परुष्णी' नदी के विभिन्न प्रदेशों को मित्रता के लिए आवृत किया था ॥२॥

यो देवो देवतमो जायमानो महो वाजेभिर्महद्भिश्च शुष्मैः ।
दधानो वज्रं बाह्वोरुशन्तं द्याममेन रेजयत्प्र भूम ॥३॥

जो ओजस्वी, महान् इन्द्रदेव पैदा होते ही विशाल अन्न तथा बृहत् बल से सम्पन्न हुए थे; वे अपनी दोनों भुजाओं में सुन्दर वज्र धारण करके अपनी शक्ति द्वारा द्युलोक तथा भूलोक को प्रकम्पित करते थे ॥३॥

विश्वा रोधांसि प्रवतश्च पूर्वीर्द्यौर्ऋष्वाज्जनिमत्रेजत क्षाः ।
आ मातरा भरति शुष्म्या गोर्नृवत्परिज्मन्नोनुवन्त वाताः ॥४॥

उन महान् इन्द्रदेव के पैदा होते हीं समस्त पर्वत, जल से पूर्ण नदियाँ, धुलोक तथा पृथ्वी लोक कम्पित होने लगे। वे बलशाली इन्द्रदेव सूर्य की माताओं द्यावा-पृथिवी को धारण करते हैं। उनके द्वारा प्रेरणा पाकर वायुदेव मनुष्य के सदृश ध्वनि करते हैं ॥४॥

ता तू त इन्द्र महतो महानि विश्वेष्वित्सवनेषु प्रवाच्या ।
यच्छूर धृष्णो धृषता दधृष्वानहिं वज्रेण शवसाविवेषीः ॥५॥



हे शूरवीर तथा रिपुओं को दबाने वाले इन्द्रदेव ! आपने समस्त भुवनों को धारण करके रिपुओं को परास्त करने वाले वज्र द्वारा शक्तिपूर्वक 'अहि' का विनाश किया था । है इन्द्रदेव ! आप महिमावान् हैं और आपके कर्म भी महिमावान् हैं। आप सम्पूर्ण सवनों में प्रार्थना करने योग्य हैं ॥५॥

ता तू ते सत्या तुविनुम्ण विश्वा प्र धेनवः सिंस्रते वृष्ण ऊध्रः ।
अधा ह त्वद्वृषमणो भियानाः प्र सिन्धवो जवसा चक्रमन्त ॥६॥

हे बलवान् इन्द्रदेव ! आपके वे समस्त कर्म निश्चित रूप से सत्य हैं । हे इन्द्रदेव! आप अभिलाषाओं की वर्षा करने वाले हैं। आपके डर से गौएँ अपने थनों से दूध टपकाती हैं । हे श्रेष्ठ मनोबल वाले इन्द्रदेव ! आपके भय से सरिताएँ वेग के साथ प्रवाहित होती हैं ॥६॥

अत्राह ते हरिवस्ता उ देवीरवोभिरिन्द्र स्तवन्त स्वसारः ।
यत्सीमनु प्र मुचो बद्धधाना दीर्घामनु प्रसितिं स्यन्दयध्वै ॥७॥

जब आपने वृत्र द्वारा अवरुद्ध की हुई विशाल सरिताओं को प्रवाहित होने के निमित्त मुक्त किया, तब हे अश्ववान् इन्द्रदेव ! अवरुद्ध की हुई सरिताओं ने आपके द्वारा संरक्षित होने के लिए आपकी प्रार्थना की ॥७॥



पिपीळे अंशुर्मद्यो न सिन्धुरा त्वा शमी शशमानस्य शक्तिः ।
अस्मद्यक्छुशुचानस्य यम्या आशुर्न रश्मिं तुव्योजसं गोः ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आपके निमित्त, हर्षप्रदायक सोमरस पीसकर, उसमें जल मिलाकर तैयार कर दिया गया है । जिस प्रकार सारथी द्रुतगामी अश्वों की लगाम को सँभालते हैं, उसी प्रकार बलशाली सोमरस, तेजस् सम्पन्न तथा प्रार्थना के योग्य इन्द्रदेव को हमारी ओर ले आएँ ॥८॥

अस्मे वर्षिष्ठा कृणुहि ज्येष्ठा नृम्णानि सत्रा सहुरे सहांसि ।
अस्मभ्यं वृत्रा सुहनानि रन्धि जहि वधर्वनुषो मर्त्यस्य ॥९॥

हे सहिष्णु इन्द्रदेव ! आप हमारे निमित्त रिपुओं को पराजित करने वाला, महान् तथा प्रशंसनीय पुरुषार्थ करें । विनाश करने योग्य रिपुओं को हमारे अधीन करें तथा हिंसा करने वाले व्यक्तियों के आयुधों को विनष्ट करें ॥९॥

अस्माकमित्सु शृणुहि त्वमिन्द्रास्मभ्यं चित्राँ उप माहि वाजान् ।
अस्मभ्यं विश्वा इषणः पुरंधीरस्माकं सु मघवन्बोधि गोदाः ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! आप हम मनुष्यों की प्रार्थनाओं को सुने तथा अनेक प्रकार के अन्न प्रदान करें। आप हमारे निमित्त सम्पूर्ण ज्ञान को प्रेरित



करें तथा हमें ज्ञान सम्पन्न करें । हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप हमारे लिए गौओं को प्रदान करने वाले हों ॥१०॥

नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो न पीपेः ।
अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! आप प्राचीन ऋषियों द्वारा स्तुत होकर तथा हमारे द्वारा प्रशंसित होकर हमें नदियों के सदृश अन्न से परिपूर्ण करें । हे अश्ववान् इन्द्रदेव ! हम अपनी बुद्धि द्वारा आपके लिए अभिनव स्तोत्रों का गान करते हैं, जिससे हम रथों तथा दासों से सम्पन्न हों ॥११॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त २३

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्र, ८-१० ऋतं । छंद – त्रिष्टुप,

कथा महामवृधत्कस्य होतुर्यज्ञं जुषाणो अभि सोममूधः ।
पिबन्नुशानो जुषमाणो अन्धो ववक्ष ऋष्वः शुचते धनाय ॥१॥

हम मनुष्यों द्वारा की गई प्रार्थनाएँ उन महान् इन्द्रदेव को कैसे संवर्धित करेंगी ? वे किस यज्ञ सम्पादक के यज्ञ में प्रेमपूर्वक पधारेंगे? वे महान् इन्द्रदेव सोमपान करते हुए तथा अभिलाषापूर्वक अन्न ग्रहण करते हुए किस याजक को प्रदान करने के लिए तेजस्वी धन धारण करते हैं? ॥१॥

को अस्य वीरः सधमादमाप समानंश सुमतिभिः को अस्य ।
कदस्य चित्रं चिकिते कदूती वृधे भुवच्छशमानस्य यज्योः ॥२॥

कौन वीर उन इन्द्रदेव के साथ सोम पान करता है? कौन व्यक्ति उनकी श्रेष्ठ बुद्धि से सम्पन्न होता है ? उनके अद्भुत धन कब बाँटे



जायेंगे ? वे इन्द्रदेव स्तुति करने वाले याजकों को संवर्द्धित करने के लिए रक्षण साधनों से कब सम्पन्न होंगे ? ॥२॥

कथा शृणोति हूयमानमिन्द्रः कथा शृण्वन्नवसामस्य वेद ।
का अस्य पूर्वीरुपमातयो ह कथैनमाहुः पपुरिं जरित्रे ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आहूत करने वालों की स्तुतियों का आप कैसे श्रवण करते हैं? स्तुतियों का श्रवण करके स्तोताओं के मार्ग को आप कैसे जानते हैं? आपके प्राचीन दान कौन से हैं? वे दान इन्द्रदेव को याजकों की इच्छाओं की पूर्ति करने वाले क्यों कहते हैं ? ॥३॥

कथा सबाधः शशमानो अस्य नशदभि द्रविणं दीध्यानः ।
देवो भुवन्नवेदा म ऋतानां नमो जगृभ्वाँ अभि यज्जुजोषत् ॥४॥

जो याजक विपत्तिग्रस्त होकर उन इन्द्रदेव की प्रार्थना करते हैं और यज्ञ द्वारा तेज सम्पन्न बनते हैं, वे उनके ऐश्वर्य को कैसे प्राप्त करेंगे? जब प्रकाशवान् इन्द्रदेव आहुति ग्रहण करके हमारे ऊपर हर्षित होते हैं, तब वे हमारी प्रार्थनाओं को अच्छी तरह जानने वाले होते हैं ॥४॥

कथा कदस्या उषसो व्युष्टौ देवो मर्तस्य सख्यं जुजोष ।
कथा कदस्य सख्यं सखिभ्यो ये अस्मिन्कामं सुयुजं ततसे ॥५॥



प्रकाशमान इन्द्रदेव उषा के प्रकट होने पर मनुष्यों के बन्धुत्व को कैसे और कब प्राप्त करेंगे? जो याजकगण उन इन्द्रदेव के निमित्त श्रेष्ठ तथा मनोहर आहुतियों को विस्तृत करते हैं, उन मित्रों के निमित्त अपनी मित्रता को वे कब और कैसे प्रकाशित करेंगे ? ॥५॥

किमादमत्रं सख्यं सखिभ्यः कदा नु ते भ्रात्रं प्र ब्रवाम ।
श्रिये सुदृशो वपुरस्य सर्गाः स्वर्ण चित्रतममिष आ गोः ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! हम याजक, रिपुओं के आक्रमण से सुरक्षा करने वाली आपकी मित्रता का वर्णन, स्तुति करने वालों के समीप किस प्रकार करें ? आपके बन्धुत्व भाव का वर्णन कब करें ? सुन्दर दिखायी देने वाले इन्द्रदेव का कार्य स्तुतिकर्ताओं के हित के लिए है । सूर्यदेव के समान तेजसम्पन्न तथा सर्वत्र गमन करने वाले इन्द्रदेव के मनोहर तेज की सभी मनुष्य कामना करते हैं ॥६॥

द्रुहं जिघांसन्ध्वरसमनिन्द्रां तेतिक्ते तिग्मा तुजसे अनीका ।
ऋणा चिद्यत्र ऋणया न उग्रो दूरे अज्ञाता उषसो बबाधे ॥७॥

विद्रोह करने वाली, हिंसक कार्य करने वाली तथा इन्द्रदेव को न मानने वाली राक्षसी का संहार करने के लिए उन्होंने अपने तीक्ष्ण आयुधों को और अधिक तीक्ष्ण किया। ऋण (देवऋण, ऋषिऋण, पितृऋण) भी हम मनुष्यों को उषा काल में (ध्यानादि साधनाओं में



बाधा पहुँचाता है । पराक्रमी इन्द्रदेव उन उषाओं में हमारे ऋण को (उनसे मुक्ति पाने की क्षमता प्रदान करके) दूर से ही नष्ट कर देते हैं ॥७॥

ऋतस्य हि शुरुधः सन्ति पूर्वीऋतस्य धीतिर्वृजिनानि हन्ति ।
ऋतस्य श्लोको बधिरा ततर्द कर्णा बुधानः शुचिमान आयोः ॥८॥

ऋत (सत्य, सूर्य या यज्ञ) के पास अनेकों शक्तियाँ हैं। ऋतदेव की प्रार्थना दुष्कर्मों को विनष्ट कर देती है । उनकी सद्बुद्धि प्रदान करने वाली प्रार्थनाएँ कान से बहरे मनुष्यों को भी लाभान्वित करती हैं ॥८॥

ऋतस्य दृष्ठा धरुणानि सन्ति पुरुणि चन्द्रा वपुषे वपूंषि ।
ऋतेन दीर्घमिषणन्त पृक्ष ऋतेन गाव ऋतमा विवेशुः ॥९॥

ऋत के पुष्ट, धारक, हर्षप्रदायक आदि अनेकों रूप हैं । ऋतदेव के समीप मनुष्य प्रचुर अन्न की कामना करते हैं तथा उनकी सहायता से यज्ञादि श्रेष्ठ कार्यों में दानार्थ गौएँ प्रयुक्त होती हैं ॥९॥

ऋतं येमान ऋतमिद्वनोत्पृतस्य शुष्मस्तुरया उ गव्युः ।
ऋताय पृथ्वी बहुले गभीरे ऋताय धेनू परमे दुहाते ॥१०॥



ऋतदेव को वशीभूत करने के लिए याजकगण उनकी भक्ति करते हैं । ऋतदेव की शक्ति गौओं तथा अश्वों को प्रदान करने वाली है । इनसे ही प्रेरणा पाकर द्यावा-पृथिवी विस्तीर्ण तथा गम्भीर हुए हैं तथा उनके लिए ही गौएँ दूध प्रदान करती हैं ॥१०॥

नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो न पीपेः ।
अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! आप प्राचीन ऋषयों द्वारा स्तुत होकर तथा हमारे द्वारा प्रशंसित होकर , हमें नदियों के सदृश अन्न से-घी से पूर्ण करें । हे अश्ववान् इन्द्रदेव ! हम अपनी बुद्धि द्वारा आपके लिए अभिनव स्तोत्रों का निर्माण करते हैं, जिससे हम रथों तथा दासों से सम्पन्न हों ॥११॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त २४

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्र । छंद – त्रिष्टुप, १० अनुष्टुप

का सुष्टुतिः शवसः सूनूमिन्द्रमर्वाचीनं राधस आ ववर्तत् ।
ददिर्हि वीरो गृणते वसूनि स गोपतिर्निषिधां नो जनासः ॥१॥

बल के पुत्र तथा हमारी ओर पधारने वाले इन्द्रदेव को कौन सी प्रार्थना
ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए प्रवृत्त करेगी ? हे याजको ! पराक्रमी तथा
गौओं के पालक इन्द्रदेव हम मनुष्यों को रिपुओं का ऐश्वर्य प्रदान
करें। हम उनकी प्रार्थना करते हैं ॥१॥

स वृत्रहत्ये हव्यः स ईड्यः स सुष्टुत इन्द्रः सत्यराधाः ।
स यामन्ना मघवा मर्त्याय ब्रह्मण्यते सुष्वये वरिवो धात् ॥२॥

वृत्र का संहार करने वाले इन्द्रदेव युद्ध में बुलाये जाते हैं। वे प्रशंसनीय
हैं । श्रेष्ठ रीति से प्रार्थना किये जाने पर वे यथार्थ ऐश्वर्य के प्रदाता बनते



हैं। वे धनवान् इन्द्रदेव स्तोताओं तथा सोमाभिषव करने वाले याजकों को ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥२॥

तमिन्नरो वि ह्वयन्ते समीके रिरिक्कांसस्तन्वः कृण्वत त्राम् ।
मिथो यत्यागमुभयासो अग्नन्नरस्तोकस्य तनयस्य सातौ ॥३॥

अपनी सहायता के लिए सभी मनुष्य उन इन्द्रदेव को ही आहूत करते हैं। याजकगण तप द्वारा शरीर को क्षीण करके उनको ही अपना संरक्षक बनाते हैं। याजक तथा स्तोता दोनों मिलकर पुत्र-पौत्रादि प्राप्ति के निमित्त उनके समीप जाते हैं ॥३॥

क्रतूयन्ति क्षितयो योग उग्राशुषाणासो मिथो अर्णसातौ ।
सं यद्विशोऽववृत्रन्त युध्मा आदिन्नेम इन्द्रयन्ते अभीके ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आप बलशाली हैं। समस्त दिशाओं में विद्यमान मनुष्य, जल (पोषक रस) प्राप्त करने के लिए संयुक्तरूप से यजन करते हैं। जब युद्ध करने वाले मनुष्य संग्राम में एकत्रित होते हैं, तब सभी उन इन्द्रदेव की इच्छा करते हैं ॥४॥

आदिद्ध नेम इन्द्रियं यजन्त आदित्यक्तिः पुरोळाशं रिरिच्यात् ।
आदित्सोमो वि पपृच्यादसुष्वीनादिज्जुजोष वृषभं यजध्वै ॥५॥



इसके बाद युद्ध में योद्धागण बलशाली इन्द्रदेव का पूजन करते हैं तथा पकाने वाले पुरोडाश पकाकर उनको प्रदान करते हैं। सोम अभिषव करने वाले याजक, सोम अभिषव न करने वाले याजकों को ऐश्वर्य से दूर करते हैं। अन्य लोग कामनाओं की पूर्ति करने वाले बलशाली इन्द्रदेव के निमित्त आहुतियाँ समर्पित करते हैं ॥५॥

कृणोत्यस्मै वरिवो य इत्येन्द्राय सोममुशते सुनोति ।
सध्रीचीनेन मनसाविवेनन्तमित्सखायं कृणुते समत्सु ॥६॥

कल्याण करने की अभिलाषा करने वाले इन्द्रदेव के निमित्त जो मनुष्य सोम अभिषव करते हैं, उन्हें वे ऐश्वर्य प्रदान करते हैं । श्रेष्ठ मानस से उनकी इच्छा करने वाले तथा सोम निचोड़ने वाले याजकों के साथ वे इन्द्रदेव युद्धों में मित्रता की भावना से सम्बन्ध स्थापित करते हैं ॥६॥

य इन्द्राय सुनवत्सोममद्य पचात्पक्तीरुत भृज्जाति धानाः ।
प्रति मनायोरुचथानि हर्यन्तस्मिन्दधद्वृषणं शुष्ममिन्द्रः ॥७॥

आज जो मनुष्य इन्द्रदेव के लिए सोम रस निचोड़ते हैं, पुरोडाश पकाते हैं, धान की खीलों को भूनते हैं; उनकी स्तुतियों का श्रवण करके इन्द्रदेव उन्हें अत्यधिक सामर्थ्य प्रदान करते हैं ॥७॥



यदा समर्य व्यचेदघावा दीर्घं यदाजिमभ्यख्यदर्यः ।
अचिक्रददवृषणं पत्यच्छा दुरोण आ निशितं सोमसुद्धिः ॥८॥

जब रिपुओं का संहार करने वाले इन्द्रदेव रिषुओं को विशेष प्रकार से जानते हैं तथा बड़े युद्ध में विद्यमान रहते हैं, तब उनकी पत्नी सौम अभिषव करने वालों द्वारा प्रोत्साहित किये गये तथा कामनाओं की वर्षा करने वाले इन्द्रदेव के यश का वर्णन करती हैं ॥८॥

भूयसा वस्त्रमचरत्कनीयोऽविक्रीतो अकानिषं पुनर्यन् ।
स भूयसा कनीयो नारिरेचीदीना दक्षा वि दुहन्ति प्र वाणम् ॥९॥

किसी ने प्रचुर ऐश्वर्य (धन) प्रदान करके थोड़ी सी वस्तु प्राप्त कर ली । जब उस वस्तु का विक्रय नहीं हुआ, तब वह पुनः जाकर अपने धन की माँग करता है। बाद में विक्रेता प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करके थोड़ी सी वस्तु लेने के लिए तैयार नहीं हुआ। उसने कहा-चाहे आप सक्षम हों या अक्षम, विक्रय के समय आपने जो बोल दिया है, अब वही रहेगा ॥९॥

क इमं दशभिर्ममेन्द्रं क्रीणाति धेनुभिः ।
यदा वृत्राणि जङ्घनदथैनं मे पुनर्ददत् ॥१०॥



दस गौओं द्वारा हमारे इन्द्रदेव को कौन खरीदेगा (दस इन्द्रियजन्य कामनाओं को समर्पित करके आत्मशक्ति कौन प्राप्त करेगा) ? जब वे (इन्द्र) रिपुओं का संहार करेंगे, तब उनको पुनः हमें वापस दें ॥१०॥

नू ष्टुत इन्द्र नू गृणान इषं जरित्रे नद्यो न पीपेः ।
अकारि ते हरिवो ब्रह्म नव्यं धिया स्याम रथ्यः सदासाः ॥११॥

है इन्द्रदेव ! आप प्राचीन ऋषियों द्वारा स्तुत होकर तथा हमारे द्वारा प्रशंसित होकर हमें नदियों के सदृश अन्नों से परिपूर्ण करें । हे अश्ववान् इन्द्रदेव ! हम अपनी बुद्धि द्वारा आपके लिए अभिनव स्तोत्रों का गान करते हैं, जिससे हम रथों तथा दासों से सम्पन्न हों ॥११॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त २५

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्र । छंद – त्रिष्टुप,

को अद्य नर्यो देवकाम उशन्निन्द्रस्य सख्यं जुजोष ।
को वा महेऽवसे पार्याय समिद्धे अग्नौ सुतसोम ईदृ ॥१॥

देवताओं जैसी अभिलाषा करते हुए आज कौन मनुष्य इन्द्रदेव के साथ मित्रता करना चाहते हैं ? सोम अभिषव करने वाले कौन याजक संकटों से पार होने के लिए तथा महान् सुरक्षा के लिए अग्नि के प्रदीप्त होने पर उनकी स्तुति करते हैं? ॥१॥

को नानाम वचसा सोम्याय मनायुर्वा भवति वस्त उसाः ।
क इन्द्रस्य युज्यं कः सखित्वं को भ्रात्रं वष्टि कवये क ऊती ॥२॥

कौन याजक अपनी वाणी से सोमपान करने वाले इन्द्रदेव की स्तुति करते हैं ? कौन उनके द्वारा प्रदान की गयी गौओं का पालन करते



हैं? कौन उनकी सहायता की कामना करते हैं? कौन उनके साथ मित्रता की कामना करते हैं। कौन उनके बन्धुत्व की कामना करते हैं? तथा कौन उन दूरदर्शी इन्द्रदेव के संरक्षण की कामना करते हैं? ॥२॥

को देवानामवो अद्या वृणीते क आदित्याँ अदितिं ज्योतिरीदृष्टे ।
कस्याश्विनाविन्द्रो अग्निः सुतस्यांशोः पिबन्ति मनसाविवेनम् ॥३॥

आज देवताओं का संरक्षण करने के लिए कौन कामना करते हैं? आदित्य, अदिति तथा प्रकाशरूपी उषा की कौन प्रार्थना करते हैं? इन्द्रदेव, अग्निदेव तथा अश्विनीकुमार प्रार्थना से हर्षित होकर किसे याजक के द्वारा अभिषुत सोमरस का इच्छानुसार पान करते हैं? ॥३॥

तस्मा अग्निर्भरतः शर्म यंसज्ज्योक्पश्यात्सूर्यमुच्चरन्तम् ।
य इन्द्राय सुनवामेत्याह नरे नर्याय नृतमाय नृणाम् ॥४॥

जो याजक मनुष्यों के मित्र तथा नायकों में सर्वश्रेष्ठ नायक इन्द्रदेव के निमित्त सोमरस अभिषव करेंगे, भरण-पोषण करने वाले अग्निदेव उस यज्ञक को सुख प्रदान करें तथा उदित होते हुए सूर्यदेव को वे योजक (चिरकाल तक) देखें ॥४॥

न तं जिनन्ति बहवो न दभ्रा उर्वस्मा अदितिः शर्म यंसत् ।



प्रियः सुकृत्प्रिय इन्द्रे मनायुः प्रियः सुप्रावीः प्रियो अस्य सोमी ॥५॥

जो याजक इन्द्रदेव के निमित्त सोम निचोड़ते हैं । वे शत्रुओं द्वारा पीड़ित नहीं होते। उन याजकों को माता अदिति अत्यधिक हर्ष प्रदान करती हैं। इन्द्रदेव के निमित्त श्रेष्ठ कर्म करने वाले, यज्ञ करने वाले, सन्मार्ग पर गमन करने वाले तथा सोम यज्ञ करने वाले याजक उनके स्नेही बनते हैं ॥५॥

सुप्राव्यः प्राशुषाळेष् वीरः सुष्वेः पक्तिं कृणुते केवलेन्द्रः ।
नासुष्वेरापिर्न सखा न जामिर्दुष्प्राव्योऽवहन्तेदवाचः ॥६॥

रिपुओं का संहार करने वाले, पराक्रमी इन्द्रदेव केवल सन्मार्ग पर गमन करने वाले तथा सोम अभिषव करने वाले याजकों के ही पुरोडाश को ग्रहण करते हैं। वे सोम अभिषव न करने वाले याजकों के मित्र अथवा बन्धु नहीं होते । बुरे मार्ग पर गमन करने वालों तथा प्रार्थना न करने वालों के वे संहार करने वाले होते हैं ॥६॥

न रेवता पणिना सख्यमिन्द्रोऽसुन्वता सुतपाः सं गृणीते ।
आस्य वेदः खिदति हन्ति नग्नं वि सुष्वये पक्तये केवलो भूत् ॥७॥

सोमपान करने वाले इन्द्रदेव सोम अभिषव न करने वाले, ऐश्वर्य वाले तथा कंजूस व्यापारियों के साथ मित्रता स्थापित नहीं करते। वे उनको



तथा उनके अनावश्यक ऐश्वर्य को नष्ट कर देते हैं। सोमरस निचोड़ने वाले तथा पुरोडाश पकाने वाले याजकों के ही वे मित्र होते हैं ॥७॥

इन्द्रं परेऽवरे मध्यमास इन्द्रं यान्तोऽवसितास इन्द्रम् ।
इन्द्रं क्षियन्त उत युध्यमाना इन्द्रं नरो वाजयन्तो हवन्ते ॥८॥

उत्कृष्ट, निकृष्ट तथा मध्यम प्रकार के मनुष्य इन्द्रदेव को आहूत करते हैं। गमन करने वाले तथा बैठे रहने वाले मनुष्य भी उनको आहूत करते हैं। घर में विद्यमान रहने वाले तथा युद्ध करने वाले मनुष्य भी उनका आवाहन करते हैं। इसके अलावा अन्न की कामना करने वाले मनुष्य भी उनका आवाहन करते हैं ॥८॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त २६

ऋषि – वामदेवो गौतमः, १-३ इन्द्रो
देवता – १-३ इन्द्र, आत्मा, ४-७ श्येन। छंद – त्रिष्टुप,

अहं मनुरभवं सूर्यश्चाहं कक्षीवाँ ऋषिरस्मि विप्रः ।
अहं कुत्समार्जुनेयं न्यूञ्जेऽहं कविरुशना पश्यता मा ॥१॥

मैं ही मनु के रूप में हुआ हूँ। मैं ही आदित्य हूँ तथा मैं ही विवेकी
कक्षीवान् ऋषि हूँ। मैं ही अर्जुनी पुत्र 'कुत्स' के रूप में हूँ और मैं ही
क्रान्तदशी उशना अंष हूँ। हे याजको ! आप मुझे भली प्रकार देखें
॥१॥

अहं भूमिमददामार्यायाहं वृष्टिं दाशुषे मर्त्याय ।
अहमपो अनयं वावशाना मम देवासो अनु केतमायन् ॥२॥

मैंने सत्पुरुषों के निमित्त भूमि प्रदान की तथा दानी मनुष्यों के निमित्त
जल बरसाया है। ध्वनि करते हुए जल प्रवाहों को मैंने ही आगे बढ़ाया
था। अतः समस्त देवता मेरे संकल्प का अनुसरण करें ॥२॥

अहं पुरो मन्दसानो व्यैरं नव साकं नवतीः शम्बरस्य ।
शततमं वेश्यं सर्वताता दिवोदासमतिथिग्वं यदावम् ॥३॥

सोमरस पान से हर्षित होकर मैंने शम्बरासुर की निन्यानवे पुरियों को एक साथ ध्वस्त किया था। यज्ञ में अतिथियों को गौएँ प्रदान करने वाले राजर्षि 'दिवोदास' की मैंने रक्षा की थी। इसके बाद उनके लिए सौवीं पुरी को निवास के योग्य बनाया था ॥३॥

प्र सु ष विभ्यो मरुतो विरस्तु प्र श्येनः श्येनेभ्य आशुपत्वा ।
अचक्रया यत्स्वधया सुपर्णो हव्यं भरन्मनवे देवजुष्टम् ॥४॥

हे मरुद्गण ! (तीव्रगति के लिए विख्यात) बाज़ पक्षियों की तुलना में वह सुपर्ण अधिक शक्तिशाली और द्रुतगामी हैं। देवों द्वारा ग्रहण किये जाने वाले सोमरस रूपी हव्य को श्रेष्ठ पंखों वाले पक्षी ने चक्र विहीन रथ द्वारा स्वर्गलोक से लाकर मनुष्यों को (प्रजापति मनु को) प्रदान किया था ॥४॥

भरद्वादि विरतो वेविजानः पथोरुणा मनोजवा असर्जि ।
तूयं ययौ मधुना सोम्येनोत श्रवो विविदे श्येनो अत्र ॥५॥



जब समस्त लोकों को कम्पायमान करते हुए वह बाज़ पक्षी घुलोक से सोमरस को लेकर चला, तब उसने विस्तृत आकाश मार्ग में मन के सदृश वेग से उड़ान भरीं । शान्ति प्रदायक तथा मधुर रस को शीघ्रतापूर्वक लाने के बाद उस बाज़ पक्षी ने इस जगत् में प्रचुर यश-लाभ प्राप्त किया ॥५॥

ऋजीपी श्येनो ददमानो अंशुं परावतः शकुनो मन्द्रं मदम् ।
सोमं भरद्वाहहाणो देवावान्दिवो अमुष्मादुत्तरादादाय ॥६॥

सुदूर प्रदेश से सोमरस को लेकर ऋजु मार्ग से गमन करने वाले तथा देवताओं के संग निवास करने वाले श्येन पक्षी ने मीठे तथा हर्ष प्रदायक सोमरस को उच्च द्युलोक से ग्रहण करके उसे दृढ़तापूर्वक पृथ्वी पर पहुँचाया ॥६॥

आदाय श्येनो अभरत्सोमं सहस्रं सर्वाँ अयुतं च साकम् ।
अत्रा पुरंधिरजहादरातीर्मदि सोमस्य मूरा अमूरः ॥७॥

उस श्येन पक्षी ने सहस्र संख्यक यज्ञों के माध्यम से सोमरस को प्राप्त करके उड़ान भरी। इसके बाद अनेक सत्कर्म करने वाले तथा ज्ञान सम्पन्न इन्द्रदेव ने सोमरस के पान से हर्षित होकर मूढ़ रिषुओं का संहार किया ॥७॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त २७

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – श्येन, ५ इन्द्रो । छंद – त्रिष्टुप, ५ शक्करी

गर्भे नु सन्नन्वेषामवेदमहं देवानां जनिमानि विश्वा ।
शतं मा पुर आयसीररक्षन्नध श्येनो जवसा निरदीयम् ॥१॥

(तत्त्वज्ञानी ऋषि वामदेव का कथन) गर्भ (समाधि अवस्था में रहकर ही मैंने इन्द्रादि सम्पूर्ण देवताओं के जन्मों को भली-भाँति जान लिया था। सैकड़ों लोहे की पुरियों ने गर्भावस्था में मेरी सुरक्षा की थी। उसके बाद मैं श्येन पक्षी के समान वेग के साथ बाहर निकल आया था ॥१॥

न घा स मामप जोषं जभाराभीमास त्वक्षसा वीर्येण ।
ईर्मा पुरंधिरजहादरातीरुत वाताँ अतरच्छुशुवानः ॥२॥

उस अवस्था में मुझे मोह आदि दोष प्रभावित नहीं कर पाये । मैंने ही अपने तीक्ष्ण बल (ज्ञान) से उन दुःखों को आवृत कर लिया। सबको



प्रेरणा देने वाले परमात्मा ने गर्भस्थ रिपुओं का संहार किया था तथा बढ़कर गर्भ में विद्यमान वायु के सदृश वेग वाले रिपुओं का विनाश किया था ॥२॥

अव यच्छ्येनो अस्वनीदध द्योर्वि यद्यदि वात ऊहुः पुरंधिम् ।
सृजद्यदस्मा अव ह क्षिपज्यां कृशानुरस्ता मनसा भुरण्यन् ॥३॥

सोम हरण करते समय जब श्येन पक्षी ने द्युलोक से गर्जना की, तब सोमपालों ने बुद्धिवर्धक सोमरस को छीनने का प्रयत्न किया। उसके बाद मन के वेग से गमन करने वाले सोमरक्षक कृशानु ने प्रत्यञ्चा चढ़ाई तथा श्येन पक्षी पर बाण छोड़ा ॥३॥

ऋजिष्य ईमिन्द्रावतो न भुज्युं श्येनो जभार बृहतो अधि ष्णोः ।
अन्तः पतत्पतत्र्यस्य पर्णमथ यामनि प्रसितस्य तद्वेः ॥४॥

जिस प्रकार अश्विनीकुमारों ने बलवान् इन्द्रदेव के द्वारा संरक्षित स्थान से 'भुज्यु' को अपहृत किया था, उसी प्रकार सरल मार्ग से गमन करने वाले श्येन पक्षी ने इन्द्रदेव द्वारा संरक्षित द्युलोक से सोम का अपहरण किया था। उस समय संग्राम में 'कृशानु' के आयुधों से घायल होकर उस पक्षी का एक पतनशील पंख गिर गया था ॥४॥

अथ श्वेतं कलशं गोभिरक्तमापिष्यान् मघवा शुक्रमन्थः ।



अध्वर्युभिः प्रयतं मध्वो अग्रमिन्द्रो मदाय प्रति धत्पिबध्यै शूरो मदाय
प्रति धत्पिबध्यै ॥५॥

पवित्र कलश में रखे हुए, गो-दुग्ध मिश्रित, तेजोयुक्त, तुष्टिदायक,
मीठे रसों में सर्वश्रेष्ठ, अन्नरूप सोमरस को अध्वर्युओं के द्वारा प्रदान
किये जाने पर, आनन्द प्राप्त करने के लिए धनवान् इन्द्रदेव पान करें
तथा उसकी सुरक्षा करें ॥५॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त २८

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्र, इन्द्रसोमौ । छंद – त्रिष्टुप,

त्वा युजा तव तत्सोम सख्य इन्द्रो अपो मनवे सस्रुतस्कः ।
अहन्नहिमरिणात्सप्त सिन्धूनपावृणोदपिहितेव खानि ॥१॥

हे सोम ! आपसे मित्रत करके तथा आपका सहयोग प्राप्त करके
इन्द्रदेव ने प्रवाहित जल को मनु के लिए उत्पन्न किया। उन्होंने 'अहि'
का संहार करके सप्त-सरिताओं को प्रवाहित किया तथा वृत्र द्वारा
अवरुद्ध किये हुए द्वारों को खोला ॥१॥

त्वा युजा नि खिदत्सूर्यस्येन्द्रश्चक्रं सहसा सद्य इन्द्रो ।
अधि ष्णुना बृहता वर्तमानं महो द्रुहो अप विश्वायु धायि ॥२॥

हे सोम ! इन्द्रदेव ने आपके सहयोग से, विस्तृत चुलोक में गमन करने
वाले सूर्य चक्र को अपने सामर्थ्य के द्वारा अपने नियन्त्रण में किया



था। उन्होंने ही सर्वत्र गमन करने वाले महान् द्रोह शक्ति सम्पन्न (नष्ट-भ्रष्ट करने की शक्ति) से सूर्य-चक्र पर अधिकार किया था ॥२॥

अहन्निन्द्रो अदहदग्निरिन्द्रो पुरा दस्यून्मध्यंदिनादभीके ।
दुर्गे दुरोणे क्रत्वा न यातां पुरू सहस्रा शर्वा नि बर्हीत् ॥३॥

हे सोम ! आपकी सहायता से इन्द्रदेव ने मध्याह्न से पूर्व ही (युद्ध में) रिपुओं का विनाश कर दिया तथा अग्निदेव ने उन्हें भस्मसात् कर दिया। जिस प्रकार रक्षारहित दुर्गम प्रदेश से गमन करने वाले मनुष्य को चोर मार डालते हैं, उसी प्रकार इन्द्रदेव ने अपने बल के द्वारा अनेकों सहस्र शत्रु सेनाओं को विनष्ट कर दिया ॥३॥

विश्वस्मात्सीमधमाँ इन्द्र दस्यून्विशो दासीरकृणोरप्रशस्ताः ।
अबाधेथाममृणतं नि शत्रून्विन्देथामपचितिं वधत्रैः ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आप ने इन दस्युओं को पतित किया तथा हीनभाव वाले मनुष्यों को निन्दित किया । हे इन्द्रदेव तथा सोमदेव ! आप दोनों उन रिपुओं को अवरुद्ध करते हैं तथा उन्हें आयुधों द्वारा विनष्ट करते हैं और उसके बाद सम्मान प्राप्त करते हैं ॥४॥

एवा सत्यं मघवाना युवं तदिन्द्रश्च सोमोर्वमश्व्यं गोः ।
आदर्दतमपिहितान्यश्वा रिरिचथुः क्षाश्चित्तृदाना ॥५॥



हे सोमदेव ! यह सच है कि आप और इन्द्रदेव ने महान् अश्वों तथा गौओं के झुण्ड का दान किया था । हे धनवान् सोम तथा इन्द्रदेवो ! आप दोनों ने पाषाणों द्वारा अवरुद्ध गौ-समूहों तथा धरती को बल द्वारा मुक्त किया था और रिपुओं का संहार किया था ॥५॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त २९

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्र । छंद – त्रिष्टुप,

आ नः स्तुत उप वाजेभिरूती इन्द्र याहि हरिभिर्मन्दसानः ।
तिरश्चिदर्यः सवना पुरूण्याङ्गूषेभिर्गृणानः सत्यराधाः ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! आप प्रशंसित होकर हम याजकों को संरक्षण प्रदान करने के लिए हमारे अन्न से सम्पन्न अनेकों यज्ञों में घोड़ों के साथ पधारें । आप आनन्दमय, स्वामी, स्तोत्रों द्वारा प्रशंसित तथा अविनाशी धन से सम्पन्न हैं ॥१॥

आ हि ष्मा याति नर्यश्चिकित्वान्हूयमानः सोतृभिरुप यज्ञम् ।
स्वश्वो यो अभीरुर्मन्यमानः सुष्वाणेभिर्मदति सं ह वीरैः ॥२॥

मनुष्यों के लिए कल्याणकारी तथा सर्वज्ञाता हे इन्द्रदेव ! आप सोम अभिषव करने वालों के द्वारा आवाहित होकर हमारे यज्ञ के समीप



पधारें । श्रेष्ठ अश्वों से सम्पन्न, निर्भय तथा सोम अभिषव करने वालों के द्वारा प्रशंसित इन्द्रदेव मरुतों के साथ आनन्दित होते हैं ॥२॥

श्रावयेदस्य कर्णा वाजयध्वै जुष्टामनु प्र दिशं मन्दयध्वै ।
उद्वावृषाणो राधसे तुविष्मान्करन्न इन्द्रः सुतीर्थाभयं च ॥३॥

हे मनुष्यो ! इन्द्रदेव को बलिष्ठ बनाने के लिए तथा समस्त दिशाओं में हर्षित होने के लिए, आप उनके कानों में उत्तम स्टे... सुनायें । सोमरस से सम्पन्न शक्तिशाली इन्द्रदेव हम मनुष्यों को ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए श्रेष्ठ तीर्थों को भयमुक्त करें ॥३॥

अच्छा यो गन्ता नाधमानमूती इत्या विप्रं हवमानं गृणन्तम् ।
उप त्मनि दधानो धुर्याशून्सहस्राणि शतानि वज्रबाहुः ॥४॥

वज्रबाहु इन्द्रदेव, सैकड़ों तथा हजारों की संख्या में द्रुतगामी अश्वों को रथ वहन करने के स्थान में नियोजित करके, सुरक्षा के निमित्त याचना करने वालों, आवाहन करने वालों, प्रार्थना करने वालों तथा मेधावी याजों के समीप गमन करते हैं ॥४॥

त्वोतासो मघवन्निन्द्र विप्रा वयं ते स्याम सूरयो गृणन्तः ।
भेजानासो बृहदिवस्य राय आकाय्यस्य दावने पुरुक्षोः ॥५॥



हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! हम मनुष्य आपकी स्तुति करने वाले हैं। हम ज्ञानी तथा स्तुति करने वाले लोग आपके द्वारा संरक्षित हैं । आप अत्यन्त तेज सम्पन्न, प्रार्थना योग्य तथा अन्न से युक्त हैं। ऐश्वर्य दान करने के समय हम मनुष्य आपकी प्रार्थना करें ॥५॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ३०

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्र, १-११ इन्द्रोषसौ । छंद – गायत्री, ८, २४ अनुष्टुप

नकिरिन्द्र त्वदुत्तरो न ज्यायाँ अस्ति वृत्रहन् ।
नकिरेवा यथा त्वम् ॥१॥

हे शत्रु संहारक इन्द्रदेव ! आप से अधिक श्रेष्ठ और महान् कोई नहीं है। आपके समान अन्य और कोई देव नहीं है ॥१॥

सत्रा ते अनु कृष्टयो विश्वा चक्रेव वावृतुः ।
सत्रा महँ असि श्रुतः ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! सब जगह व्याप्त चक्र जिस प्रकार गाड़ी का अनुगमन करता है, उसी प्रकार समस्त प्रजाएँ आपका अनुगमन करती हैं। आप सचमुच महान् हैं तथा गुणों के द्वारा विख्यात हैं ॥२॥

विश्वे चनेदना त्वा देवास इन्द्र युयुधुः ।



यदहा नक्तमातिरः ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! विजय की अभिलाषा करने वाले समस्त देवों ने शक्ति के रूप में आपका सहयोग प्राप्त करके असुरों के साथ युद्ध किया था। उस समय आपने सभी रिपुओं का सम्पूर्ण विनाश किया था ॥३॥

यत्रोत बाधितेभ्यश्चक्रं कुत्साय युध्यते ।
मुषाय इन्द्र सूर्यम् ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! उस संग्राम में युद्ध करने वाले 'कुत्स' तथा उनके सहयोगियों के विनाश के लिए आपने सूर्य के रथ चक्र को उठाया तथा अपने भक्तों की सुरक्षा की थी ॥४॥

यत्र देवाँ ऋघायतो विश्वाँ अयुध्य एक इत् ।
त्वमिन्द्र वनूरहन् ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! उस युद्ध में देवताओं के अवरोधक सम्पूर्ण असुरों के साथ आपने अकेले ही संग्राम किया तथा उन हिंसा करने वालों का संहार किया ॥५॥

यत्रोत मर्त्याय कमरिणा इन्द्र सूर्यम् ।
प्रावः शचीभिरेतशम् ॥६॥



हे इन्द्रदेव ! जिस संग्राम में आपने ऋषि 'एतश' के लिए सूर्य पर भी चढ़ाई की थीं, उस संग्राम में लड़ाई करके आपने 'एतश' की सुरक्षा की थी ॥६॥

किमादुतासि वृत्रहन्मघवन्मन्युमत्तमः ।
अत्राह दानुमातिरः ॥७॥

वृत्र का संहार करने वाले ऐश्वर्यवान् हे इन्द्रदेव ! उसके बाद क्या आप अत्यधिक क्रोधित हुए थे? इस आकाश में आपने 'दानु' के पुत्र 'वृत्र' का संहार किया था ॥७॥

एतद्घेदुत वीर्यमिन्द्र चकर्त्त पौंस्यम् ।
स्त्रियं यद्दुर्हणायुवं वधीर्दुहितरं दिवः ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आपने बल से सम्पन्न पुरुषार्थ किया था। जिस प्रकार सूर्यदेव द्युलोक की पुत्री उषा का नाश करते हैं, उसी प्रकार आप विशाल शत्रु सेना का संहार करते हैं ॥८॥

दिवश्चिद्घा दुहितरं महान्महीयमानाम् ।
उषासमिन्द्र सं पिणक् ॥९॥



हे इन्द्रदेव ! आप महान् हैं । विशाल शत्रुसेना को उसी प्रकार चूर-चूर कर दें, जिस प्रकार सूर्यदेव उषा को छिन्न-भिन्न कर देते हैं ॥९॥

अपोषा अनसः सरत्सम्पिष्टादह बिभ्युषी ।
नि यत्सीं शिश्रथद्वृषा ॥१०॥

बलशाली इन्द्रदेव ने जब उषा के रथ को विदीर्ण कर दिया था, तब भयभीत होने वाली उषा विदीर्ण रथ से दूर होकर प्रकट हुई थी ॥१०॥

एतदस्या अनः शये सुसम्पिष्टं विपाश्या ।
ससार सीं परावतः ॥११॥

उस उषा देवी का इन्द्रदेव द्वारा विदीर्ण हुआ रथ 'विपाशा' नदी के किनारे गिर पड़ा और उस स्थान से उषा देवी दूर देश में चली गई ॥११॥

उत सिन्धुं विबाल्यं वितस्थानामधि क्षमि ।
परि ष्ठा इन्द्र मायया ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! आपने समस्त जल को तथा परिपूर्ण रूप से भरी हुई वेग से प्रवाहित होने वाली सिन्धु नदी को अपनी बुद्धि के द्वारा धरती पर सब जगह स्थापित किया था ॥१२॥



उत शुष्णस्य धृष्णुया प्र मृक्षो अभि वेदनम् ।
पुरो यदस्य सम्पिणक् ॥१३॥

हे इन्द्रदेव ! आप वर्षण करने वाले हैं । जब आपने 'शुष्ण' नामक असुर के नगरों को विदीर्ण किया था, तब आपने उसके ऐश्वर्य का भी अपहरण किया था ॥१३॥

उत दासं कौलितरं बृहतः पर्वतादधि ।
अवाहन्निन्द्र शम्बरम् ॥१४॥

हे इन्द्रदेव ! आपने 'कुलितर' के पुत्र विनाशक शम्बर' को विशाल पर्वत के ऊपर से नीचे की ओर धकेल कर मार डाला था ॥१४॥

उत दासस्य वर्चिनः सहस्राणि शतावधीः ।
अधि पञ्च प्रधीरिव ॥१५॥

हे इन्द्रदेव ! चक्र के अरों के समान नियोजित संगठित होकर रहने वाले वर्चस्वी दास के रिपुओं के पाँच लाख सैनिकों को आपने विनष्ट कर दिया था ॥१५॥

उत त्वं पुत्रमग्न्युवः परावृक्तं शतक्रतुः ।



उक्थेष्विन्द्र आभजत् ॥१६॥

सैकड़ों यज्ञ सम्पन्न करने वाले इन्द्रदेव ने 'अगु' के पुत्र 'परावृक्त' को स्तोत्र पाठ में भाग लेने योग्य बनाया ॥१६॥

उत त्या तुर्वशायदू अस्नातारा शचीपतिः ।
इन्द्रो विद्वौ अपारयत् ॥१७॥

ययाति के शाप से पतित, विख्यात शासक 'यदू' तथा 'तुर्वश' को शची के पति ज्ञानी इन्द्रदेव ने अभिषेक के योग्य बनाया ॥१७॥

उत त्या सद्य आर्या सरयोरिन्द्र पारतः ।
अर्णाचित्ररथावधीः ॥१८॥

हे इन्द्रदेव ! सरयू नदी के किनारे निवास करने वाले 'अर्ण' तथा 'चित्ररथ' नामक आर्य शासकों को अपने तत्काल मार दिया था ॥१८॥

अनु द्वा जहिता नयोऽन्धं श्रोणं च वृत्रहन् ।
न तत्ते सुम्रमष्टवे ॥१९॥



हे वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ! समाज के द्वारा परित्याग किये गये अन्धों तथा पंगुओं को आपने अनुकूल रास्ते पर चलाया था । आपके द्वारा प्रदान किये गये सुख को हटाने में कोई सक्षम नहीं हो सकता ॥१९॥

शतमश्मन्मयीनां पुरामिन्द्रो व्यास्यत् ।
दिवोदासाय दाशुषे ॥२०॥

रिपुओं के सैकड़ों पाषाण विनिर्मित नगरों को इन्द्रदेव ने हवि प्रदाता दिवोदास के लिए प्रदान किया ॥२०॥

अस्वापयद्भीतये सहस्रा त्रिंशतं हथैः ।
दासानामिन्द्रो मायया ॥२१॥

उन इन्द्रदेव ने 'दभीति' के कल्याण के लिए अपनी सामर्थ्य के द्वारा असुरों के तीस हजार वीरों को हथियारों से मारकर सुला दिया ॥२१॥

स घेदुतासि वृत्रहन्त्समान इन्द्र गोपतिः ।
यस्ता विश्वानि चिच्युषे ॥२२॥

हे इन्द्रदेव ! आप उन समस्त रिपुओं को हिला देते हैं । हे वृत्र का संहार करने वाले इन्द्रदेव ! आप गौओं के पालक हैं । आप समस्त याजकों के साथ समान व्यवहार करते हैं ॥२२॥



उत नूनं यदिन्द्रियं करिष्या इन्द्र पौंस्यम् ।
अद्या नकिष्टदा मिनत् ॥२३॥

हे इन्द्रदेव ! आपने अपनी इन्द्रियों का जो बल तथा पराक्रम प्रदर्शित किया है, उसे कोई भी विनष्ट नहीं कर सकता ॥२३॥

वामंवामं त आदुरे देवो ददात्वयमा ।
वामं पूषा वामं भगो वामं देवः करूळती ॥२४॥

रिपुओं का संहार करने वाले हे इन्द्रदेव ! 'अर्यमा' देवता आपको वह मनोहर ऐश्वर्य प्रदान करें । दन्तहीन पूषा तथा 'भग' देवता आपको वह रमणीय ऐश्वर्य प्रदान करें ॥२४॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ३१

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्र । छंद – गायत्री, ३ पादनिर्घृत,

कया नश्चित्र आ भुवदूती सदावृधः सखा ।
कया शचिष्ठया वृता ॥१॥

निरन्तर प्रगतिशील हे इन्द्रदेव ! आप किन-किन तृप्तिकारक पदार्थों के भेंट करने से, किस तरह की पूजा विधि से प्रसन्न होंगे? आप किन दिव्य शक्तियों सहित हमारे सहयोगी बनेंगे? ॥१॥

कस्त्वा सत्यो मदानां मंहिष्ठो मत्सदन्धसः ।
दृव्वा चिदारुजे वसु ॥२॥

सत्यनिष्ठों को आनन्द प्रदान करने वालों में सोम सर्वोपरि है; क्योंकि हे इन्द्रदेव ! यह आपको दुर्धर्ष शत्रुओं के ऐश्वर्य को नष्ट करने की प्रेरणा देता है ॥२॥



अभी षु णः सखीनामविता जरितृणाम् ।
शतं भवास्पृतिभिः ॥३॥

स्तुतियों से प्रसन्न करने वाले अपने मित्रों के रक्षक हे इन्द्रदेव ! हमारी
हर प्रकार से रक्षा करने के लिये आप उच्चकोटि की तैयारी से प्रस्तुत
हैं ॥३॥

अभी न आ ववृत्स्व चक्रं न वृत्तमर्वतः ।
नियुद्धिश्चर्षणीनाम् ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! हम याजकगण आपका अनुगमन करते हैं । आप हम
याजकों की प्रार्थनाओं से हर्षित होकर, हमारे सम्मुख गोल पहिए के
समान पधारें ॥४॥

प्रवता हि क्रतूनामा हा पदेव गच्छसि ।
अभक्षि सूर्ये सचा ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आप यज्ञ मण्डप में अपने स्थान को ज्ञात करके पधारते
हैं। सूर्यदेव के साथ हम आपकी उपासना करते हैं ॥५॥

सं यत्त इन्द्र मन्यवः सं चक्राणि दधन्विरे ।
अध त्वे अध सूर्ये ॥६॥



हे इन्द्रदेव ! जब हम आपकी प्रार्थना करते हैं, तब वे प्रार्थनाएँ चक्र के सदृश आपकी ओर गमन करती हैं। वे प्रार्थनाएँ सर्वप्रथम आपके समीप जाती हैं, बाद में सूर्यदेव के समीप गमन करती हैं ॥६॥

उत स्मा हि त्वामाहुरिन्मघवानं शचीपते ।
दातारमविदीधयुम् ॥७॥

शक्तियों के स्वामी हे इन्द्रदेव ! स्तोतागण आपको ऐश्वर्यवान्, धन प्रदायक तथा तेजस्वी कहते हैं ॥७॥

उत स्मा सद्य इत्यरि शशमानाय सुन्वते ।
पुरू चिन्महसे वसु ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! स्तुति करने वालों तथा सोम अभिषव करने वालों को आप शीघ्र ही प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥८॥

नहि ष्मा ते शतं चन राधो वरन्त आमुरः ।
न च्यौत्नानि करिष्यतः ॥९॥



हे इन्द्रदेव ! आपके सैकड़ों प्रकार के ऐश्वर्य को हिंसा करने वाले शत्रु नहीं प्राप्त कर सकते । रिपुओं का विनाश करने वाली आपकी सामर्थ्य को वे रोक नहीं सकते ॥९॥

अस्माँ अवन्तु ते शतमस्मान्सहस्रमूतयः ।
अस्मान्विश्वा अभिष्टयः ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! आपके सैकड़ों रक्षण-साधन हमारी सुरक्षा करें, आपके सहस्रों रक्षण-साधन हमारी सुरक्षा करें और आपकी समस्त प्रेरणाएँ हमारी सुरक्षा करें ॥१०॥

अस्माँ इहा वृणीष्व सख्याय स्वस्तये ।
महो राये दिवित्मते ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें अपनी मित्रता की छत्रछाया में रखकर हमारा कल्याण करें तथा हम याजकों को तेजस्वी वैभव प्रदान करें ॥११॥

अस्माँ अविद्धि विश्वहेन्द्र राया परीणसा ।
अस्मान्विश्वाभिरूतिभिः ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! आप अपने महान् धनों तथा सम्पूर्ण रक्षण-साधनों द्वारा प्रतिदिन हमारी सुरक्षा करें ॥१२॥



अस्मभ्यं ताँ अपा वृधि व्रजाँ अस्तेव गोमतः ।
नवाभिरिन्द्रोतिभिः ॥१३॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार वीर मनुष्य गृह-द्वार को खोलते हैं, उसी प्रकार आप हम मनुष्यों के निमित्त गौओं के गोष्ठ को खोलें ॥१३॥

अस्माकं धृष्णुया रथो द्युमाँ इन्द्रानपच्युतः ।
गव्युरश्वयुरीयते ॥१४॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे रिपुओं को परास्त करने वाले, अत्यधिक तेज वाले, विनष्ट न होने वाले तथा गौओं (किरणों) से युक्त हैं । आप अश्वों से युक्त रथ द्वारा सर्वत्र गमन करने वाले हैं। आप उस रथ के साथ हम याजकों की सुरक्षा करें ॥१४॥

अस्माकमुत्तमं कृधि श्रवो देवेषु सूर्य ।
वर्षिष्ठं द्यामिवोपरि ॥१५॥

सबके प्रेरक हे सूर्यदेव ! जिस तरह आपने अत्यधिक ओजस्वी द्युलोक की स्थापना ऊपर की है, उसी प्रकार देवताओं के बीच में हमारे यज्ञों को श्रेष्ठता प्रदान करें ॥१५॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ३२

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्र, २३-२४ इन्द्राश्वौ । छंद – गायत्री

आ तू न इन्द्र वृत्रहन्त्रस्माकमर्धमा गहि ।
महान्महीभिरूतिभिः ॥१॥

हे वृत्रहन्ता ! आप महान् बनकर, संरक्षण के विविध साधनों सहित
हमारे पास आएँ ॥१॥

भूमिश्चिद्घासि तूतुजिरा चित्र चित्रिणीष्वा ।
चित्रं कृणोष्यूतये ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आप पुरुषार्थ करने वाले तथा हमें समृद्ध करने वाले हैं।
हे अद्भुत शक्तिशाली इन्द्रदेव ! आप अद्भुत कर्म करने वाले
मनुष्यों को, सुरक्षा के लिए विलक्षण बल प्रदान करते हैं ॥२॥

दभ्रेभिश्चिच्छशीयांसं हंसि ब्राधन्तमोजसा ।



सखिभिर्ये त्वे सचा ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! जो याजक आपके साथ निवास करते हैं, उन थोड़े से मित्रों के सहयोग से आप उच्छंखलता बरतने वाले बड़े-बड़े रिपुओं को भी विनष्ट कर देते हैं ॥३॥

वयमिन्द्र त्वे सचा वयं त्वाभि नोनुमः ।
अस्मास्माँ इदुदव ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपके साथ निवास करते हैं तथा आपकी प्रार्थना करते हैं, अतः आप हमें विशेष रूप से संरक्षण प्रदान करें ॥४॥

स नश्चित्राभिरद्रिवोऽनवद्याभिरूतिभिः ।
अनाधृष्टाभिरा गहि ॥५॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप अनेक प्रकार के प्रार्थनीय तथा रिपुओं द्वारा परास्त न किये जाने योग्य रक्षण साधनों से सम्पन्न होकर हमारे समीप पधारें ॥५॥

भूयामो षु त्वावतः सखाय इन्द्र गोमतः ।
युजो वाजाय घृष्वये ॥६॥



हे इन्द्रदेव ! हम आपके समान गौओं से सम्पन्न व्यक्तियों के मित्र हों
। प्रचुर अन्न-धन के निमित्त हम आपके साथ मिलते हैं ॥६॥

त्वं ह्येक ईशिष इन्द्र वाजस्य गोमतः ।
स नो यन्धि महीमिषम् ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! गौओं (प्रकाशयुक्त किरणों) से पैदा हुए अन्न पर आप
अकेले ही शासन करते हैं, अतः आप हमें प्रचुर अन्न प्रदान करें ॥७॥

न त्वा वरन्ते अन्यथा यदित्ससि स्तुतो मघम् ।
स्तोतृभ्य इन्द्र गिर्वणः ॥८॥

हे प्रार्थनीय इन्द्रदेव ! जब आप प्रशंसित होकर स्तुति करने वालों को
ऐश्वर्य प्रदान करने की अभिलाषा करते हैं, तब कोई भी किसी तरह
आपको रोक नहीं सकता ॥८॥

अभि त्वा गोतमा गिरानूषत प्र दावने ।
इन्द्र वाजाय घृष्वये ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! ऋषि गौतम' अपनी प्रार्थनाओं के द्वारा आपको समृद्ध
करते हैं तथा श्रेष्ठ अन्न दान करने के निमित्त आपकी प्रार्थना करते हैं
॥९॥



प्र ते वोचाम वीर्या या मन्दसान आरुजः ।
पुरो दासीरभीत्य ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! सोमरस पान से हर्षित होकर अपने दासों की पुरियों पर चढ़ाई करके उन्हें विदीर्ण कर दिया; अतः हम आपके उस शौर्य का वर्णन करते हैं ॥१०॥

ता ते गृणन्ति वेधसो यानि चकर्थ पौंस्या ।
सुतेष्विन्द्र गिर्वणः ॥११॥

हे प्रशंसनीय इन्द्रदेव ! आपने जिस शौर्य को प्रकट किया। सोम रस तैयार होने पर ज्ञानी जन आपके उसे शौर्य की प्रशंसा करते हैं ॥११॥

अवीवृधन्त गोतमा इन्द्र त्वे स्तोमवाहसः ।
ऐषु धा वीरवद्यशः ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! प्रशंसा करने वाले 'गौतम ऋषि आपकी कीर्ति को समृद्ध करते हैं। इसलिए आप इन्हें सन्तानों से सम्पन्न करें तथा अन्न प्रदान करें ॥१२॥

यच्चिद्धि शश्वतामसीन्द्र साधारणस्त्वम् ।



तं त्वा वयं हवामहे ॥१३॥

हे इन्द्रदेव ! यद्यपि समस्त याजकों के लिए आप सहज उपलब्ध देव हैं, फिर भी हमें स्तुति करने वाले आपको विशेष रूप से आहूत करते हैं ॥१३॥

अर्वाचीनो वसो भवास्मे सु मत्स्वान्धसः ।
सोमानामिन्द्र सोमपाः ॥१४॥

सबको निवास प्रदान करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप सोमरस पान करने वाले हैं। आप हम याजकों के सम्मुख पधारें तथा सोमरस पान करके हर्षित हों ॥१४॥

अस्माकं त्वा मतीनामा स्तोम इन्द्र यच्छतु ।
अर्वागा वर्तया हरी ॥१५॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपकी स्तुति करने वाले हैं। हमारी स्तुतियाँ आपको हमारे समीप ले आँ। आप अपने अश्वों को हमारी ओर प्रेरित करें ॥१५॥

पुरोळाशं च नो घसो जोषयासे गिरश्च नः ।
वधूयुरिव योषणाम् ॥१६॥



हे इन्द्रदेव ! आप हमारे पुरोडाश रूपी अन्न का सेवन करें । जिस तरह स्त्री की अभिलाषा करने वाले पुरुष स्त्री के वचनों को ध्यानपूर्वक सुनते हैं, उसी प्रकार आप हमारी प्रार्थनाओं को सुनें ॥१६॥

सहस्रं व्यतीनां युक्तानामिन्द्रमीमहे ।
शतं सोमस्य खार्यः ॥१७॥

हम स्तुति करने वाले लोग द्रुतगामी, कुशल, शिक्षित तथा रिपुओं को परास्त करने वाले सहस्रों अश्वों को इन्द्रदेव से माँगते हैं। इसके अलावा सैकड़ों की संख्या में सोम की खारियों (कलशों) की याचना करते हैं ॥१७॥

सहस्रा ते शता वयं गवामा च्यावयामसि ।
अस्मन्ना राध एतु ते ॥१८॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपकी सैकड़ों तथा हजारों की संख्या वाली गौओं को आपसे प्राप्त करते हैं। आपका धन भी हमारे समीप आए ॥१८॥

दश ते कलशानां हिरण्यानामधीमहि ।



भूरिदा असि वृत्रहन् ॥१९॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपके स्वर्ण से पूर्ण दस कलशों को प्राप्त करते हैं । हे वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ! आप प्रचुर दान प्रदान करने वाले हैं ॥१९॥

भूरिदा भूरि देहि नो मा दभ्रं भूर्या भर ।
भूरि घेदिन्द्र दित्ससि ॥२०॥

प्रचुर दानदाता हे इन्द्रदेव ! आप हमें प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करें । आप हमें थोड़ा धन नहीं, वरन् विपुल धन प्रदान करें; क्योंकि आप प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करने की अभिलाषा करते हैं ॥२०॥

भूरिदा ह्यसि श्रुतः पुरुत्रा शूर वृत्रहन् ।
आ नो भजस्व राधसि ॥२१॥

हे वृत्रहन्ता, शूरवीर इन्द्रदेव ! आप अत्यधिक ऐश्वर्य प्रदाता के रूप में अनेकों मनुष्यों में प्रसिद्ध हैं। आप अपने ऐश्वर्य में हमें भागीदार बनाएँ ॥२१॥

प्र ते बभू विचक्षण शंसामि गोषणो नपात् ।
माभ्यां गा अनु शिश्रथः ॥२२॥



मेधावी तथा विनाशक हे इन्द्रदेव ! आप गौओं के पालन करने वाले हैं। हम आपके भूरे वर्ण के अश्वों की प्रशंसा करते हैं। इन अश्वों के द्वारा आप हमारी गौओं को नष्ट न करें ॥२२॥

कनीनकेव विद्रधे नवे द्रुपदे अभके ।
बभ्रू यामेषु शोभेते ॥२३॥

हे इन्द्रदेव ! आपके भूरे रंग के अश्व दृढ़ काष्ठ निर्मित कठपुतली की तरह (पूरी तरह नियंत्रित होकर) यज्ञ में शोभा पाते हैं ॥२३॥

अरं म उस्त्रयाम्णेऽरमनुस्त्रयाम्णे ।
बभ्रू यामेष्वसिधा ॥२४॥

हे इन्द्रदेव ! जब हम बैलों से युक्त रथ पर गमन करें या पैरों द्वारा गमन करें, तब आपके भूरे रंग के हिंसा रहित घोड़े हमारे लिए हितकारी हों ॥२४॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ३३

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – ऋभवः । छंद – त्रिष्टुप

प्र ऋभुभ्यो दूतमिव वाचमिष्य उपस्तिरे श्वेतरिं धेनुमीळे ।
ये वातजूतास्तरणिभिरेवैः परि द्यां सद्यो अपसो बभूवुः ॥१॥

जो ऋभुगण वायु के सदृश वेग वाले और उपकारजनक कर्म करने वाले हैं, जो अपने चतुर अश्वों के द्वारा शीघ्र ही धूलोक को परिव्याप्त करते हैं, उन ऋभुओं के निमित्त हम यजमान सन्देशवाहक के सदृश प्रार्थनाओं को प्रेरित करते हैं। सोमरस को उत्कृष्ट बनाने के लिए हम उनसे दुधारू गौओं की याचना करते हैं ॥१॥

यदारमक्रन्तृभवः पितृभ्यां परिविष्टी वेषणा दंसनाभिः ।
आदिद्देवानामुप सख्यमायन्धीरासः पुष्टिमवहन्मनायै ॥२॥

जब ऋभुओं ने अपने माता-पिता की परिचर्या करके अपनी महानता का परिचय दिया तथा श्रेष्ठ कर्मों के द्वारा स्वयं को बलशाली बनाया,



तब उन्होंने इन्द्र आदि देवताओं की बन्धुता को प्राप्त किया। उसके बाद उन मेधावी ऋभुओं ने अपने मन को भी बलशाली बनाया ॥२॥

पुनर्ये चक्रुः पितरा युवाना सना यूपेव जरणा शयाना ।
ते वाजो विभ्वाँ ऋभुरिन्द्रवन्तो मधुप्सरसो नोऽवन्तु यज्ञम् ॥३॥

उन ऋभुओं ने यूप के सदृश जीर्ण होकर लेटे हुए अपने माता-पिता को सदैव के लिए युवा बना दिया। इन्द्रदेव की अनुकम्पा से युक्त होकर तथा मधुर सोमरस पान करके वाज, विभु तथा ऋभु हमारे यज्ञ की सुरक्षा करें ॥३॥

यत्संवत्समृभवो गामरक्षन्त्यत्संवत्समृभवो मा अपिंशन् ।
यत्संवत्समभरन्भासो अस्यास्ताभिः शमीभिरमृतत्वमाशुः ॥४॥

उन ऋभुओं ने एक वर्ष पर्यन्त मरणासन्न गाय का पालन किया । उन्होंने एक वर्ष पर्यन्त उसे अवयवों से युक्त किया तथा उसे सौन्दर्य प्रदान किया। एक वर्ष पर्यन्त उन्होंने उसमें तेज स्थापित किया । इन सम्पूर्ण कार्यों के द्वारा उन्होंने अमरत्व को प्राप्त किया ॥४॥

ज्येष्ठ आह चमसा द्वा करेति कनीयान्त्रीन्कृणवामेत्याह ।
कनिष्ठ आह चतुरस्करेति त्वष्ट ऋभवस्तत्पनयद्वचो वः ॥५॥



ज्येष्ठ ऋभु ने कहा-हम एक चमस को दो भागों में करेंगे, उससे भी छोटे ऋभु ने कहा-हम चार भाग करेंगे। हे ऋभुगण ! त्वष्टा देवता ने आपके इन वचनों की प्रशंसा की ॥५॥

सत्यमूचुर्नर एवा हि चक्रुरनु स्वधामृभवो जग्मुरेताम् ।
विभ्राजमानाँश्चमसाँ अहेवावेनत्त्वष्टा चतुरो ददृश्वान् ॥६॥

मनुष्य रूपी ऋभुओं ने सच ही कहा था, क्योंकि उन्होंने जो कहा, वहीं किया था। उसके बाद ऋभुओं ने हव्य को ग्रहण किया। दिन की तरह तेजोयुक्त चार चमसों को त्वष्टादेव ने देखा और उन्हें प्रसन्नतापूर्वक स्वीकारा ॥६॥

द्वादश द्यून्यदगोह्यस्यातिथ्ये रणत्रृभवः ससन्तः ।
सुक्षेत्राकृण्वन्नयन्त सिन्धून्धन्वातिष्ठन्नोषधीर्निम्नमापः ॥७॥

जब ऋभुगणों ने छु (आकाश) के बारह प्रभागों (आर्द्रा आदि वर्षा कारक१२नक्षत्रों) में सुखपूर्वक निवास किया, तब उन्होंने खेतों को श्रेष्ठ बनाया और सरिताओं को प्रेरित किया। जलरहित स्थानों में ओषधियों को उत्पन्न किया तथा जलों को नीचे की तरफ प्रवाहित किया ॥७॥

रथं ये चक्रुः सुवृतं नरेष्ठां ये धेनुं विश्वजुवं विश्वरूपाम् ।



त आ तक्षन्वृभवो रयिं नः स्ववसः स्वपसः सुहस्ताः ॥८॥

जिन ऋभुओं ने भली-भाँति बँधे हुए तथा मनुष्यों के आरूढ़ होने योग्य रथ का निर्माण किया। जिन्होंने समस्त जगत् को प्रेरित करने वाली तथा अनेकों रूपों वाली गाय को उत्पन्न किया; वे सत्कर्म करने वाले, अन्नों वाले तथा श्रेष्ठ हाथ वाले ऋभुगण हमें धन प्रदान करें ॥८॥

अपो होषामजुषन्त देवा अभि क्रत्वा मनसा दीध्यानाः ।
वाजो देवानामभवत्सुकर्मेन्द्रस्य ऋभुक्षा वरुणस्य विभ्वा ॥९॥

देवताओं ने इन ऋभुओं के रथ निर्माण आदि कर्मों को वरदान के रूप में प्रसन्न हृदय से स्वीकारा । श्रेष्ठ कर्म करने वाले वाज देवताओं के प्रिय पात्र, बड़े ऋभु इन्द्रदेव के प्रियपात्र तथा विभु वरुणदेव के प्रियपात्र बने ॥९॥

ये हरी मेधयोक्था मदन्त इन्द्राय चक्रुः सुयुजा ये अश्वा ।
ते रायस्पोषं द्रविणान्यस्मे धत्त ऋभवः क्षेमयन्तो न मित्रम् ॥१०॥

जिन ऋभुओं ने उक्थों (स्तोत्रों) से हर्षित होकर अपनी प्रज्ञा के द्वारा दो अश्वों को बलिष्ठ किया था तथा जिन्होंने इन्द्रदेव के लिए सरलता से रथ में नियोजित होने वाले दो अश्वों को तैयार किया था, मित्र के



सदृश वे ऋभुगण कल्याण की कामना करने वाले हम मनुष्यों को
ऐश्वर्य पुष्टि तथा गौ आदि धन प्रदान करें ॥१०॥

इदाह्नः पीतिमुत वो मदं धुर्न ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवाः ।
ते नूनमस्मे ऋभवो वसूनि तृतीये अस्मिन्सवने दधात ॥११॥

हे ऋभुओ ! देवताओं ने आपको तीसरे सवन में सोमरस तथा हर्ष
प्रदान किया था । तप किये बिना देवतागण मित्रता नहीं करते । हे
ऋभुगण ! हम मनुष्यों को आप इस तीसरे सदन में निश्चित रूप से
ऐश्वर्य प्रदान करें ॥११॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ३४

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – ऋभवः । छंद – त्रिष्टुप

ऋभुर्विभा वाज इन्द्रो नो अच्छेमं यज्ञं रत्नधेयोप यात ।
इदा हि वो धिषणा देव्यह्वामधात्पीतिं सं मदा अगमता वः ॥१॥

हे ऋभु, विभु, वाज तथा इन्द्रदेवो ! हमें रत्न प्रदान करने के निमित्त आप सब हमारे यज्ञ मण्डप में पधारें। आज दिन में स्नेहपूर्वक स्तुतिगान करते हुए आप सबकी तृप्ति के लिए सोमरस प्रस्तुत किया गया है। ये हर्ष प्रदायक सोमरस आपके साथ संयुक्त हो ॥१॥

विदानासो जन्मनो वाजरत्ना उत ऋतुभिर्ऋभवो मादयध्वम् ।
सं वो मदा अगमत सं पुरंधिः सुवीरामस्मे रयिमेरयध्वम् ॥२॥

हे अन्न से सुशोभित ऋभुओ ! आप समस्त जीवों के जन्मों को जान करके सम्पूर्ण ऋतुओं में हर्ष प्राप्त करें । हर्ष प्रदायक सोमरस तथा श्रेष्ठ बुद्धि आपको हमेशा प्राप्त होती रहे । आप हमारी ओर श्रेष्ठ सन्तति से सम्पन्न ऐश्वर्य प्रेरित करें ॥२॥



अयं वो यज्ञ ऋभवोऽकारि यमा मनुष्वत्प्रदिवो दधिध्वे ।
प्र वोऽच्छा जुजुषाणासो अस्थुरभूत विश्वे अग्रियोत वाजाः ॥३॥

हे ऋभुगण ! यह यज्ञ आप सब के लिए किया गया है । आप ओजस्वी
व्यक्ति के समान इस यज्ञ को ग्रहण करें । हर्षित करने वाला सोमरस
आपकी ओर प्रेरित होता है । हे बलशाली ऋभुओ ! आप सब सर्वश्रेष्ठ
॥३॥

अभूदु वो विधते रत्नधेयमिदा नरो दाशुषे मर्त्याय ।
पिबत वाजा ऋभवो ददे वो महि तृतीयं सवनं मदाय ॥४॥

श्रेष्ठ नायक हे ऋभुगण ! आपका रत्न आदि धन, परिचर्या करने वाले
तथा आहुति प्रदान करने वाले यजमान के निमित्त हो । हे बलवान्
ऋभुगण ! हम आपको तृतीय सवन में, हर्षित होने के लिए प्रचुर
सोमरस प्रदान करते हैं। इसलिए आप सब उसे पान करें ॥४॥

आ वाजा यातोप न ऋभुक्षा महो नरो द्रविणसो गृणानाः ।
आ वः पीतयोऽभिपित्वे अह्वामिमा अस्तं नवस्व इव ग्मन् ॥५॥

हे बलवान् नायक ऋभुओ ! आप अत्यधिक ऐश्वर्यवान् के रूप में
विख्यात हैं । आप हमारे समीप पधारें। जिस प्रकार नव प्रसूता गौएँ



घर की तरफ गमन करती हैं, उसी प्रकार ये सोमरस आपकी तरफ आगमन करते हैं ॥५॥

आ नपातः शवसो यातनोपेमं यज्ञं नमसा हूयमानाः ।
सजोषसः सूरयो यस्य च स्थ मध्वः पात रत्नधा इन्द्रवन्तः ॥६॥

हे बलशाली ऋभुओ ! आप स्तुतियों द्वारा आवाहित होकर इस यज्ञ मण्डप में पधारें । आप इन्द्रदेव के मित्ररूप तथा मेधावान् हैं, क्योंकि आप सब उनके सम्बन्धी हैं । आप सब इन्द्रदेव के साथ संयुक्त होकर रत्न प्रदान करते हुए मधुर सोमरस का पान करें ॥६॥

सजोषा इन्द्र वरुणेन सोमं सजोषाः पाहिर्गिर्वणो मरुद्भिः ।
अप्रेपाभिर्ऋतुपाभिः सजोषा ग्रास्पत्नीभी रत्नधाभिः सजोषाः ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आप वरुणदेव के साथ तथा मरुद्गणों के साथ प्रेमपूर्वक सोमरस पान करें । सर्वप्रथम सोमरस पान करने वाले और ऋतुओं के अनुसार सोमरस पान करने वाले देवताओं के साथ तथा श्रेष्ठ धन को धारण करने वाली उनकी पत्नियों के साथ आप सोमरस पान करें ॥७॥

सजोषस आदित्यैर्मादयध्वं सजोषस ऋभवः पर्वतेभिः ।
सजोषसो दैव्येना सवित्रा सजोषसः सिन्धुभी रत्नधेभिः ॥८॥

हे ऋभुओ ! आप आदित्यों तथा पर्वतों के साथ प्रेमपूर्वक हर्षित हों ।
आप देवताओं के हितैषी सविता देवता तथा रत्न-प्रदाता सागरों के
साथ संगत होकर हर्षित हों ॥८॥

ये अश्विना ये पितरा य ऊती धेनुं ततक्षुर्ऋभवो ये अश्वा ।
ये अंसत्रा य ऋधग्नोदसी ये विभवो नरः स्वपत्यानि चक्रुः ॥९॥

जिन ऋभुओं ने अपने रक्षण साधनों से अश्विनीकुमारों को सक्षम
बनाया, अपने माता-पिता को तरुण बनाया, गौओं को दुधारू तथा
अश्वों को बलशाली बनाया, जिन्होंने कवचों को विनिर्मित किया,
द्यावा-पृथिवी को पृथक् किया तथा जिन बलशाली नायकों ने उत्तम
कर्मों को सम्पन्न किया, वे सर्वप्रथम सोम पान करने वाले हैं ॥९॥

ये गोमन्तं वाजवन्तं सुवीरं रयिं धत्त वसुमन्तं पुरुक्षुम् ।
ते अग्रेषा ऋभवो मन्दसाना अस्मे धत्त ये च रातिं गृणन्ति ॥१०॥

हे ऋभुओ ! आप गौओं, अश्वों तथा श्रेष्ठ पराक्रमी सन्तानों से सम्पन्न
द्रव्य तथा प्रचुर अन्न वाले ऐश्वर्य को धारण करते हैं। आपके ऐश्वर्य की
सब जगह प्रशंसा होती है। आप सर्वप्रथम सोम पान करके हर्षित
होकर हमें ऐश्वर्य प्रदान करें ॥१०॥



नापाभूत न वोऽतीतृषामानिःशस्ता ऋभवो यज्ञे अस्मिन् ।
समिन्द्रेण मदथ सं मरुद्भिः सं राजभी रत्नधेयाय देवाः ॥११॥

हे ऋभुओ ! आप सब हमसे दूर न जायें । हम भी आपको तृषित नहीं रखेंगे। हे ऋभुओ ! आप देवत्व से सम्पन्न होकर तथा आनन्दित होकर इन्द्रदेव के साथ इस यज्ञ में हर्षित हों । हे देवो ! रत्न दान के निमित्त आलोकमान मरुतों के साथ आप र्षित हों ॥११॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ३५

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – ऋभवः । छंद – त्रिष्टुप

इहोप यात शवसो नपातः सौधन्वना ऋभवो माप भूत ।
अस्मिन्हि वः सवने रत्नधेयं गमन्त्विन्द्रमनु वो मदासः ॥१॥

सुधन्वा के बलशाली पुत्र हे ऋभुओ ! आप हमारे समीप पधारें, हमसे दूर न जायें । इस यज्ञ मण्डप में रत्नप्रदाता इन्द्रदेव को प्रदान किया जाने वाला हर्षकारक सोमरस आपको भी प्राप्त हो ॥१॥

आगन्तृभूणामिह रत्नधेयमभूत्सोमस्य सुषुतस्य पीतिः ।
सुकृत्यया यत्स्वपस्यया चैकं विचक्र चमसं चतुर्धा ॥२॥

हे ऋभुओ ! आपका रत्न आदि दान हमारे समीप आए। आप भली प्रकार अभिषुत सोमरस का पान करते रहें, क्योंकि आपने अपने कौशल तथा कर्म की इच्छा द्वारा एक चमस को चार प्रकार से विनिर्मित किया है ॥२॥



व्यकृणोत चमसं चतुर्धा सखे वि शिक्षेत्यब्रवीत ।
अथैत वाजा अमृतस्य पन्थां गणं देवानामृभवः सुहस्ताः ॥३॥

हे ऋभुओ ! आपने एक चमस को चार प्रकार से बनाया था तथा कहा था-हे मित्र (अग्नि) देव ! आप कृपा करें । (तब अग्नि ने उत्तर दिया) हे ऋभुओ ! आप अविनाशी पथ पर गमन करें । आप कुशल हाथ वाले हैं। आप देव पथ पर चलते हुए अमरता प्राप्त करें ॥३॥

किम्मयः स्विच्चमस एष आस यं काव्येन चतुरो विचक्र ।
अथा सुनुध्वं सवनं मदाय पात ऋभवो मधुनः सोम्यस्य ॥४॥

हे ऋभुओ ! जिस चमस को आपने अपने कौशल द्वारा चार प्रकार का बनाया, वह चमस किस वस्तु से विनिर्मित था । हे ऋत्विजो ! हर्षित होने के लिए आप सब सोमरस अभिषुत करें । हे ऋभुओ ! आप सब मधुर सोमरस का पान करें ॥४॥

शच्याकर्त पितरा युवाना शच्याकर्त चमसं देवपानम् ।
शच्या हरी धनुतरावतष्टेन्द्रवाहावृभवो वाजरत्नाः ॥५॥

हे ऋभुओ ! आपने कर्म-कौशल के द्वारा अपने माता-पिता को युवा बनाया तथा चमस को देवताओं के पीने योग्य बनाया। रमणीय ऐश्वर्य



वाले हे ऋभुओ ! आपने अपने कौशल के द्वारा इन्द्रदेव को वहन करने वाले अश्वों को बाण से भी ज्यादा वेगवान् बनाया ॥५॥

यो वः सुनोत्यभिपित्वे अह्नां तीव्रं वाजासः सवनं मदाय ।
तस्मै रयिमृभवः सर्ववीरमा तक्षत वृषणो मन्दसानाः ॥६॥

हे ऋभुओ ! आप सब अन्न से सम्पन्न हैं। दिन के अवसान काल में याजकगण आपको आनन्द प्रदान करने के लिए सोमरस अभिषुत करते हैं । हे बलशाली ऋभुओ ! आप हर्षित होकर उन याजकों को हर प्रकार से पराक्रमी, उत्तम सन्तानों से सम्पन्न ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥६॥

प्रातः सुतमपिबो हर्यश्व माध्यंदिनं सवनं केवलं ते ।
समृभिः पिबस्व रत्नधेभिः सखीर्याँ इन्द्र चकृषे सुकृत्या ॥७॥

श्रेष्ठ अश्वों से सुशोभित हे इन्द्रदेव ! आप प्रातः काल अभिषुत किये गये सोमरस का पान करें । मध्याह्न काल का सोमरस भी आपके निमित्त ही है । हे इन्द्रदेव ! उत्तम कार्य करते हुए आपने जिन रत्न-प्रदाता ऋभुओं से मित्रता स्थापित की है, उनके साथ सोमरस का पान करें ॥७॥

ये देवासो अभवता सुकृत्या श्येना इवेदधि दिवि निषेद ।



ते रत्नं धातु शवसो नपातः सौधन्वना अभवतामृतासः ॥८॥

हे ऋभुओ ! आप सत्कर्म करने के कारण देवता बने हैं। अमरत्व प्रदान करने वाले हे सुधन्वा के पुत्रों ! आप श्येन पक्षी के समान द्युलोक में प्रतिष्ठित हों तथा सभी प्रकार से धन-ऐश्वर्य प्रदान करें ॥८॥

यत्तृतीयं सवनं रत्नधेयमकृणुध्वं स्वपस्या सुहस्ताः ।
तदभवः परिषिक्तं व एतत्सं मदेभिरिन्द्रियेभिः पिबध्वम् ॥९॥

श्रेष्ठ हाथों वाले हे ऋभुओ ! आपने तृतीय सवन को अपने सत्कर्मों के द्वारा ऐश्वर्य प्रदान करने वाला बनाया है । हे ऋभुओ ! हर्षित इन्द्रियों के साथ अभिषुत सोमरस को आप ग्रहण करें ॥९॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ३६

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – ऋभवः । छंद –जगती, ९ त्रिष्टुप

अनश्वो जातो अनभीशुरुक्थ्यो रथस्त्रिचक्रः परि वर्तते रजः ।
महत्तद्वो देव्यस्य प्रवाचनं द्यामृभवः पृथिवीं यच्च पुष्यथ ॥१॥

हे भुओ ! आप लोगों का कार्य प्रशंसनीय है। आपके द्वारा अश्विनीकुमारों को प्रदान किये गये तीन पहियों वाले रथ, अश्वों तथा लगाम के बिना ही आकाश में चारों तरफ विचरण करते हैं। उस रथ के माध्यम से आप द्यावा-पृथिवी का पोषण करते हैं । यह महान् कार्य आपकी दिव्यता का परिचायक है ॥१॥

रथं ये चक्रुः सुवृतं सुचेतसोऽविहरन्तं मनसस्परि ध्याया ।
ताँ ऊ न्वस्य सवनस्य पीतय आ वो वाजा ऋभवो वेदयामसि ॥२॥

श्रेष्ठ अन्तःकरण वाले हे ऋभुओ ! आपने मन के संकल्प द्वारा भली-भाँति घूमने वाले कुटिलतारहित रथ को विनिर्मित किया था। हे



वाजगण तथा ऋभुगण ! हम सोमरस पीने के लिए आप लोगों को आमन्त्रित करते हैं ॥२॥

तद्वो वाजा ऋभवः सुप्रवाचनं देवेषु विभ्वो अभवन्महित्वनम् ।
जिब्री यत्सन्ता पितरा सनाजुरा पुनर्युवाना चरथाय तक्षथ ॥३॥

हे वाजगण ! हे ऋभुगण ! तथा हे विभुगण ! आपने अपने अत्यधिक वृद्ध तथा जीर्ण माता-पिता को चलने-फिरने के लिए पुनः युवा बना दिया था।आपका वह महान् कार्य देवताओं के बीच अत्यन्त प्रशंसनीय हुआ ॥३॥

एकं वि चक्र चमसं चतुर्वयं निश्चर्मणो गामरिणीत धीतिभिः ।
अथा देवेष्वमृतत्वमानश श्रुष्टी वाजा ऋभवस्तद्व उक्थ्यम् ॥४॥

हे ऋभुओ ! आपने एक चमस को चार हिस्सों में विभाजित किया था तथा अपने कार्यों के द्वारा केवल चमड़े वाली गौ को बलिष्ठ किया था। इसलिए आप लोगों ने देवताओं के बीच में अमरता को प्राप्त किया। हे वाजगण तथा ऋभुगण ! आपके वे कार्य अतिप्रशंसनीय हैं ॥४॥

ऋभुतो रयिः प्रथमश्रवस्तमो वाजश्रुतासो यमजीजनन्नरः ।
विभ्वतष्टो विदथेषु प्रवाच्यो यं देवासोऽवथा स विचर्षणिः ॥५॥



वाजगण तथा प्रसिद्ध नायक ऋभुओं ने जिस ऐश्वर्य को पैदा किया था, वह प्रचुर अन्न रूप ऐश्वर्य उनके द्वारा हमें प्राप्त हो । युद्ध में ऋभुओं द्वारा विनिर्मित रथ विशेष रूप से प्रशंसा के योग्य होता है । हे देवताओ ! आप लोग जिसको संरक्षण प्रदान करते हैं, वह प्रख्यात होता है ॥५॥

स वाज्यर्वा स ऋषिर्वचस्यया स शूरो अस्ता पृतनासु दुष्टरः ।
स रायस्पोषं स सुवीर्यं दधे यं वाजो विभ्वाँ ऋभवो यमाविषुः ॥६॥

वाजगण, विभुगण तथा ऋभुगण जिसे मनुष्य को संरक्षण प्रदान करते हैं, वह बलशाली होकर युद्ध में कुशल होता है, मन्त्र द्रष्टा ऋषि होकर प्रशंसनीय होता है, पराक्रमी होकर आयुध फेंकने वाला होता है तथा संग्राम में अपराजेय होता है, वह मनुष्य ऐश्वर्य, पुष्टि तथा श्रेष्ठ पराक्रम को धारण करता है ॥६॥

श्रेष्ठं वः पेशो अधि धायि दर्शतं स्तोमो वाजा ऋभवस्तं जुजुष्टन ।
धीरासो हि ष्ठा कवयो विपश्चितस्तान्व एना ब्रह्मणा वेदयामसि ॥७॥

हे वाजगण तथा है ऋभुगण ! आप लोग श्रेष्ठ तथा देखने योग्य रूप धारण करते हैं। हमने आपके लिए स्तोत्र की रचना की है, आप उसे ग्रहण करें । आप लोग धैर्यवान्, दूरदर्शी तथा मेधावी हैं । हम अपने स्तोत्रों द्वारा आपको आहूत करते हैं ॥७॥



यूयमस्मभ्यं धिषणाभ्यस्परि विद्वांसो विश्वा नर्याणि भोजना ।
द्युमन्तं वाजं वृषशुष्ममुत्तममा नो रयिमृभवस्तक्षता वयः ॥८॥

हे भुगण ! आप ज्ञान से सम्पन्न होकर हमारी आशा से भी अधिक,
मनुष्यों के लिए हितकारिणी सम्पत्ति हमें प्रदान करें। आप लोग
हमारे लिए दीप्तिमान् ऐश्वर्य से युक्त अधिकार, श्रेष्ठ अन्न-धन तथा
बल प्रदान करें ॥८॥

इह प्रजामिह रयिं रराणा इह श्रवो वीरवत्तक्षता नः ।
येन वयं चितयेमात्यन्यान्तं वाजं चित्रमृभवो ददा नः ॥९॥

हे ऋभुगण ! आप लोग हमारे इस यज्ञ में हर्षित होकर हमें संतान,
ऐश्वर्य तथा पराक्रम देने वाला अन्न प्रदान करें । हमें ऐसा श्रेष्ठ अन्न
प्रदान करें , जिससे हम लोग दूसरों से आगे बढ़ सकें ॥९॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ३७

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – ऋभवः । छंद – त्रिष्टुप ५-८ अनुष्टुप

उप नो वाजा अध्वरमृभुक्षा देवा यात पथिभिर्देवयानैः ।
यथा यज्ञं मनुषो विक्षासु दधिध्वे रण्वाः सुदिनेष्वह्नाम् ॥१॥

हे मनोहर ऋभुगण ! आप जिस प्रकार दिनों की श्रेष्ठता प्रदान करने के लिए याजकों के यज्ञों को धारण, करते हैं। उसी प्रकार देवताओं के मार्गों द्वारा आप हमारे यज्ञ में पधारें ॥१॥

ते वो हृदे मनसे सन्तु यज्ञा जुष्टासो अद्य घृतनिर्णिजो गुः ।
प्र वः सुतासो हरयन्त पूर्णाः क्रत्वे दक्षाय हर्षयन्त पीताः ॥२॥

आज आपके मन तथा हृदय को ये यज्ञ, हर्ष प्रदान करने वाले हों । घृत मिला हुआ प्रचुर सोमरस आपकी ओर गमन करे । उत्साह से पूर्ण अभिषुत सोमरस आपकी अभिलाषा करता है । सोमरस पीकर आप सत्कर्म करने की स्फूर्ति प्राप्त करें ॥२॥

त्र्युदायं देवहितं यथा वः स्तोमो वाजा ऋभुक्षणो ददे वः ।
जुह्वे मनुष्वदुपरासु विक्षु युष्मे सचा बृहद्विवेषु सोमम् ॥३॥

हे वाजगण तथा ऋभुगण ! जिस प्रकार आपको स्तुतियाँ समर्पित की जाती हैं, उसी प्रकार हम आपके लिए, तीनों सवनों में अभिषुत किया जाने वाला तथा देवताओं का कल्याण करने वाला सोमरस समर्पित करते हैं। श्रेष्ठ मनुष्यों के बीच तेजस्वी जीवन जीने वाले हम आपके लिए सोमरस प्रदान करते हैं ॥३॥

पीवोअश्वाः शुचद्रथा हि भूतायःशिप्रा वाजिनः सुनिष्काः ।
इन्द्रस्य सूनो शवसो नपातोऽनु वश्चेत्यग्रियं मदाय ॥४॥

हे ऋभुओ ! आप बलिष्ठ अश्वों वाले, तेजोयुक्त रथों वाले तथा लौह-कवचों को धारण करने वाले हैं। आप अन्नवान् तथा श्रेष्ठ धन वाले हैं। इन्द्रदेव के पुत्र तथा बल से उत्पन्न हे ऋभुओ ! आप सबके हर्ष के लिए यह उत्तम सोमरस प्रदान किया जाता है ॥४॥

ऋभुमृभुक्षणो रयिं वाजे वाजिन्तमं युजम् ।
इन्द्रस्वन्तं हवामहे सदासातममश्विनम् ॥५॥



हे ऋभुओ ! हम अत्यधिक संवर्धनशील ऐश्वर्य की आवाहन करते हैं, युद्ध में अत्यधिक बलशाली संरक्षक का आवाहन करते हैं तथा हमेशा उदार, इन्द्रदेव के प्रिय, श्रेष्ठ अश्वों वाले आपके गणों का आवाहन करते हैं ॥५॥

सेद्वभवो यमवथ यूयमिन्द्रश्च मर्त्यम् ।
स धीभिरस्तु सनिता मेधसाता सो अर्वता ॥६॥

हे ऋभुओ ! आप तथा इन्द्रदेव जिस व्यक्ति को संरक्षण प्रदान करते हैं, वही व्यक्ति महान् होता है । वही व्यक्ति अपने कर्मों द्वारा धन का भागीदार तथा यज्ञों में अश्वों से सम्पन्न होता है ॥६॥

वि नो वाजा ऋभुक्षणः पथश्चितन यष्टवे ।
अस्मभ्यं सूरयः स्तुता विश्वा आशास्तरीषणि ॥७॥

हे वाजगण तथा ऋभुगण ! आप हमारे लिए सत्कर्म करने (यज्ञ) का श्रेष्ठ मार्ग प्रशस्त करें । हे ज्ञानियो ! आप लोग प्रशंसित होकर सम्पूर्ण दिशाओं में सफलतापूर्वक आगे बढ़ने के लिए हमें मार्ग दिखायें ॥७॥

तं नो वाजा ऋभुक्षण इन्द्र नासत्या रयिम् ।
समश्वं चर्षणिभ्य आ पुरु शस्त मघत्तये ॥८॥



हे वागण ! हे ऋभुगण ! हे अश्विनीकुमारो तथा हे इन्द्रदेव ! आप सब हम स्तोताओं को प्रचुर ऐश्वर्य तथा अश्वों (शक्ति) की प्राप्ति के लिए आशीर्वाद प्रदान करें ॥८॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ३८

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – दधिक्रा, १ द्यावा पृथ्वी । छंद – त्रिष्टुप

उतो हि वां दात्रा सन्ति पूर्वा या पूरुभ्यस्त्रसदस्युर्नितोशे ।
क्षेत्रासां ददथुरुर्वरासां घनं दस्युभ्यो अभिभूतिमुग्रम् ॥१॥

हे द्यावा-पृथिवि ! दान दाता त्रसदस्यु ने याजकों को जो सम्पत्ति प्रदान की, वह आपका ही वैभव है । आपने ही उन्हें जमीन जोतने वाले अश्व तथा जमीन को उर्वर बनाने वाले पुत्र प्रदान किये थे। आपने उन्हें (रिपुओं को) पराभूत करने वाले तीक्ष्ण हथियार प्रदान किये थे ॥१॥

उत वाजिनं पुरुनिषिध्वानं दधिक्रामु ददथुर्विश्वकृष्टिम् ।
ऋजिष्यं श्येनं प्रुषितप्सुमाशुं चर्कृत्यमर्यो नृपतिं न शूरम् ॥२॥

शक्तिशाली, अनेकों रिपुओं के संहारक, समस्त मनुष्यों के हितकारक, श्येन पक्षी के सदृश सरलगामी, ओजस्वी रूप वाले,



महान् लोगों के द्वारा प्रशंसनीय, राजा के सदृश शूरवीर, द्रुत गति से गमन करने वाले दधिक्रा देवता (अश्वरूपी अग्नि) को ये द्यावा-पृथिवी धारण करते हैं ॥२॥

यं सीमनु प्रवतेव द्रवन्तं विश्वः पूरुर्मदति हर्षमाणः ।
पड्भिर्गृध्यन्तं मेधयुं न शूरं रथतुरं वातमिव ध्रजन्तम् ॥३॥

समस्त मनुष्य बलिष्ठ होकर जिन दधिक्रादेव की प्रार्थना करते हैं, वे नीचे बहने वाले जल के समान गमनशील, युद्ध की कामना करने वाले, शूरवीर के समान पैर के द्वारा समस्त दिशाओं को लाँघने की कामना करने वाले तथा वायु के समान द्रुतगामी हैं ॥३॥

यः स्मारुन्धानो गध्या समत्सु सनुतरश्चरति गोषु गच्छन् ।
आविर्ऋजीको विदथा निचिक्वत्तिरो अरतिं पर्याप आयोः ॥४॥

जो देव संग्राम में एकत्रित पदार्थों को अवरुद्ध करते हैं तथा महान् ऐश्वर्य से सम्पन्न होते हैं, जो समस्त दिशाओं में गमन करते हुए तीव्र गति से सब जगह व्याप्त होते हैं तथा अपने आयुधों को प्रकट करके संग्राम में विख्यात होते हैं, वे दधिक्रादेव हमारे रिपुओं को हमसे दूर करते हैं ॥४॥

उत स्मैनं वस्त्रमथिं न तायुमनु क्रोशन्ति क्षितयो भरेषु ।



नीचायमानं जसुरिं न श्येनं श्रवश्चाच्छा पशुमच्च यूथम् ॥५॥

जिस प्रकार वस्त्राभूषण चुराने वाले तस्कर को देखकर सभी चीत्कार करते हैं, उसी प्रकार युद्ध में दधिक्रादेव को देखकर रिपुगण चीत्कार करने लगते हैं । जिस प्रकार नीचे की ओर झपट्टा मारते हुए श्येन (बाज़ पक्षी) को देखकर पक्षीगण भाग जाते हैं, उसी प्रकार अन्न तथा पशु समूह की तरफ सीधे गमन करने वाले दधिक्रादेव को देखकर समस्त रिपुगण भागने लगते हैं ॥५॥

उत स्मासु प्रथमः सरिष्यन्नि वेवेति श्रेणिभी रथानाम् ।
सजं कृण्वानो जस्यो न शुभ्वा रेणुं रेरिहत्किरणं ददश्वान् ॥६॥

वे दधिक्रादेव, रिपु-सेनाओं के मध्य जाने की कामना से रथों की पंक्तियों से सम्पन्न हैं। जिस प्रकार महत्वाकांक्षी लोग अपने शरीर को मालाओं से अलंकृत करते हैं, उसी प्रकार मालाओं को पहनकर अत्यधिक मनोहर लगने वाले दधिक्रादेव, लगाम को दाँतों से खींचते हुए धूल-धूसरित हो जाते हैं ॥६॥

उत स्य वाजी सहुरिर्ऋतावा शुश्रूषमाणस्तन्वा समर्ये ।
तुरं यतीषु तुरयन्त्रजिप्योऽधि भ्रुवोः किरते रेणुमृञ्जन् ॥७॥



वे बलशाली, संग्राम में रिपुओं का संहार करने वाले, अनुशासन पालने वाले, अपने को चाटकर शरीर की परिचर्या करने वाले, द्रुतगति से गमन करने वाली सैनाओं पर चढ़ाई करने वाले तथा ऋजु मार्ग से गमन करने वाले हैं। वे दधिक्रादेव पैरों से धूलि को उड़ाकरके अपनी भौहों के ऊपर फैलाते हैं ॥७॥

उत स्मास्य तन्यतोरिव द्योर्ऋघायतो अभियुजो भयन्ते ।
यदा सहस्रमभि षीमयोधीदुर्वर्तुः स्मा भवति भीम ऋञ्जन् ॥८॥

तेजस्वी तथा ध्वनि करने वाले, वज्र के समान शत्रुओं की हिंसा करने वाले दधिक्रादेव से युद्ध की अभिलाषा करने वाले मनुष्य भयभीत होते हैं। जब वे चारों तरफ सहस्रों रिपुओं से लड़ते हैं, तब उत्तेजित होकर भयंकर तथा अजेय हो जाते हैं ॥८॥

उत स्मास्य पनयन्ति जना जूतिं कृष्टिप्रो अभिभूतिमाशोः ।
उतैनमाहुः समिथे वियन्तः परा दधिक्रा असरत्सहस्रैः ॥९॥

मनुष्यों की अभिलाषाओं को पूर्ण करने वाले तथा तीव्र वेग वाले दधिक्रादेव के, शौर्य व गति की मनुष्यगण प्रार्थना करते हैं। संग्राम में जाने वाले योद्धा इनके बारे में कहते हैं कि ये दधिक्रादेव सहस्रों रिपुओं को भी पराभूत करके आगे बढ़ जाते हैं ॥९॥



आ दधिक्राः शवसा पञ्च कृष्टीः सूर्य इव ज्योतिषापस्ततान ।
सहस्रसाः शतसा वाज्यर्वा पृणक्तु मध्वा समिमा वचांसि ॥१०॥

जिस प्रकार आदित्यगण अपने तेज के द्वारा आकाश को व्याप्त कर देते हैं, उसी प्रकार दधिक्रादेव अपने तेज के द्वारा पाँचों प्रकार के मनुष्यों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और निषाद) को व्याप्त कर देते हैं । शत तथा सहस्र प्रकार के ऐश्वर्यों को प्रदान करने वाले बलशाली दधिक्रादेव, हमारी स्तुतियों को मधुरता (मधुर प्रतिफल) से संयुक्त करें ॥१०॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ३९

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – दधिक्रा, । छंद – त्रिष्टुप, ६ अनुष्टुप

आशुं दधिक्रां तमु नु ष्टवाम दिवस्पृथिव्या उत चर्किराम ।
उच्छन्तीर्मांमुषसः सूदयन्त्वति विश्वानि दुरितानि पर्षन् ॥१॥

उन द्रुतगामी दधिक्रादेव की हम लोग प्रार्थना करेंगे और द्यावा-
पृथिवी की भी प्रार्थना करेंगे। तम का निवारण करने वाली उषाएँ हमें
उत्साहित करें तथा समस्त विपत्तियों से हमें पार करें ॥१॥

महश्चर्कर्म्यर्वतः क्रतुप्रा दधिक्राव्णः पुरुवारस्य वृष्णः ।
यं पूरुभ्यो दीदिवांसं नाग्निं ददधुर्मित्रावरुणा ततुरिम् ॥२॥

हम यज्ञ सम्पन्न करने वाले हैं। अनेकों के द्वारा वरण करने योग्य,
महान् तथा अभीष्ट की वर्षा करने वाले दधिक्रादेव की हम प्रार्थना
करते हैं। हे मित्रावरुण ! आप दोनों तेजस्वी अग्नि के सदृश स्थित



तथा विपत्तियों से पार लगाने वाले दधिक्रादेव को याजकों के कल्याण के लिए धारण करते हैं ॥२॥

यो अश्वस्य दधिक्राव्णो अकारीत्समिद्धे अग्रा उषसो व्युष्टौ ।
अनागसं तमदितिः कृणोतु स मित्रेण वरुणेना सजोषाः ॥३॥

जो मनुष्य उषा के प्रकट होने पर तथा अग्नि के प्रदीप्त होने पर अश्वरूप दधिक्रादेव की प्रार्थना करते हैं । ऐसे मनुष्य को मित्र, वरुण तथा अदिति के साथ दधिक्रादेव पाप रहित करें ॥३॥

दधिक्राव्ण इष ऊर्जो महो यदमन्महि मरुतां नाम भद्रम् ।
स्वस्तये वरुणं मित्रमग्निं हवामह इन्द्रं वज्रबाहुम् ॥४॥

हम अन्न-प्रदाता, बल-प्रदाता, श्रेष्ठ तथा याजकों का हित करने वाले दधिक्रादेव तथा मरुतों के नाम की प्रार्थना करते हैं । मित्र, वरुण, अग्नि तथा हाथ में वज्र धारण करने वाले इन्द्रदेव को हम आहूत करते हैं ॥४॥

इन्द्रमिवेदुभये वि ह्वयन्त उदीराणा यज्ञमुपप्रयन्तः ।
दधिक्रामु सूदनं मर्त्याय ददथुर्मित्रावरुणा नो अश्वम् ॥५॥



जो मनुष्य युद्ध करने के लिए पराक्रम करते हैं तथा जो यज्ञ करने के लिए प्रयत्न करते हैं। वे दोनों ही दधिक्रादेव को इन्द्रदेव के समान आवाहित करते हैं। हे मित्रावरुण ! आपने मनुष्यों को प्रेरित करने वाले द्रुतगामी अश्वरूप दधिक्रादेव को हमारे लिए धारण किया ॥५॥

दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः ।
सुरभि नो मुखा करत्प्र ण आयूंषि तारिषत् ॥६॥

हम विजय से सम्पन्न, व्यापक तथा वेगवान् दधिक्रादेव की प्रार्थना करते हैं। वे हमारी मुख आदि इन्द्रियों को सुरभित (श्रेष्ठ) बनायें तथा हमारी आयु की वृद्धि करें ॥६॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ४०

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – दधिक्रा, ५ सूर्य । छंद – जगती, १ त्रिष्टुप

दधिक्राव्ण इदु नु चर्किराम विश्वा इन्मामुषसः सूदयन्तु ।
अपामग्रेरुषसः सूर्यस्य बृहस्पतेराङ्गिरसस्य जिष्णोः ॥१॥

हम दधिक्रादेव की बार-बार प्रार्थना करेंगे । समस्त उषाएँ हमें प्रेरणा प्रदान करें । हम जल, अग्नि, सूर्य, उषा, बृहस्पति तथा आंगिरस जिष्णु की प्रार्थना करेंगे ॥१॥

सत्वा भरिषो गविषो दुवन्यसच्छ्रवस्यादिष उषसस्तुरण्यसत् ।
सत्यो द्रवो द्रवरः पतंगरो दधिक्रावेषमूर्जं स्वर्जनत् ॥२॥

शक्तिशाली, भरण-पोषण करने वाले, गौओं को प्रेरित करने वाले, भक्तों के बीच में निवास करने वाले तथा द्रुतगति से गमन करने वाले दधिक्रादेव, उषाकाल में अन्न की कामना करें । सत्यगमनशील, वेगवाले, दूसरों को भी वेग प्रदान करने वाले तथा उछलते हुए गमन



करने वाले दधिक्रादेव हमारे निमित्त अन्न, बल तथा हर्ष पैदा करें
॥२॥

उत स्मास्य द्रवतस्तुरण्यतः पर्णं न वेरनु वाति प्रगर्धिनः ।
श्येनस्येव ध्रजतो अङ्गसं परि दधिक्राव्यः सहोर्जा तरित्रतः ॥३॥

जिस प्रकार पक्षियों का अनुगमन उनके पंख करते हैं, उसी प्रकार गमन करने वाले, वेगपूर्वक भागने वाले तथा प्रतिस्पर्धा करने वाले दधिक्रादेव का अनुगमन मनुष्य करते हैं। बाज़ पक्षी के समान गमन करने वाले तथा सुरक्षा करने वाले दधिक्रादेव के शरीर को एकत्र होकर अन्नादि के लिए सब लोग घेर लेते हैं ॥३॥

उत स्य वाजी क्षिपणिं तुरण्यति ग्रीवायां बद्धो अपिकक्ष आसनि ।
क्रतुं दधिक्रा अनु संतवीत्वत्पथामङ्गांस्यन्वापनीफणत् ॥४॥

वे दधिक्रादेव बलशाली अश्व की तरह काँख तथा मुँह से बँधे होने पर भी अपने रिपुओं की ओर तीव्र गति से गमन करते हैं। वे अत्यधिक शक्तिशाली होकर यज्ञों का अनुगमन करके, कुटिल मार्गों को पार कर जाते हैं ॥४॥

हंसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्भोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत् ।
नृषद्वरसदृतसद्योमसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतम् ॥५॥



हंस (सूर्य) तेजोमय आकाश में एवं वसु (वायु) अन्तरिक्ष में अवस्थित हैं। होता (अग्नि) वेदिका पर अतिथि की तरह पूज्य होकर घरों में वास करते हैं। ऋत (सत्य या ब्रह्म) का वास मनुष्यों, वरणीय स्थानों, यज्ञस्थल एवं अन्तरिक्ष में होता है। वे जल में, रश्मियों में, सत्य एवं पर्वतों में उत्पन्न हुए हैं ॥५॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ४१

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्रावरुणौ । छंद – त्रिष्टुप

इन्द्रा को वां वरुणा सुम्रमाप स्तोमो हविष्माँ अमृतो न होता ।
यो वां हृदि क्रतुमाँ अस्मदुक्तः पस्पर्शदिन्द्रावरुणा नमस्वान् ॥१॥

हे इन्द्र तथा वरुणदेवो ! हमारे द्वारा विवेकपूर्वक तथा विनम्रतापूर्वक
उच्चारित किया हुआ कौन-सा स्तोत्र हैं, जो आपके हृदय को स्पर्श
कर सके? हे इन्द्र तथा वरुण देवो ! अविनाशी तथा आहुति से सम्पन्न
अग्नि के सदृश प्रदीप्त वह स्तोत्र आपके अन्तः स्थल में प्रवेश करे
॥१॥

इन्द्रा ह यो वरुणा चक्र आपी देवौ मर्तः सख्याय प्रयस्वान् ।
स हन्ति वृत्रा समिथेषु शत्रूनवोभिर्वा महद्भिः स प्र शृण्वे ॥२॥

जो व्यक्ति आहुति से सम्पन्न होकर इन्द्र तथा वरुण दोनों देवताओं
की मित्रता को प्राप्त करने के लिए उनको अपना बन्धु बनाता है, वह



व्यक्ति अपने पापों को विनष्ट करता है, युद्ध में रिपुओं का विनाश करता है तथा महान् सुरक्षा प्राप्त करने के कारण विख्यात होता है ॥२॥

इन्द्रा ह रत्नं वरुणा धेष्ठेत्था नृभ्यः शशमानेभ्यस्ता ।
यदी सखाया सख्याय सोमैः सुतेभिः सुप्रयसा मादयैते ॥३॥

हे विख्यात इन्द्र तथा वरुणदेवो ! आप दोनों देव, हम स्तोता मनुष्यों के निमित्त मनोहर ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हों । यदि आप दोनों परस्पर मित्र हैं और मित्रता के लिए अभिषुत सोमरस तथा उत्तम अन्नों से हर्षित हैं, तो हमें ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हों ॥३॥

इन्द्रा युवं वरुणा दिद्युमस्मिन्नोजिष्ठमुग्रा नि वधिष्टं वज्रम् ।
यो नो दुरेवो वृकतिर्दभीतिस्तस्मिन्मिमाथामभिभूत्योजः ॥४॥

हे पराक्रमी इन्द्र तथा वरुणदेवो ! जो हमारे अकल्याण करने वाले अदाता तथा हिंसक हैं; आप दोनों अपने विनाशकारी तेज को उन पर प्रकट करें। आप दोनों इस शत्रु के ऊपर अपने तेजस्वी तथा अत्यधिक ओजस्वी वज्र से प्रहार करें ॥४॥

इन्द्रा युवं वरुणा भूतमस्या धियः प्रेतारा वृषभेव धेनोः ।
सा नो दुहीयद्यवसेव गत्वी सहस्रधारा पयसा मही गौः ॥५॥

हे इन्द्र तथा वरुणदेवो ! जिस प्रकार वृषभ गाय से प्रीति करते हैं, उसी प्रकार आप दोनों हमारी प्रार्थनाओं के प्रेमी हों । जैसे एक महान् गाय घास आदि खाकर सहस्र धाराओं वाले दुग्ध को दोहन के लिए प्रस्तुत रहती है, उसी प्रकार वे प्रार्थनाएँ हमारी अभिलाषाओं को पूर्णता प्रदान करें ॥५॥

तोके हिते तनय उर्वरासु सूरौ दृशीके वृषणश्च पौंस्ये ।
इन्द्रा नो अत्र वरुणा स्यातामवोभिर्दस्मा परितक्म्यायाम् ॥६॥

हे इन्द्र और वरुणदेवो ! आप अपने रक्षण-साधनों से सम्पन्न होकर रिपुओं का विनाश करने के लिए रात्रि में भी तैयार रहें, जिससे हम लोग पुत्र-पौत्र और उपजाऊ जमीन से लाभान्वित हो सकें । लम्बे समय तक सूर्यदेव का दर्शन कर सकें तथा सन्तान उत्पन्न करने की सामर्थ्य प्राप्त कर सकें ॥६॥

युवामिद्ध्यवसे पूर्व्याय परि प्रभूती गविषः स्वापी ।
वृणीमहे सख्याय प्रियाय शूरा मंहिष्ठा पितरेव शम्भू ॥७॥

हे इन्द्र और वरुणदेवो ! गौओं की कामना करने वाले हम मनुष्य आप दोनों के पुरातन संरक्षण की अभिलाषा करते हैं। आप दोनों बलशाली, पराक्रमी तथा अत्यन्त वन्दनीय हैं। हम मनुष्य आप दोनों



के समीप हर्षप्रदायक, पिता के समान मित्रता तथा प्रेम की प्रार्थना करते हैं ॥७॥

ता वां धियोऽवसे वाजयन्तीराजिं न जग्मुर्युवयूः सुदानू ।
श्रिये न गाव उप सोममस्थुरिन्द्रं गिरो वरुणं मे मनीषाः ॥८॥

हे श्रेष्ठ फल प्रदाता इन्द्र तथा वरुणदेवो ! जिस प्रकार आपके उपासक युद्ध में अपनी सुरक्षा के लिए आपके समीप आगमन करते हैं, उसी प्रकार रक्षण और धन आदि की अभिलाषा करने वाली हमारी प्रार्थनाएँ आपके समीप गमन करती हैं। जिस प्रकार गौएँ तेज की अभिवृद्धि के निमित्त सोमरस के समीप गमन करती हैं, उसी प्रकार विवेकपूर्वक की गई हमारी प्रार्थनाएँ आप दोनों के समीप गमन करें ॥८॥

इमा इन्द्रं वरुणं मे मनीषा अग्नन्नुप द्रविणमिच्छमानाः ।
उपेमस्थुर्जोष्टार इव वस्वो रघ्वीरिव श्रवसो भिक्षमाणाः ॥९॥

जिस प्रकार ऐश्वर्य की कामना करने वाले लोग धनिक के समीप गमन करते हैं, उसी प्रकार हमारी प्रार्थनाएँ, ऐश्वर्य-लाभ की कामना से इन्द्र और वरुणदेवों के समीप गमन करती हैं। जिस प्रकार अन्न की याचना करने वाले भिक्षुक दानियों के समीप गमन करते हैं, उसी



प्रकार हमारी प्रार्थनाएँ इन्द्र तथा वरुणदेवों के समीप गमन करती हैं
॥९॥

अश्वस्य त्मना रथ्यस्य पुष्टेर्नित्यस्य रायः पतयः स्याम ।
ता चक्राणा ऊतिभिर्नव्यसीभिरस्मत्रा रायो नियुतः सचन्ताम् ॥१०॥

हम लोग अपने बल के द्वारा ही अश्वों, रथों, पोषक-पदार्थों तथा
अविनाशी ऐश्वर्यों के अधिपति हों । गमनशील वे दोनों देव अपने नये
रक्षण साधनों के द्वारा हमें अश्वों तथा धनों से संयुक्त करें ॥१०॥

आ नो बृहन्ता बृहतीभिरूती इन्द्र यातं वरुण वाजसातौ ।
यद्दिद्यवः पृतनासु प्रक्रीळान्तस्य वां स्याम सनितार आजेः ॥११॥

हे महान् इन्द्र तथा वरुणदेवो ! संग्राम में आप हमारी सुरक्षा के लिए
अपने बृहत् रक्षण साधनों से सम्पन्न होकर हमारे समीप पधारें । जिन
संग्रामों में शत्रु-सेना के हथियार क्रीड़ा करते हैं, उन संग्रामों में आप
दोनों की अनुकम्पा से हम लोग विजय प्राप्त कर सकें ॥११॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ४२

ऋषि – त्रसदस्युः पौरुकुत्सः
देवता – त्रसदस्यु, ७-१० इन्द्रवरुणौ । छंद – त्रिष्टुप

मम द्विता राष्ट्रं क्षत्रियस्य विश्वायोर्विश्वे अमृता यथा नः ।
क्रतुं सचन्ते वरुणस्य देवा राजामि कृष्टेरुपमस्य वव्रेः ॥१॥

हम क्षत्रिय जाति में उत्पन्न तथा समस्त मनुष्यों के राजा हैं। हमारे दो तरह के राष्ट्र हैं । जिस प्रकार समस्त देवता हमारे हैं, उसी प्रकार समस्त मनुष्य भी हमारे ही हैं। हम सौन्दर्यवान् तथा समीपस्थ वरुण हैं। समस्त देवता हमारे यज्ञ की परिचर्या करते हैं। हम मनुष्यों के भी शासक हैं ॥१॥

अहं राजा वरुणो मह्यं तान्यसुर्याणि प्रथमा धारयन्त ।
क्रतुं सचन्ते वरुणस्य देवा राजामि कृष्टेरुपमस्य वव्रेः ॥२॥

हम ही अधिपति वरुण हैं । समस्त देवता हमारे ही महान् सामर्थ्य को धारण करते हैं, हम सौन्दर्यवान् तथा समीपस्थ वरुण हैं । समस्त



देवता हमारे यज्ञ की परिचर्या करते हैं और हम मनुष्यों के भी स्वामी हैं ॥२॥

अहमिन्द्रो वरुणस्ते महित्वोर्वी गभीरे रजसी सुमेके ।
त्वष्टेव विश्वा भुवनानि विद्वान्समैरयं रोदसी धारयं च ॥३॥

हम ही इन्द्र तथा वरुण हैं। अपनी महानता के कारण विस्तृत, गम्भीर तथा श्रेष्ठ रूप वाली द्यावा-पृथिवी हम ही हैं। हम मेधावी हैं। हम त्वष्टा देवता की तरह समस्त भुवनों को प्रेरित करते हैं तथा द्यावा-पृथिवी को धारण करते हैं ॥३॥

अहमपो अपिन्वमुक्षमाणा धारयं दिवं सदन ऋतस्य ।
ऋतेन पुत्रो अदितेऋतावोत त्रिधातु प्रथयद्वि भूम ॥४॥

हमने ही सिंचनीय जल की वर्षा की है तथा जल के स्थानभूत स्वर्ग लोक में आदित्य की स्थापना की हैं। हम अदिति के पुत्र जल के लिए ऋतवान् हुए हैं। हमने ही तीन भुवनों वाली सृष्टि को विस्तारित किया है ॥४॥

मां नरः स्वश्वा वाजयन्तो मां वृताः समरणे हवन्ते ।
कृणोम्याजिं मघवाहमिन्द्र इयमिं रेणुमभिभूत्योजाः ॥५॥



हम ही श्रेष्ठ अश्वों वाले तथा युद्ध करने वाले योद्धा आहूत करते हैं ।
वे वीर युद्ध में रिपुओं से आवृत हो जाने पर हमें ही आहूत करते हैं।
हम धनवान् इन्द्रदेव के रूप में युद्ध करते हैं। हम पराजित करने
वाले बल से सम्पन्न होकर धूल उड़ाते हैं ॥५॥

अहं ता विश्वा चकरं नकिर्मा दैव्यं सहो वरते अप्रतीतम् ।
यन्मा सोमासो ममदन्यदुक्थोभे भयेते रजसी अपारे ॥६॥

हमने ही समस्त लोकों का सृजन किया है। हम कहीं भी न रुकने
वाले दैव-बल से सम्पन्न हैं। कोई भी हमें रोक नहीं सकता। जब
सोमरस तथा स्तोत्र हमें हर्षित करते हैं, तब असीम द्यावा-पृथिवी
भयभीत हो जाती है ॥६॥

विदुष्टे विश्वा भुवनानि तस्य ता प्र ब्रवीषि वरुणाय वेधः ।
त्वं वृत्राणि शृण्विषे जघन्वान्त्वं वृताँ अरिणा इन्द्र सिन्धून् ॥७॥

हे वरुणदेव ! आपके कर्म को समस्त लोक जानते हैं । हे स्तुति करने
वालो ! आप वरुणदेव की प्रार्थना करें । हे इन्द्रदेव ! आपने रिपुओं
का संहार किया है, इसलिए आप विख्यात हैं । आपने अवरुद्ध की
हुई नदियों को प्रवाहित किया है ॥७॥

अस्माकमत्र पितरस्त आसन्त्सप्त ऋषयो दौर्गहे बध्यमाने ।



त आयजन्त त्रसदस्युमस्या इन्द्रं न वृत्रतुरमर्धदेवम् ॥८॥

‘दुर्गह’ के पुत्र पुरुकुत्स को बाँध दिये जाने पर इस राष्ट्र का पालन करने वाले सप्त ऋषि हुए थे। उन्होंने इन्द्र और वरुणदेवों की अनुकम्पा से पुरुकुत्स की स्त्री के लिए यजन किया तथा सदस्यु को उपलब्ध किया। वह त्रसदस्यु इन्द्रदेव के सदृश रिपुओं के संहारक तथा वे देवों के अर्धभूत (समीपस्थ) इन्द्रदेव के समान थे ॥८॥

पुरुकुत्सानी हि वामदाशद्व्येभिरिन्द्रावरुणा नमोभिः ।
अथा राजानं त्रसदस्युमस्या वृत्रहणं ददथुर्धदेवम् ॥९॥

हे इन्द्रावरुणो ! ऋषियों के द्वारा प्रेरणा दिये जाने पर पुरुकुत्स की स्त्री ने आपको आहुतियों तथा प्रार्थनाओं से हर्षित किया था। इसके पश्चात् आप दोनों ने उसे रिपु संहारक अर्धदेव राजा त्रसदस्यु को प्रदान किया था ॥९॥

राया वयं ससवांसो मदेम हव्येन देवा यवसेन गावः ।
तां धेनुमिन्द्रावरुणा युवं नो विश्वाहा धत्तमनपस्फुरन्तीम् ॥१०॥

सत्य का विस्तार करने वाले हे मित्र और वरुणदेवो ! आप दोनों की तृप्ति के लिये सोमरस प्रस्तुत है। यज्ञशाला में पधारें, हम आपको आवाहन करते हैं । हे सोम ! उपयाम पात्र में इन्द्र और वरुण देवों



के लिए ही आपको नियमानुसार तैयार किया है, उन्हीं के निमित्त समर्पित करते हैं ॥१०॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ४३

ऋषि – पुरमीलहाजमीलहौ सौहोत्रौ
देवता – आश्विनौ । छंद – त्रिष्टुप

क उ श्रवत्कतमो यज्ञियानां वन्दारु देवः कतमो जुषाते ।
कस्येमां देवीममृतेषु प्रेष्ठां हृदि श्रेषाम सुष्टुतिं सुहव्याम् ॥१॥

यजनीय देवताओं के बीच में कौन देवता हमारी स्तुति सुनेंगे? कौन से देवता वन्दन योग्य स्तोत्रों का सेवन करेंगे? देवताओं के बीच में किस देवता के लिए हम अत्यन्त प्रिय, प्रकाशमान तथा हवि युक्त प्रार्थना करें ॥१॥

को मृळाति कतम आगमिष्ठो देवानामु कतमः शम्भविष्ठः ।
रथं कमाहुर्द्रवदश्वमाशुं यं सूर्यस्य दुहितावृणीत ॥२॥

कौन से देव हम मनुष्यों को हर्षित करते हैं तथा हमारे यज्ञ मण्डप में पधारने के लिए सबसे ज्यादा आतुरता प्रकट करते हैं? देवताओं के बीच में कौन से देवता हम मनुष्यों को सबसे ज्यादा हर्षित करते हैं?



किसका रथ द्रुतगामी तथा वेगवान् अश्वों से सम्पन्न है, जिसको सूर्य की पुत्री ने स्वीकार किया था? ॥२॥

मक्षू हि ष्मा गच्छथ ईवतो द्यूनिन्द्रो न शक्तिं परितक्म्यायाम् ।
दिव आजाता दिव्या सुपर्णा कया शचीनां भवथः शचिष्ठा ॥३॥

हे दिव्य और श्रेष्ठ पर्ण वाले अश्विनीकुमारो ! आप दोनों द्युलोक से पधारने वाले हैं। अनेक बलों में किस बल के कारण आप अत्यधिक बलशाली बन जाते हैं ? रात्रि में आप इन्द्रदेव के समान बल प्रकट करते हैं। अभिषवण काल में होने वाले कार्यों के प्रति आप अतिशीघ्र गमन करते हैं ॥३॥

का वां भूदुपमातिः कया न आश्विना गमथो हूयमाना ।
को वां महश्चित्यजसो अभीक उरुष्यतं माध्वी दसा न ऊती ॥४॥

हे मधुर स्वभाव वाले तथा रिपुओं का विनाश करने वाले अश्विनीकुमारो ! कौन-सी प्रार्थना आप दोनों के अनुकूल होगी? आप किस स्तुति से आहूत किये जाने पर हमारे समीप पधारेंगे । आपके अत्यधिक क्रोध को कौन व्यक्ति सहन कर सकता है? अपने रक्षण के साधनों द्वारा आप हमारी सुरक्षा करें ॥४॥

उरु वां रथः परि नक्षति द्यामा यत्समुद्रादभि वर्तते वाम् ।



मध्वा माध्वी मधु वां प्रुषायन्यत्सीं वां पृक्षो भुरजन्त पक्वाः ॥५॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों का विशाल रथ द्युलोक में चारों ओर गमन करता है । वह समुद्र से आपकी ओर पधारता है । आप दोनों के निमित्त परिपक्व जौ के साथ सोमरस संयुक्त हुआ है । हे मधुर जल को पैदा करने वाले तथा रिपुओं के विनाशक अश्विनीकुमारो याजकगण आपके लिए सोमरस में दूध मिश्रित कर रहे हैं ॥५॥

सिन्धुर्ह वां रसया सिञ्चदश्वान्घृणा वयोऽरुषासः परि ग्मन् ।
तदू षु वामजिरं चेति यानं येन पती भवथः सूर्यायाः ॥६॥

विशाल नदी ने आपके अश्वों का रसयुक्त जल के द्वारा सिंचन किया है । पक्षी के सदृश द्रुतगामी, प्रकाशवान् तथा रक्त वर्ण वाले घोड़े चारों तरफ गमन करते हैं । आपका वह द्रुतगामी रथ विख्यात है, जिसके द्वारा आप दोनों सूर्य का पालन करने वाले बनते हैं ॥६॥

इहेह यद्वां समना पपृक्षे सेयमस्मे सुमतिर्वाजरत्ना ।
उरुष्यतं जरितारं युवं ह श्रितः कामो नासत्या युवद्रिक् ॥७॥

हे शक्तिरूपी अन्न को अपने समीप रखने वाले अश्विनीकुमारो ! समान विचार वाले आप दोनों के लिए हम स्तुतियाँ समर्पित करते हैं। वे श्रेष्ठ स्तुतियाँ हम याजकों के लिए फल देने वाली हों । हे



अश्विनीकुमारो ! आप दोनों हमारी सुरक्षा करें । हमारी कामनाएँ
आपकी ओर गमन करती हैं ॥७॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ४४

ऋषि – पुरमीलहाजमीलहौ सौहोत्रौ
देवता – आश्विनौ । छंद – त्रिष्टुप

तं वां रथं वयमद्या हुवेम पृथुज्रयमश्विना संगतिं गोः ।
यः सूर्या वहति वन्धुरायुर्गिर्वाहसं पुरुतमं वसूयुम् ॥१॥

हे अश्विनीकुमारो ! आज हम आपके प्रसिद्ध वेगवाले तथा गौ प्रदान करने वाले रथ को आहूत करते हैं। काष्ठ स्तम्भयुक्त वह रथ सूर्या को भी धारण करता है । वह स्तुतियों को ढोने वाला, विशाल तथा ऐश्वर्यवान् है ॥१॥

युवं श्रियमश्विना देवता तां दिवो नपाता वनथः शचीभिः ।
युवोर्वपुरभि पृक्षः सचन्ते वहन्ति यत्ककुहासो रथे वाम् ॥२॥

हे द्युलोक को रोकने वाले अश्विनीकुमारो ! आप दोनों देवता हैं । आप दोनों उस श्रेष्ठता को अपने बल के द्वारा प्राप्त करते हैं। जब



विशाल अश्वों वाले रथ आपको वहन करते हैं, तब आप दोनों के शरीर को सोमरस पुष्ट करता है ॥२॥

को वामद्या करते रातहव्य ऊतये वा सुतपेयाय वार्कैः ।
ऋतस्य वा वनुषे पूर्याय नमो येमानो अश्विना ववर्तत् ॥३॥

कौन से सोमरस प्रदाता आज अपनी सुरक्षा के लिए अथवा अभिषुत सोमरस को पीने के लिए आपकी प्रार्थना करते हैं ? नमन करने वाले कौन लोग आप दोनों को यज्ञ के लिए प्रवृत्त करते हैं ॥३॥

हिरण्ययेन पुरुभू रथेनेमं यज्ञं नासत्योप यातम् ।
पिबाथ इन्मधुनः सोम्यस्य दधथो रत्नं विधते जनाय ॥४॥

हे अनेकों प्रकार से अपनी सत्ता को प्रकट करने वाले तथा सत्य का पालन करने वाले अश्विनीकुमारो ! आप दोनों इस यज्ञ में स्वर्णिम रथ द्वारा पधारें, मधुर सोमरस पियें तथा पुरुषार्थी मनुष्यों को मनोहर ऐश्वर्य प्रदान करें ॥४॥

आ नो यातं दिवो अच्छा पृथिव्या हिरण्ययेन सुवृता रथेन ।
मा वामन्ये नि यमन्देवयन्तः सं यद्दे नाभिः पूर्या वाम् ॥५॥

श्रेष्ठ, स्वर्णिम रथ द्वारा आप दोनों द्युलोक अथवा भूलोक से हमारी तरफ पधारें । आपके अभिलाषी अन्य याजक आपको बीच में ही अवरुद्ध न कर सकें, क्योंकि पुरातनकाल से ही हमने स्तुतियाँ प्रस्तुत की हैं ॥५॥

नू नो रयिं पुरुवीरं बृहन्तं दस्रा मिमाथामुभयेष्वस्मे ।
नरो यद्वामश्विना स्तोममावन्त्सथस्तुतिमाजमीव्हासो अगमन् ॥६॥

हे रिपुओं के संहारक अश्विनीकुमारो ! आप अनेक वीरों से सम्पन्न प्रचुर ऐश्वर्य को हम दोनों के लिए प्रदान करें । हे अश्विनीकुमारो ! पुरुमीव्ह के स्तोताओं ने आपको स्तुति द्वारा प्राप्त किया है और अजमीव्ह के स्तोताओं की प्रशंसा भी उसी के साथ सम्मिलित है ॥६॥

इहेह यद्वां समना पपृक्षे सेयमस्मे सुमतिर्वाजरत्ना ।
उरुष्यतं जरितारं युवं ह श्रितः कामो नासत्या युवद्रिक् ॥७॥

हे शक्तिरूप अन्न को अपने समीप रखने वाले अश्विनीकुमारो ! समान विचार वाले आप दोनों के लिए हम स्तुतियाँ समर्पित करते हैं। वे श्रेष्ठ स्तुतियाँ हम याजकों के लिए फल देने वाली हों । हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों हमारी सुरक्षा करें । हमारी कामनाएँ आपकी ओर गमन करती हैं ॥७॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ४५

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – आश्विनौ । छंद – जगती, ७ त्रिष्टुप

एष स्य भानुरुदियर्ति युज्यते रथः परिज्मा दिवो अस्य सानवि ।
पृक्षासो अस्मिन्मिथुना अधि त्रयो दृतिस्तुरीयो मधुनो वि रप्शाते ॥१॥

प्रकाशमान सूर्यदेव उदित होते हैं । हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों के रथ चारों ओर विचरण करते हैं । वे रथ आलोकमान सूर्यदेव के साथ ऊँचे स्थान (द्व्युलोक में मिलते हैं । इस रथ के ऊपर जोड़े से तीन प्रकार के अन्न रखे हैं तथा सोमरस का चौथा पात्र विशेष रूप से सुशोभित होता है ॥१॥

उद्धां पृक्षासो मधुमन्त ईरते रथा अश्वास उषसो व्युष्टिषु ।
अपोर्णुवन्तस्तम आ परीवृतं स्वर्णं शुक्रं तन्वन्त आ रजः ॥२॥

उषाओं के उदित होने पर मधुरअन्न तथा अश्वों से सम्पन्न आपके रथ, चारों तरफ विद्यमान तमिस्रा को नष्ट करते हुए, सूर्यदेव के समान



प्रदीप्त तेज को चारों तरफ फैलाते हुए ऊर्ध्वमुखी होकर विचरण करते हैं ॥२॥

मध्वः पिबतं मधुपेभिरासभिरुत प्रियं मधुने युञ्जाथां रथम् ।
आ वर्तनिं मधुना जिन्वथस्पथो दृतिं वहेथे मधुमन्तमश्विना ॥३॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप मधुर रस का पान करने वाले मुख के द्वारा सोमरस का पान करें तथा मधुर रस को प्राप्त करने के लिए अपने प्रिय रथ को अश्वों से नियोजित करके याजक के घर पधारें । आप दोनों जाने के मार्ग को मधुर रस से परिपूर्ण करें तथा सोमरस से पूर्ण पात्र को धारण करें ॥३॥

हंसासो ये वां मधुमन्तो अस्त्रिधो हिरण्यपर्णा उहुव उषर्बुधः ।
उदप्रुतो मन्दिनो मन्दिनिस्पृशो मध्वो न मक्षः सवनानि गच्छथः ॥४॥

आप लोगों के द्रुतगामी, मधुरतायुक्त, विद्रोह न करने वाले, स्वर्णिम पंखों वाले, उषाकाल में जागने वाले, दूर तक गमन करने वाले, पसीने की बूंदों को गिराने तथा हर्षित करने वाले अश्व आपको वहन करते हैं । जिस प्रकार मधुमक्खियाँ मधु की ओर गमन करती हैं, उसी प्रकार आप हमारे सवनों में आगमन करते हैं ॥४॥

स्वध्वरासो मधुमन्तो अग्रय उस्मा जरन्ते प्रति वस्तोरश्विना ।



यन्निक्तहस्तस्तरणिर्विचक्षणः सोमं सुषाव मधुमन्तमद्रिभिः ॥५॥

जब कार्य पूरा करने वाले मेधावी याजक मन्त्रपूरित जल के द्वारा हाथ को पवित्र करते हुए, पाषाणों से कूटकर मधुर सोमरस अभिषुत करते हैं, तब प्रत्येक उषाकाल में मधुरता युक्त, श्रेष्ठ अहिंसित कर्म करने वाले, अग्नि के सदृश तेजस्वी याजक अश्विनीकुमारों की प्रार्थना करते हैं ॥५॥

आकेनिपासो अहभिर्दिविध्वतः स्वर्णं शुक्रं तन्वन्त आ रजः ।
सूरश्चिदश्वान्युयुजान ईयते विश्वाँ अनु स्वधया चेतथस्पथः ॥६॥

निकट में अवतरित होने वाली किरणें दिन के द्वारा तमिस्रा को नष्ट करती हुई, सूर्यदेव के समान प्रदीप्त तेज को फैलाती हैं । अश्वों को नियोजित करते हुए सूर्यदेव भी गमन करते हैं । हे अश्विनीकुमारो ! आप अपनी धारक शक्ति के द्वारा समस्त मार्गों को अनुक्रम से बतलाते हैं ॥६॥

प्र वामवोचमश्विना धियंधा रथः स्वश्वो अजरो यो अस्ति ।
येन सद्यः परि रजांसि याथो हविष्मन्तं तरणिं भोजमच्छ ॥७॥

हे अश्विनीकुमारो ! हम स्तोता आप दोनों की प्रार्थना करते हैं। आप दोनों के श्रेष्ठ अश्वों वाला, कभी जीर्ण न होने वाला रथ; जिसके द्वारा



पल भर में आप तीनों लोकों का परिभ्रमण करते हैं, उसी के द्वारा आप हवि वाले, शीघ्र गमन करने वाले तथा भोजन प्रदान करने वाले यज्ञ में आगमन करें ॥७॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ४६

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्रवायु, १ वायु । छंद – गायत्री

अग्रं पिबा मधूनां सुतं वायो दिविष्टिषु ।
त्वं हि पूर्वपा असि ॥१॥

हे वायु देवता ! यज्ञों में आसीन होकर आप, निचोड़े गये मधुर सोमरस का सर्वप्रथम पान करें; क्योंकि आप सबसे पहले सोमरस का पान करने वाले हैं ॥१॥

शतेना नो अभिष्टिभिर्नियुत्वाँ इन्द्रसारथिः ।
वायो सुतस्य तृप्पतम् ॥२॥

हे वायु देवता ! आप श्रेष्ठ अश्वों वाले हैं और इन्द्रदेव आपके सारथि हैं । आप कामनाओं को पूर्ण करने के लिए सैकड़ों अश्वों द्वारा हमारे समीप पधारें । आप तथा इन्द्रदेव अभिषुत सोमरस का पान करें ॥२॥



आ वां सहस्रं हरय इन्द्रवायू अभि प्रयः ।
वहन्तु सोमपीतये ॥३॥

हे इन्द्र और वायुदेवो ! आप दोनों को हजारों संख्या वाले घोड़े
द्रुतगति से सोम पान के लिए ले आएँ ॥३॥

रथं हिरण्यवन्धुरमिन्द्रवायू स्वध्वरम् ।
आ हि स्थाथो दिविस्पृशम् ॥४॥

हे इन्द्र और वायुदेवो ! आप दोनों सोने से जड़े हुए, यज्ञ को भली-
प्रकार सिद्ध करने वाले तथा अंतरिक्ष को स्पर्श करने वाले रथ पर
आकर आसीन होते हैं ॥४॥

रथेन पृथुपाजसा दाश्रांसमुप गच्छतम् ।
इन्द्रवायू इहा गतम् ॥५॥

हे इन्द्र और वायुदेवो ! आप दोनों अत्यधिक सामर्थ्यशाली रथ के
द्वारा हविप्रदाता यजमान के निकट गमन करें तथा इस यज्ञ मण्डप
में पधारें ॥५॥

इन्द्रवायू अयं सुतस्तं देवेभिः सजोषसा ।



पिबतं दाशुषो गृहे ॥६॥

हे इन्द्र और वायुदेवो ! यह सोमरस आपके लिए अभिषुत किया गया है । देवताओं के साथ समान रूप से स्नेह करने वाले होकर आप दोनों हविप्रदाता यजमान के यज्ञ मण्डप में उसका पान करें ॥६॥

इह प्रयाणमस्तु वामिन्द्रवायू विमोचनम् ।
इह वां सोमपीतये ॥७॥

हे इन्द्र और वायुदेवो! आप दोनों का इस यज्ञ में पदार्पण हो । यहाँ पधार कर सोमपान के निमित्त आप दोनों अपने अश्वों को मुक्त करें ॥७॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ४७

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्रवायु, १ वायु। छंद – अनुष्टुप

वायो शुक्रो अयामि ते मध्वो अग्रं दिविष्टिषु ।
आ याहि सोमपीतये स्पार्हो देव नियुत्वता ॥१॥

हे वायो ! निर्दोष हम, आपके लिए यज्ञ में सर्वप्रथम सोमरस भेंट करते हैं । हे देव ! आदर के योग्य आप नियुत (नामक) अश्व पर बैठ कर सोमपान के निमित्त पधारें ॥१॥

इन्द्रश्च वायवेषां सोमानां पीतिमर्हथः ।
युवां हि यन्तीन्दवो निम्नमापो न सध्यक् ॥२॥

हे वायु और इन्द्रदेवो ! आप दोनों सोमपान की पात्रता से युक्त हैं, इसीलिए नीचे की ओर जलधारा के समान ही आप दोनों तक सोमरस के प्रवाह पहुँचते हैं ॥२॥



वायविन्द्रश्च शुष्मिणा सरथं शवसस्पती ।
नियुत्वन्ता न ऊतय आ यातं सोमपीतये ॥३॥

हे वायु और इन्द्रदेवो ! आप दोनों बल के स्वामी और सामर्थ्यवान् हैं।
नियुत नामक घोड़े से युक्त आप दोनों ही हमारी रक्षा के लिए
सोमरस पान हेतु एक साथ पधारें ॥३॥

या वां सन्ति पुरुस्पृहो नियुतो दाशुषे नरा ।
अस्मे ता यज्ञवाहसेन्द्रवायू नि यच्छतम् ॥४॥

हे नायक तथा यज्ञ सम्पादक इन्द्र और वायुदेवो ! आप दोनों के पास
अनेकों द्वारा कामना किये जाने योग्य जो अश्व हैं, उन अश्वों को मुझ
दानदाता यजमान को प्रदान करें ॥४॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ४८

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – वायु। छंद – अनुष्टुप

विहि होत्रा अवीता विषो न रायो अर्यः ।
वायवा चन्द्रेण रथेन याहि सुतस्य पीतये ॥१॥

हे वायुदेव ! रिपुओं को प्रकम्पित करने वाले योद्धा की तरह अन्यो के द्वारा न पिये गये सोमरस का आप पान करें तथा स्तोताओं के ऐश्वर्य की वृद्धि करें । हे वायुदेव ! आप सोमरस पीने के लिए शीतलतादायक रथ द्वारा आगमन करें ॥१॥

निर्युवाणो अशस्तीर्नियुत्वाँ इन्द्रसारथिः ।
वायवा चन्द्रेण रथेन याहि सुतस्य पीतये ॥२॥

हे वायुदेव ! आप वर्णन न किये जाने योग्य, तरुणता से युक्त अश्वों को नियोजित करते हैं । इन्द्रदेवता आपके सारथि हैं । हे वायुदेव ! आप सोमरस पीने के लिए तेजस्वी रथ द्वारा पधारें ॥२॥



अनु कृष्णे वसुधिती येमाते विश्वपेशसा ।
वायवा चन्द्रेण रथेन याहि सुतस्य पीतये ॥३॥

हे वायुदेव ! काले रंगों वाली, ऐश्वर्यों को धारण करने वाली, बहुत रूपों वाली द्यावा-पृथिवी आपका ही अनुगमन करती हैं। आप सोमरस पान के निमित्त तेजस्वी रथ द्वारा पधारें ॥३॥

वहन्तु त्वा मनोयुजो युक्तासो नवतिर्नव ।
वायवा चन्द्रेण रथेन याहि सुतस्य पीतये ॥४॥

हे वायुदेव ! मन के समान वेग वाले, परस्पर नियोजित होने वाले निन्यानवे घोड़े आपको ले जाते हैं। हे वायुदेव ! आप तेजस्वी रथ द्वारा सोमपान के निमित्त पधारें ॥४॥

वायो शतं हरीणां युवस्व पोष्याणाम् ।
उत वा ते सहस्रिणो रथ आ यातु पाजसा ॥५॥

हे वायुदेव ! आप अपने सैकड़ों संख्या वाले पोषण योग्य अश्वों को रथ में नियोजित करें। आपके हजारों अश्वों वाले रथ वेगपूर्वक पधारें ॥५॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ४९

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – इन्द्र बृहस्पति। छंद – गायत्री

इदं वामास्ये हविः प्रियमिन्द्राबृहस्पती ।
उक्थं मदश्च शस्यते ॥१॥

हे इन्द्र और बृहस्पतिदेवो ! यह स्नेह युक्त आहुतियाँ हम आपके मुख (यज्ञाग्नि) में समर्पित करते हैं। आप दोनों को हम स्तोत्र तथा हर्षप्रदायक सोमरस प्रदान करते हैं ॥१॥

अयं वां परि षिच्यते सोम इन्द्राबृहस्पती ।
चारुर्मदाय पीतये ॥२॥

हे इन्द्र और बृहस्पतिदेवो ! आपके हर्ष के लिए तथा सोमरस पान के लिए यह मनोहर सोमरस अभिषुत किया जाता है ॥२॥

आ न इन्द्राबृहस्पती गृहमिन्द्रश्च गच्छतम् ।



सोमपा सोमपीतये ॥३॥

हे सोमपान करने वाले इन्द्र तथा बृहस्पतिदेवो ! सोमरस पान के निमित्त आप तथा इन्द्रदेव हमारे घर में पधारें ॥३॥

अस्मे इन्द्राबृहस्पती रयिं धत्तं शतग्विनम् ।
अश्वावन्तं सहस्रिणम् ॥४॥

हे इन्द्र और बृहस्पतिदेवो ! आप हमें सैकड़ों गौओं तथा हजारों अश्वों से सम्पन्न ऐश्वर्य प्रदान करें ॥४॥

इन्द्राबृहस्पती वयं सुते गीर्भिर्हवामहे ।
अस्य सोमस्य पीतये ॥५॥

हे इन्द्र और बृहस्पतिदेवो ! सोमरस के निचोड़े जाने पर हम सोमरस के निमित्त प्रार्थनाओं द्वारा आपको आवाहित करते हैं ॥५॥

सोममिन्द्राबृहस्पती पिबतं दाशुषो गृहे ।
मादयेथां तदोकसा ॥६॥



हे इन्द्र और बृहस्पतिदेवो ! आप दोनों हवि प्रदाता यजमान के गृह
में सोमपान करें तथा उसके गृह में वास करके हर्षित हों ॥६॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ५०

ऋषि – वामदेवो गौतमः

देवता – बृहस्पति, १०-११ इन्द्र बृहस्पति। छंद – त्रिष्टुप, १० जगती

यस्तस्तम्भ सहसा वि ज्मो अन्तान्बृहस्पतिस्त्रिषधस्थो रवेण ।
तं प्रत्नास ऋषयो दीध्यानाः पुरो विप्रा दधिरे मन्द्रजिह्वम् ॥१॥

तीनों लोकों में निवास करने वाले जिन बृहस्पतिदेव ने धरती की दशों दिशाओं को स्तम्भित किया, उन मीठी बोली वाले बृहस्पतिदेव को पुरातन ऋषियों तथा तेजस्वी विद्वानों ने पुरोभाग में स्थापित किया ॥१॥

धुनेतयः सुप्रकेतं मदन्तो बृहस्पते अभि ये नस्ततस्त्रे ।
पृषन्तं सृप्रमदब्धमूर्वं बृहस्पते रक्षतादस्य योनिम् ॥२॥

हे बृहस्पतिदेव ! जिनकी गति रिपुओं को प्रकम्पित करने वाली है, जो आपको आनन्दित करते हैं तथा आपकी प्रार्थना करते हैं, उनके



लिए आप फल प्रदान करने वाले, वृद्धि करने वाले तथा हिंसा न करने वाले होते हैं। आप उनके विस्तृत यज्ञ को सुरक्षा प्रदान करते हैं ॥२॥

बृहस्पते या परमा परावदत आ त ऋतस्पृशो नि षेटुः ।
तुभ्यं खाता अवता अद्रिदुग्धा मध्वः श्रोतन्त्यभितो विरष्णम् ॥३॥

हे बृहस्पतिदेव ! दूरवर्ती प्रदेश में जो अत्यधिक श्रेष्ठ स्थान हैं, वहाँ से आपके अश्व यज्ञ में पधारते हैं। जिस प्रकार गहरे जलकुण्ड से जल श्रवित होता है, उसी प्रकार आपके चारों ओर प्रार्थनाओं के साथ पत्थरों द्वारा निचोड़ा गया सोम, मधुर रस का अभिषिचन करता है ॥३॥

बृहस्पतिः प्रथमं जायमानो महो ज्योतिषः परमे व्योमन् ।
सप्तास्यस्तुविजातो रवेण वि सप्तरश्मिरधमत्तमांसि ॥४॥

सप्त छन्दोमय मुख वाले, बहुत प्रकार से पैदा होने वाले तथा सप्त रश्मियों वाले बृहस्पतिदेव, महान् सूर्यदेव के परम आकाश में सर्वप्रथम उत्पन्न होकर अपनी ज्योति के द्वारा तमिस्रा को नष्ट करते हैं ॥४॥

स सुष्टुभा स ऋकता गणेन वलं रुरोज फलिगं रवेण ।
बृहस्पतिरुस्रिया हव्यसूदः कनिक्रदद्वावशतीरुदाजत् ॥५॥



बृहस्पतिदेव ने तेजस्वी तथा प्रार्थना करने वाले अंगिरागणों के साथ ध्वनि के द्वारा मेघ और वल नामक राक्षस का वध किया। उन्होंने हवि प्रेरित करने वाली तथा भाने वाली गौओं को ध्वनि करते हुए बाहर निकाला ॥५॥

एवा पित्रे विश्वदेवाय वृष्णे यज्ञैर्विधेम नमसा हविर्भिः ।
बृहस्पते सुप्रजा वीरवन्तो वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥६॥

इस प्रकार सबके पालनकर्ता, समस्त देवों के स्वामी तथा बलशाली बृहस्पतिदेव की हम लोग यज्ञों, आहुतियों तथा प्रार्थनाओं के द्वारा सेवा करेंगे । है बृहस्पतिदेव ! उनके प्रभाव से हम लोग श्रेष्ठ सन्तानों तथा पराक्रम से सम्पन्न ऐश्वर्य के स्वामी हो सकें ॥६॥

स इद्राजा प्रतिजन्यानि विश्वा शुष्मेण तस्थावभि वीर्येण ।
बृहस्पतिं यः सुभृतं बिभर्ति वल्गूयति वन्दते पूर्वभाजम् ॥७॥

जो शासक सर्वप्रथम श्रेष्ठ, पोषक वस्तुओं के द्वारा बृहस्पतिदेव का सत्कार करते हैं, प्रार्थना करते हैं तथा नमन करते हैं। वे शासक समस्त शत्रुओं के बल को अपनी सामर्थ्य के द्वारा जीत लेते हैं ॥७॥



स इत्क्षेति सुधित ओकसि स्वे तस्मा इळा पिन्वते विश्वदानीम् ।
तस्मै विशः स्वयमेवा नमन्ते यस्मिन्ब्रह्मा राजनि पूर्व एति ॥८॥

जिस शासक के शासन में ब्रह्मज्ञानी पुरोहित सबसे वंदनीय होकर
अग्रगमन करते हैं, वहीं शासक भली-प्रकार तुष्ट होकर अपने घर में
निवास करता है। उसके लिए धरती सभी समय में फल उत्पन्न करती
है। उसके सामने प्रजाएँ स्वयं ही सम्मानपूर्वक नमन करती हैं ॥८॥

अप्रतीतो जयति सं धनानि प्रतिजन्यान्युत या सजन्या ।
अवस्यवे यो वरिवः कृणोति ब्रह्मणे राजा तमवन्ति देवाः ॥९॥

जो राजा सुरक्षा की कामना करने वाले ब्रह्मज्ञानी को ऐश्वर्य आदि
प्रदान करके उसकी सुरक्षा करते हैं, उस राजा को देवता लोग
संरक्षित करते हैं तथा वे अप्रतिहत रूप से रिपुओं तथा प्रजाओं के
ऐश्वर्य को विजित करते हुए महान् बनते हैं ॥९॥

इन्द्रश्च सोमं पिबतं बृहस्पतेऽस्मिन्यज्ञे मन्दसाना वृषण्वसू ।
आ वां विशन्त्विन्दवः स्वाभुवोऽस्मे रयिं सर्ववीरं नि यच्छतम् ॥१०॥

हे बृहस्पतिदेव ! आप तथा इन्द्रदेव इस यज्ञ में हर्षित होकर याजकों
को ऐश्वर्य प्रदान करें । सब जगह विद्यमान रहने वाले सोमरस आप



दोनों के अन्दर प्रवेश करें। आप हमें पराक्रमी सन्तानों से सम्पन्न धन प्रदान करें ॥१०॥

बृहस्पत इन्द्र वर्धतं नः सचा सा वां सुमतिभूत्वस्मे ।
अविष्टं धियो जिगृतं पुरंधीर्जजस्तमर्यो वनुषामरातीः ॥११॥

हे बृहस्पति और इन्द्रदेवो ! आप दोनों हमें संवर्धित करें। आप दोनों ही हमारे यज्ञ का संरक्षण करें तथा हमारी मेधा को जाग्रत् करें। आपकी प्रार्थना करने वाले हम याजकों के रिषुओं का आप विनाश करें ॥११॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ५१

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – उषा । छंद – त्रिष्टुप

इदमु त्यत्पुरुतमं पुरस्ताज्ज्योतिस्तमसो वयुनावदस्थात् ।
नूनं दिवो दुहितरो विभातीर्गातुं कृणवन्नुषसो जनाय ॥१॥

वह अत्यधिक विशाल तथा कर्मों में मनुष्यों को संलग्न करने वाला
कांतिमान् तेज, पूर्व दिशा में तमिस्रा के बीच से ऊपर निकल रहा है।
निश्चित रूप से सूर्य की पुत्री तथा दीप्तिमती उषाएँ याजकों के जाने
के लिए मार्ग बता रही हैं ॥१॥

अस्थुरु चित्रा उषसः पुरस्तान्मिता इव स्वरवोऽध्वरेषु ।
व्यू व्रजस्य तमसो द्वारोच्छन्तीरव्रज्छुचयः पावकाः ॥२॥

जिस प्रकार यज्ञ मण्डप में यूप खड़े रहते हैं, उसी प्रकार मनोहारिणी
उषाएँ पूर्व दिशा में संव्याप्त हो रही हैं। वे उषाएँ गौओं के गोष्ठों के



तमिस्रामय द्वारों को उद्घाटित करती हैं और अपने शुद्ध-विमल प्रकाश से संसार को व्यापती हैं ॥२॥

उच्छन्तीरद्य चितयन्त भोजात्राधोदेयायोषसो मघोनीः ।
अचित्रे अन्तः पणयः ससन्त्वबुध्यमानास्तमसो विमध्ये ॥३॥

आज अंधकार का निवारण करने वाली तथा ऐश्वर्य वाली उषाएँ भोजनदाता को ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए जाग्रत् करती हैं। न जाग्रत होने वाले जो कंजूस वणिक हैं, वे अत्यधिक अंधकार में सोते रहें ॥३॥

कुवित्स देवीः सनयो नवो वा यामो बभूयादुषसो वो अद्य ।
येना नवग्वे अङ्गिरे दशग्वे सप्तास्ये रेवती रेवदूष ॥४॥

हे देवी उषाओ ! आप लोगों का वह पुरातन अथवा नवीन रथ आज इस यज्ञ में अनेकों बार गमन करता रहे । उस रथ के द्वारा नवग्व, दशग्व तथा सप्त मुख वाले अंगिरागणों (सात छन्द युक्त मुख वाले) के निमित्त आप ऐश्वर्य-सम्पन्न होकर प्रकाशित होती रहें ॥४॥

यूयं हि देवीर्ऋतयुग्भिरश्वैः परिप्रयाथ भुवनानि सद्यः ।
प्रबोधयन्तीरुषसः ससन्तं द्विपाच्चतुष्पाच्चरथाय जीवम् ॥५॥



है देवी उषाओ ! आप यज्ञ में गमन करने वाले घोड़ों के द्वारा समस्त लोकों में चारों तरफ विचरण करती रहें तथा निद्राग्रस्त दो पैर वाले (मनुष्यों) और चार पैर वाले (पशुओं) जीवों को परिभ्रमण करने के लिए जाग्रत् करती रहें ॥५॥

क्व स्विदासां कतमा पुराणी यया विधाना विदधुर्ऋभूणाम् ।
शुभं यच्छुभ्रा उषसश्चरन्ति न वि ज्ञायन्ते सदृशीरजुर्याः ॥६॥

जिन उषाओं के निमित्त त्रभुओं ने चमस आदि विनिर्मित किया था, वे पुरानी उषाएँ कौन सी और कहाँ हैं? जब प्रदीप्त उषाएँ सौन्दर्य को प्रदर्शित करती हैं, तब नित्य नूतन होने पर एक रूप होकर रहती हैं। इसमें से कौन नयी और कौन पुरानी हैं, यह पता नहीं लगता ॥६॥

ता घा ता भद्रा उषसः पुरासुरभिष्टिद्युम्ना ऋतजातसत्याः ।
यास्वीजानः शशमान उक्थैः स्तुवञ्छंसन्द्रविणं सद्य आप ॥७॥

याज्ञिकगण जिन उषाओं का उक्थों स्तोत्रों द्वारा स्तवन करके तत्काल ऐश्वर्य प्राप्त करते हैं, वे ही हित करने वाली उषाएँ प्राचीन काल से ही, पहुँचते ही ऐश्वर्य प्रदान करने वाली हैं। वे यज्ञ के निमित्त प्रकट हुई हैं तथा सत्य परिणाम प्रदान करती हैं ॥७॥

ता आ चरन्ति समना पुरस्तात्समानतः समना पप्रथानाः ।



ऋतस्य देवीः सदसो बुधाना गवां न सर्गा उषसो जरन्ते ॥८॥

वे उषाएँ समान रूप से पूर्व दिशा में चारों ओर विस्तृत हो रही हैं। वे एक जैसी उषाएँ समान आकाश के स्थान से फैलती हैं और यज्ञ स्थान को ज्ञापित करती हैं। वे देवी उषाएँ गौओं के झुण्ड के सदृश प्रशंसित होती हैं ॥८॥

ता इन्वेव समना समानीरमीतवर्णा उषसश्चरन्ति ।
गूहन्तीरभ्वमसितं रुशद्भिः शुक्रास्तनूभिः शुचयो रुचानाः ॥९॥

वे उषाएँ एक जैसी रंग-रूप वाली तथा अपरिमित रंगों से सम्पन्न होकर संचरित होती हैं । वे विस्तृत तमिस्रा को आच्छादित (निरस्त कर देती हैं तथा अपने कान्तिपूर्ण शरीरों के द्वारा पवित्र प्रकाश को और भी देदीप्यमान कर देती हैं ॥९॥

रयिं दिवो दुहितरो विभातीः प्रजावन्तं यच्छतास्मासु देवीः ।
स्योनादा वः प्रतिबुध्यमानाः सुवीर्यस्य पतयः स्याम ॥१०॥

हे द्युलोक की दुहिता उषाओ! आप द्योतमान् देवियाँ हैं। आप हम लोगों को सन्तानों से युक्त ऐश्वर्य प्रदान करें । हे देवियो ! हम मनुष्य हर्ष प्राप्ति के लिए आपसे निवेदन करते हैं, जिससे हम लोग श्रेष्ठ सन्तानों से युक्त ऐश्वर्य के स्वामी हो सकें ॥१०॥



तद्वो दिवो दुहितरो विभातीरुप ब्रुव उषसो यज्ञकेतुः ।
वयं स्याम यशसो जनेषु तद्ध्यौश्च धत्तां पृथिवी च देवी ॥११॥

हे प्रकाशमान सूर्य-पुत्री उषाओ ! हम याजक यज्ञ के निदेशक हैं ।
आपके समीप हम लोग स्तुति करते हैं, जिससे मनुष्यों के बीच में
हम लोग यश तथा अन्न के अधिपति हो सकें। हमारी उस कामना
को द्यावा-पृथिवी सफल करें ॥११॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ५२

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – उषा । छंद – गायत्री

प्रति ष्या सूनरी जनी व्युच्छन्ती परि स्वसुः ।
दिवो अदर्शि दुहिता ॥१॥

सब प्राणियों की प्रेरक, फल प्रदायक, अपनी बहिन के तुल्य रात्रि के
अन्त में प्रकाश फैलाने वाली सूर्य पुत्री उषा को सब देखते हैं ॥१॥

अश्वेव चित्रारुषी माता गवामृतावरी ।
सखाभूदश्विनोरुषाः ॥२॥

चपला (बिजली) के समान अद्भुत दीप्तिमान् किरणों की माता, यज्ञ
आरम्भ करने वाली उषा अश्विनीकुमारों की मित्र हैं ॥२॥

उत सखास्यश्विनोरुत माता गवामसि ।
उतोषो वस्व ईशिषे ॥३॥



आप अश्विनीकुमारों की मित्र हैं और दीप्तिमान् रश्मियों की रचयित्री हैं, इसलिए हे उषा देवि ! आप स्तुति योग्य हैं ॥३॥

यावयद्द्वेषसं त्वा चिकित्वित्सूनृतावरि ।
प्रति स्तोमैरभुत्स्महि ॥४॥

हे मधुर बोलने वाली उषा देवि ! आप रिपुओं को अलग करने वाली हैं। आप ज्ञान सम्पन्न हैं । स्तुतियों के द्वारा हम आपको जाग्रत् करते हैं ॥४॥

प्रति भद्रा अदृक्षत गवां सर्गा न रश्मयः ।
ओषा अप्रा उरु ज्रयः ॥५॥

हितकारी रश्मियाँ गौओं के समूह के समान दिखायी पड़ रही हैं। वे देवी उषा विशेष तेजस् को सब जगह भर देती हैं ॥५॥

आपप्रुषी विभावरी व्यावर्ज्योतिषा तमः ।
उषो अनु स्वधामव ॥६॥



हे दीप्तिमती उषा देवि ! आप संसार को तेज के द्वारा पूर्ण करने वाली हैं, अंधकार को प्रकाश के द्वारा दूर करने वाली हैं। इसके बाद आप अपनी धारण करने वाली शक्ति को संरक्षित करने वाली हों ॥६॥

आ द्यां तनोषि रश्मिभिरान्तरिक्षमुरु प्रियम् ।
उषः शुक्रेण शोचिषा ॥७॥

हे उषा देवि ! आप अपनी रश्मियों के द्वारा द्युलोक को पूर्ण कर देती हैं तथा पवित्र प्रकाश के द्वारा प्रीतियुक्त विशाल आकाश को भी पूर्ण कर देती हैं ॥७॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ५३

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – सविता । छंद – जगती

तद्देवस्य सवितुर्वार्यं महद्वृणीमहे असुरस्य प्रचेतसः ।
छर्दिर्येन दाशुषे यच्छति त्मना तन्नो मह्यं उदयान्देवो अक्तुभिः ॥१॥

हम प्राण शक्ति प्रदाता तथा मेधावी सविता देव के उस वरण करने योग्य तथा श्रेष्ठ तेज की कामना करते हैं, जिस तेजस् के द्वारा वे हविप्रदाता यजमान को हर्ष प्रदान करते हैं। वे महान् सवितादेव हमें उस तेज को प्रदान करते हुए निशा के अवसान के समय उदित होते हैं ॥१॥

दिवो धर्ता भुवनस्य प्रजापतिः पिशङ्गं द्रापिं प्रति मुञ्चते कविः ।
विचक्षणः प्रथयन्नापृणन्नुर्वजीजनत्सविता सुम्रमुक्थ्यम् ॥२॥

द्युलोक के धारक, समस्त भुवनों की प्रजाओं के पालक तथा विद्वान् सवितादेव अपने स्वर्णिम कवच को उतारते हैं। सबको देखने वाले



सवितादेव अपने तेजस् को प्रकट करते हुए समस्त जगत् को परिपूर्ण करते हैं। तथा प्रार्थना के योग्य प्रचुर सुख को उत्पन्न करते हैं ॥२॥

आप्रा रजांसि दिव्यानि पार्थिवा श्लोकं देवः कृणुते स्वाय धर्मणे ।
प्र बाहू अस्त्राक्सविता सवीमनि निवेशयन्प्रसुवन्नक्तुभिर्जगत् ॥३॥

वे सवितादेव अपने तेजसू द्वारा द्युलोक तथा भूलोक को पूर्ण करते हैं और अपने कर्म की सराहना करते हैं । वे जगत् को अपने कर्म में नित्य प्रति स्थापित करते हैं तथा प्रेरित करते हैं। वे सृजन के लिए अपनी भुजाओं को फैलाते हैं ॥३॥

अदाभ्यो भुवनानि प्रचाकशद्वतानि देवः सविताभि रक्षते ।
प्रासाग्बाहू भुवनस्य प्रजाभ्यो धृतव्रतो महो अज्मस्य राजति ॥४॥

सवितादेव हिंसारहित होकर समस्त लोकों को आलोकित करते हैं तथा सभी व्रतों की सुरक्षा करते हैं। वे समस्त लोकों के मनुष्यों के हित के लिए अपनी भुजाओं को प्रसारित करते हैं। व्रत को धारण करने वाले सवितादेव श्रेष्ठ जगत् के ईश्वर हैं ॥४॥

त्रिरन्तरिक्षं सविता महित्वना त्री रजांसि परिभुस्त्रीणि रोचना ।
तिस्रो दिवः पृथिवीस्तिस्र इन्वति त्रिभिर्व्रतैरभि नो रक्षति त्मना ॥५॥



वे सवितादेव अपने तेजस् के द्वारा अन्तरिक्ष त्रय को परिपूर्ण करते हैं तथा अपनी महिमा द्वारा तीनों लोकों को परिपूर्ण करते हैं। वे सर्वश्रेष्ठ सवितादेव अग्नि, वायु तथा सूर्य को संव्याप्त करते हैं। वे तीन द्युलोक तथा तीन पृथ्वियों को व्याप्त करते हैं। वे अपने तीन व्रतों के द्वारा हमारी सुरक्षा करें ॥५॥

बृहत्सुम्नः प्रसवीता निवेशनो जगतः स्थातुरुभयस्य यो वशी ।
स नो देवः सविता शर्म यच्छत्वस्मे क्षयाय त्रिवरूथमंहसः ॥६॥

जो अपने पास प्रचुर ऐश्वर्य रखते हैं, सबको उत्पन्न तथा स्थिर करते हैं, स्थावर तथा जंगम को अपने अधीन रखते हैं, वे सवितादेव हमारे पापों को विनष्ट करने के लिए तीनों लोकों के सुख को हमें प्रदान करें ॥६॥

आगन्देव ऋतुभिर्वर्धतु क्षयं दधातु नः सविता सुप्रजामिषम् ।
स नः क्षपाभिरहभिश्च जिन्वतु प्रजावन्तं रयिमस्मे समिन्वतु ॥७॥

उदित होते हुए सवितादेव समस्त ऋतुओं में हमारे सुखों की वृद्धि करें तथा हमें श्रेष्ठ सन्तानों से सम्पन्न अन्न प्रदान करें । वे हम लोगों को रात-दिन समृद्धि से तुष्ट करें तथा हमें प्रजाओं से सम्पन्न धन प्रदान करें ॥७॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ५४

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – सविता । छंद – जगती, ६ त्रिष्टुप

अभूद्देवः सविता वन्द्यो नु न इदानीमह उपवाच्यो नृभिः ।
वि यो रत्ना भजति मानवेभ्यः श्रेष्ठं नो अत्र द्रविणं यथा दधत् ॥१॥

सवितादेव उदित हो रहे हैं, हम उनकी वन्दना करते हैं। जो मानवों को ऐश्वर्य प्रदान करते हैं तथा हमारे इस यज्ञ में हमें श्रेष्ठ धन प्रदान करते हैं, वे सवितादेव दिन के इस भाग में याजकों के द्वारा प्रशंसनीय होते हैं ॥१॥

देवेभ्यो हि प्रथमं यज्ञियेभ्योऽमृतत्वं सुवसि भागमुत्तमम् ।
आदिद्धामानं सवितर्व्यूणुषेऽनूचीना जीविता मानुषेभ्यः ॥२॥

हे सवितादेव ! उदयकाल में आप यज्ञ के योग्य देवों को अमृतमय सार तत्त्वों का उत्तम भाग प्रदान करते हैं, फिर उदित होकर



दीप्तिमान् रश्मियों को विस्तीर्ण करते हैं और प्राणियों के निमित्त रश्मियों के द्वारा जीवन का विस्तार करते हैं ॥२॥

अचिती यच्चकृमा दैव्ये जने दीनैर्दक्षैः प्रभूती पूरुषत्वता ।
देवेषु च सवितर्मनुषेषु च त्वं नो अत्र सुवतादनागसः ॥३॥

हे सवितादेव ! हमने भूल से दुर्बलता के कारण, धनाभिमानवश अथवा मनुष्य होने के गर्व से आपके प्रति, देवताओं या मनुष्यों के प्रति जो पाप किया हो, आप इस यज्ञ में हमें उस पाप से मुक्त करें ॥३॥

न प्रमिये सवितुर्दैव्यस्य तद्यथा विश्वं भुवनं धारयिष्यति ।
यत्पृथिव्या वरिमन्ना स्वङ्गुरिर्वर्ष्मन्दिवः सुवति सत्यमस्य तत् ॥४॥

जिससे समस्त लोकों को धारण करते हैं, सवितादेव की वह सामर्थ्य कभी विनष्ट नहीं होगी । सुन्दर हाथों वाले जो सवितादेव पृथ्वी तथा धुलोक को विस्तृत होने के निमित्त प्रेरित करते हैं, उन सविता देव का कर्म सत्य है ॥४॥

इन्द्रज्येष्ठान्बृहद्भ्यः पर्वतेभ्यः क्षयाँ एभ्यः सुवसि पस्त्यावतः ।
यथायथा पतयन्तो वियेमिर एवैव तस्थुः सवितः सवाय ते ॥५॥



हे सवितादेव ! अत्यधिक धनवान् इन्द्रदेव हमें याजकों के बीच वंदनीय हैं। आप हम मनुष्यों को विशाल पर्वतों से भी अधिक बड़ा बनाएँ। इन याजकों को आप घरों से युक्त स्थान प्रदान करें, जिससे वे आपके जाने के समय आपके द्वारा नियन्त्रित हों तथा आपकी आज्ञा में चलें ॥५॥

ये ते त्रिरहन्त्सवितः सवासो दिवेदिवे सौभगमासुवन्ति ।
इन्द्रो द्यावापृथिवी सिन्धुरन्द्रिरादित्यैर्नो अदितिः शर्म यंसत् ॥६॥

हे सवितादेव ! जो याजक आपके लिए नित्य प्रति तीन बार सौभाग्यजनक सोमरस अभिषुत करते हैं। उन याजकों के लिए तथा हमारे लिए, इन्द्रदेव, द्यावा-पृथिवी, जल पूर्ण नदियाँ तथा आदित्यों के साथ अदिति देवी सुख प्रदान करें ॥६॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ५५

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – विश्वे देवा । छंद – त्रिष्टुप्, ८-१० गायत्री

को वस्त्राता वसवः को वरूता द्यावाभूमी अदिते त्रासीथां नः ।
सहीयसो वरुण मित्र मर्तात्को वोऽध्वरे वरिवो धाति देवाः ॥१॥

हे वसुओ ! आप लोगों के बीच में रक्षक कौन है ? दुःखों का निवारण करने वाला कौन है ? हे अखण्डनीया द्यावा-पृथिवि ! आप हमारी सुरक्षा करें । हे मित्रावरुण ! आप लोग बलशाली रिपुओं से भी हमारी सुरक्षा करें । हे देवो ! आप लोगों के बीच में कौन से देव यज्ञ में हमें ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं? ॥१॥

प्र ये धामानि पूर्वाण्यर्चान्वि यदुच्छान्वियोतारो अमूराः ।
विधातारो वि ते दधुरजस्रा ऋतधीतयो रुरुचन्त दस्माः ॥२॥

जो देवता स्तुति करने वालों को प्राचीन स्थान प्रदान करते हैं तथा अज्ञानान्धकार को विनष्ट करते हैं, वे फल प्रदायक देवता सदैव श्रेष्ठ



फल प्रदान करते हैं। वे सत्कर्म करने वाले देवता दर्शनीय होकर सुशोभित होते हैं ॥२॥

प्र पस्यामदितिं सिन्धुमर्कैः स्वस्तिमीळे सख्याय देवीम् ।
उभे यथा नो अहनी निपात उषासानक्ता करतामदब्धे ॥३॥

सबको आश्रय प्रदान करने वाली अदिति, सिन्धु तथा स्वस्ति देवी की मित्रता प्राप्त करने के लिए हम स्तोत्रों द्वारा उनकी प्रार्थना करते हैं । द्यावा-पृथिवी हमारी सुरक्षा करें । अहोरात्र की अधिष्ठात्री देवी उषासानक्ता हमारी कामनाओं को सम्पादित करें ॥३॥

व्यर्यमा वरुणश्चेति पन्थामिषस्पतिः सुवितं गातुमग्निः ।
इन्द्राविष्णू नृवदु षु स्तवाना शर्म नो यन्तममवद्वरूथम् ॥४॥

अर्यमा तथा वरुणदेव यज्ञ मार्ग को प्रकाशित करें तथा अन्न के अधिपति अग्निदेव हर्षकारी मार्ग को दिखलायें । इन्द्र और विष्णुदेव भली-भाँति प्रशंसित होकर हम लोगों को, सन्तानों तथा बलों से युक्त मनोहर सुख प्रदान करें ॥४॥

आ पर्वतस्य मरुतामवांसि देवस्य त्रातुरत्रि भगस्य ।
पात्यतिर्जन्यादहसो नो मित्रो मित्रियादुत न उरुष्येत् ॥५॥



पर्वत, मरुद्गण तथा संरक्षक भगदेव की रक्षण सामर्थ्यों की हम कामना करते हैं। सबका पालन करने वाले वरुणदेव, मनुष्य सम्बन्धी पापों से बचायें। मित्रदेव सखा भाव से हमारी सुरक्षा करें ॥५॥

नू रोदसी अहिना बुध्येन स्तुवीत देवी अप्येभिरिष्टैः ।
समुद्रं न संचरणे सनिष्पवो घर्मस्वरसो नद्यो अप व्रन् ॥६॥

हे देवी द्यावा-पृथिवि ! जिस प्रकार ऐश्वर्य प्राप्त करने की कामना करने वाले लोग बीच में जाने के लिए समुद्र की प्रार्थना करते हैं, उसी प्रकार इच्छित कार्य लाभ के निमित्त 'अहिर्बुध्य' नामक देव के साथ हम आपकी प्रार्थना करते हैं। तेज ध्वनि करने वाली सरिताओं को आप मुक्त करें ॥६॥

देवैर्नो देव्यदितिर्नि पातु देवस्त्राता त्रायतामप्रयुच्छन् ।
नहि मित्रस्य वरुणस्य धासिमर्हामसि प्रमियं सान्वग्रेः ॥७॥

देवताओं के साथ अदिति देवी हमारा पोषण करें तथा संरक्षण करने वाले इन्द्रदेव प्रमादरहित होकर हमारी सुरक्षा करें। हम मित्र, वरुण तथा अग्निदेवों के सोम रूप पोषक अन्नों में बाधा नहीं डाल सकते, उन्हें यज्ञादि से संवर्धित कर सकते हैं ॥७॥

अग्निरीशे वसव्यस्याग्निर्महः सौभगस्य ।



तान्यस्मभ्यं रासते ॥८॥

वे अग्निदेव ऐश्वर्य तथा सौभाग्य के अधिपति हैं, अतः हम लोगों को वे ऐश्वर्य तथा सौभाग्य प्रदान करें ॥८॥

उषो मघोन्या वह सूनृते वार्या पुरु ।
अस्मभ्यं वाजिनीवति ॥९॥

हे धनसम्पन्न, सत्यरूप वचन वाली तथा अन्न प्रदान करने वाली उषादेवि ! हम लोगों को आप अत्यन्त मनोहर धन प्रदान करें ॥९॥

तत्सु नः सविता भगो वरुणो मित्रो अर्यमा ।
इन्द्रो नो राधसा गमत् ॥१०॥

जिस ऐश्वर्य के साथ सविता, भग, मित्रावरुण, इन्द्र तथा अर्यमा देवगण पधारते हैं, उस ऐश्वर्य को वे सब देव हमें प्रदान करें ॥१०॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ५६

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – द्यावा पृथ्वी । छंद – त्रिष्टुप, ५-७ गायत्री

मही द्यावापृथिवी इह ज्येष्ठे रुचा भवतां शुचयद्भिरर्कैः ।
यत्सीं वरिष्ठे बृहती विमिन्वन्नुवद्भोक्षा पप्रथानेभिरेवैः ॥१॥

जब अत्यन्त श्रेष्ठ तथा बृहद् द्यावा-पृथिवी को हवाओं से प्रेरित होने वाले बादल चारों ओर से आवृत कर लेते हैं तथा ध्वनि करते हैं, तब ज्येष्ठ तथा महान् द्यावा-पृथिवी तेजस्वी स्तोत्रों द्वारा तेज-सम्पन्न हों ॥१॥

देवी देवेभिर्यजते यजत्रैरमिनती तस्थतुरुक्षमाणे ।
ऋतावरी अद्रुहा देवपुत्रे यज्ञस्य नेत्री शुचयद्भिरर्कैः ॥२॥

पूजन करने योग्य, हिंसा न करने वाली, अभीष्ट की वर्षा करने वाली, यज्ञ से सम्पन्न, विद्रोह न करने वाली, देवताओं को पैदा करने वाली



तथा यज्ञ सम्पन्न करने वाली तेजस्वी द्यावा-पृथिवी देवियाँ, देवताओं के साथ यजन योग्य तेजस्वी मन्त्रों से सम्पन्न हों ॥२॥

स इत्स्वपा भुवनेष्वास य इमे द्यावापृथिवी जजान ।
उर्वी गभीरे रजसी सुमेके अवंशे धीरः शच्या समैरत् ॥३॥

जिन सद्बुद्धि प्रदाता देव ने अपने कौशल के द्वारा विस्तृत, गम्भीर तथा आधाररहिता द्यावा-पृथिवी को उत्पन्न किया तथा दोनों लोकों को विनिर्मित किया, वहीं सत्कर्म करने वाले देव समस्त लोकों में संव्याप्त हैं ॥३॥

नू रोदसी बृहद्भिर्नो वरूथैः पत्नीवद्भिरिषयन्ती सजोषाः ।
उरूची विश्वे यजते नि पातं धिया स्याम रथ्यः सदासाः ॥४॥

हे द्यावा-पृथिवि ! आप दोनों हमारे लिए अन्न प्रदान करने की कामना वाली तथा परस्पर प्रेम से रहने वाली हों। आप दोनों विशाल क्षेत्र वाली तथा सबके द्वारा पूजने वाली होकर हमें गृहिणी से सम्पन्न श्रेष्ठ भवन प्रदान करें तथा हमारी सुरक्षा करें । हम अपने सत्कर्म के द्वारा दासों तथा रथों से सम्पन्न हों ॥४॥

प्र वां महि द्यवी अभ्युपस्तुतिं भरामहे ।
शुची उप प्रशस्तये ॥५॥



हे पवित्र एवं तेजस्वी आकाश-भूमण्डल ! स्तुति के लिए आपके निकट आकर हम आप दोनों के लिए पर्याप्त मात्रा में स्तुतियों का उच्चारण करते हैं ॥५॥

पुनाने तन्वा मिथः स्वेन दक्षेण राजथः ।
ऊह्याथे सनाद्यतम् ॥६॥

हे दोनों देवियों ! अपनी अतुलित शक्ति से आप द्युलोक और पृथिवी लोक इन दोनों को पवित्र करती हुई प्रदीप्त होती हैं और सदैव यज्ञ का निर्वाह करने वाली हैं ॥६॥

मही मित्रस्य साधथस्तरन्ती पिप्रती ऋतम् ।
परि यज्ञं नि षेदथुः ॥७॥

हे व्यापक आकाश और भू देवियो ! आप अपने सखा यजमान को अभीष्ट फल प्रदान करती हैं। यज्ञ की पूर्णता के लिए संरक्षण देती हुई यज्ञ को अवलम्बन प्रदान करती हैं ॥७॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ५७

ऋषि – वामदेवो गौतमः

देवता – १-३ क्षेत्रपति, ४ शुन, ५, ८ शूनासीरौ, ६-७ सीता। छंद – अनुष्टुप, ५ पुर उष्णिक २,३,८ त्रिष्टुप

क्षेत्रस्य पतिना वयं हितेनेव जयामसि ।
गामश्वं पोषयित्वा स नो मृळातीदृशे ॥१॥

सखा के समान हित करने वाले क्षेत्रपति के सहयोग से हम क्षेत्रों को विजित करें । वे क्षेत्रपति देव हमें गौओं तथा अश्वों को बलिष्ठ करने वाले ऐश्वर्य प्रदान करें तथा ऐसे ऐश्वर्य से हमें हर्षित करें ॥१॥

क्षेत्रस्य पते मधुमन्तमूर्मिं धेनुरिव पयो अस्मासु धुक्ष्व ।
मधुश्रुतं घृतमिव सुपूतमृतस्य नः पतयो मृळयन्तु ॥२॥

हे क्षेत्रपतिदेव ! जिस प्रकार गौएँ दुग्ध प्रदान करती हैं, उसी प्रकार आप हमें मधुरता तथा प्रवाह से सम्पन्न जल (रस) प्रदान करें। जिस प्रकार मधुरता टपकाने वाला तथा भली-भाँति पवित्र किया जाने



वाला जल सुख प्रदान करता है, उसी प्रकार सत्कर्मों के पालक आप लोग हमें सुख प्रदान करें ॥२॥

मधुमतीरोषधीर्द्याव आपो मधुमन्नो भवत्वन्तरिक्षम् ।
क्षेत्रस्य पतिर्मधुमात्रो अस्त्वरिष्यन्तो अन्वेनं चरेम ॥३॥

वनौषधियाँ हमारे लिए मधुरता से पूर्ण हों तथा चुलोक, अन्तरिक्ष और जल हमारे लिए मीठे हों । क्षेत्र के स्वामी हमारे लिए मधु-सम्पन्न हों । हम रिपुओं द्वारा अहिंसित होकर उनका अनुगमन करें ॥३॥

शुनं वाहाः शुनं नरः शुनं कृषतु लाङ्गलम् ।
शुनं वरत्रा बध्यन्तां शुनमष्टामुदिङ्गय ॥४॥

अश्व आदि वाहन हमारे निमित्त हर्षकारी हों । मानव हमारे लिए हर्षकारी हों तथा हल हर्षित होकर कृषि कर्म करें । हल सुखपूर्वक खेतों में चलें । हल के जुवे सुखपूर्वक बाँधे जाएँ तथा चाबुक भी मधुरता के साथ प्रयुक्त हों ॥४॥

शुनासीराविमां वाचं जुषेथां यद्विवि चक्रथुः पयः ।
तेनेमामुप सिञ्चतम् ॥५॥



हे शुना और सीर ! आप दोनों हमारी इस प्रार्थना को स्वीकार करें।
आप दोनों ने द्युलोक में जिस जल को उत्पन्न किया है, उस जल के
द्वारा आप इस धरती को सिंचित करें ॥५॥

अर्वाची सुभगे भव सीते वन्दामहे त्वा ।
यथा नः सुभगाससि यथा नः सुफलाससि ॥६॥

हे श्रेष्ठ ऐश्वर्य प्रदान करने वाली सीतै ! आप हमारे ऊपर अनुकम्पा
करने वाली हों । हम आपकी वन्दना करते हैं, जिससे आप हमें श्रेष्ठ
ऐश्वर्य प्रदान करें तथा श्रेष्ठ फल प्रदान करें ॥६॥

इन्द्रः सीतां नि गृह्णातु तां पूषानु यच्छतु ।
सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम् ॥७॥

इन्द्रदेव हल की मूठ सँभालें । पूषादेव उसकी देख-भाल करें, तब
धरती श्रेष्ठ धान्य तथा जल से परिपूर्ण होकर हमारे लिए धान्य आदि
का दोहन करे ॥७॥

शुनं नः फाला वि कृषन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अभि यन्तु वाहैः ।
शुनं पर्जन्यो मधुना पयोभिः शुनासीरा शुनमस्मासु धत्तम् ॥८॥



हुल के नीचे लगी हुई लोहे से विनिर्मित श्रेष्ठ फालें खेत को भली-
प्रकार से जोतें और किसान लोग बैलों के पीछे-पीछे आराम के साथ
जाएँ । हे वायु और सूर्यदेवो ! आप दोनों हविष्य से प्रसन्न होकर पृथ्वी
को जल से सींचकर इन ओषधियों को श्रेष्ठ फलों से युक्त करें ॥८॥



ऋग्वेद – चतुर्थ मंडल

सूक्त ५८

ऋषि – वामदेवो गौतमः
देवता – अग्नि, सूर्यो । छंद – त्रिष्टुप, ११ जगती

समुद्रादूर्मिर्मधुमाँ उदारदुपांशुना सममृतत्वमानट् ।
घृतस्य नाम गुह्यं यदस्ति जिह्वा देवानाममृतस्य नाभिः ॥१॥

समुद्र से मधुर लहर ऊपर को उद्भूत होती है, वह सोमरस के संग अमृतत्व को प्राप्त हो गयी । घृत (तेज) का जो रहस्यपूर्ण रूप है, वह देवताओं की जिह्वा तथा अमृत की नाभि है ॥१॥

वयं नाम प्र ब्रवामा घृतस्यास्मिन्यज्ञे धारयामा नमोभिः ।
उप ब्रह्मा शृणवच्छस्यमानं चतुःशृङ्गोऽवमीद्वौर एतत् ॥२॥

हम याजक उस घृत की स्तुति करते हैं। इस यज्ञ मण्डप में नमन के द्वारा हम उसे धारण करते हैं । हमारे द्वारा गान किये जाने वाले



स्तवनों को ब्रह्मा जी श्रवण करें । चार वेदरूपी शृंग वाले गौर वर्ण देव
ने इस जगत् का सृजन किया ॥२॥

चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य ।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्याँ आ विवेश ॥३॥

इस यज्ञाग्नि देव के चार सींग हैं और तीन पैर, दो सिर तथा सात हाथ
हैं। वे बलशाली देव तीन तरह से बद्ध होकर ध्वनि करते हैं तथा
मनुष्यों के बीच में प्रवेश करते हैं ॥३॥

त्रिधा हितं पणिभिर्गुह्यमानं गवि देवासो घृतमन्वविन्दन् ।
इन्द्र एकं सूर्य एकं जजान वेनादेकं स्वधया निष्टतक्षुः ॥४॥

देवताओं ने पणियों के द्वारा गौओं के बीच तीन तरह से छिपाकर रखे
हुए घृत (तेज) को ज्ञात कर लिया। उनमें से प्रथम को इन्द्रदेव ने पैदा
किया, दूसरे को आदित्यदेव ने पैदा किया तथा तीसरे को देवताओं
ने अपने बल के द्वारा ओजस्वी अग्नि से उत्पन्न किया ॥४॥

एता अर्षन्ति हृद्यात्समुद्राच्छतव्रजा रिपुणा नावचक्षे ।
घृतस्य धारा अभि चाकशीमि हिरण्ययो वेतसो मध्य आसाम् ॥५॥



ये धाराएँ मनोहर समुद्र से सैकड़ों गतियों से प्रवाहित हो रही हैं। रिपु उसे देख नहीं सकते। घृत की उन धाराओं को हम देख सकते हैं। उन धाराओं के बीच में विद्यमान अग्नि को भी हम देख सकते हैं ॥५॥

सम्यक्स्रवन्ति सरितो न धेना अन्तर्हृदा मनसा पूयमानाः ।
एते अर्षन्त्यूर्मयो घृतस्य मृगा इव क्षिपणोरीषमाणाः ॥६॥

अन्तःकरण के बीच से निकलकर तथा चित्त के द्वारा शुद्ध की गयी तेज की धाराएँ हर्षप्रदायक सरिताओं के सदृश भली-भाँति प्रवाहित होती हैं। जिस प्रकार शिकारी से भयभीत होकर हिरण भागते हैं, उसी प्रकार घृत की धाराएँ तीव्र गति से प्रवाहित होती हैं ॥६॥

सिन्धोरिव प्राध्वने शूघनासो वातप्रमियः पतयन्ति यद्वाः ।
घृतस्य धारा अरुषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः ॥७॥

जिस प्रकार नदी का जल नीचे की ओर तेजी से गमन करता है, उसी प्रकार वायु के समान बलशाली होकर घृत की बड़ी धाराएँ द्रुतगति से गमन करती हैं। तेजस्वी अश्वों के समान ये घृत धाराएँ अपनी परिधि को भेद करके लहरों के द्वारा वर्धित होती हैं ॥७॥

अभि प्रवन्त समनेव योषाः कल्याण्यः स्मयमानासो अग्निम् ।
घृतस्य धाराः समिधो नसन्त ता जुषाणो हर्यति जातवेदाः ॥८॥

जिस प्रकार समान विचार वाली तथा हँसने वाली स्त्रियाँ अपने पति के पास गमन करती हैं, उसी प्रकार घृत की धाराएँ अग्नि की ओर गमन करती हैं । ये घृत-धाराएँ प्रज्वलित होकर सब जगह व्याप्त होती हैं। वे जातवेदा अग्निदेव हर्षित होकर उन धाराओं की इच्छा करते हैं ॥८॥

कन्या इव वहतुमेतवा उ अञ्ज्यञ्जाना अभि चाकशीमि ।
यत्र सोमः सूयते यत्र यज्ञो घृतस्य धारा अभि तत्पवन्ते ॥९॥

जहाँ सोमरस अभिषुत किया जाता है तथा यज्ञ सम्पन्न किया जाता है, वहाँ पर ये घृत-धाराएँ उसी प्रकार प्रवाहित होती हैं, जिस प्रकार पति (वर) के समीप जाने के लिए कन्याएँ अलंकृत होती हैं। उन घृत-धाराओं को हम देखते हैं ॥९॥

अभ्यर्षत सुष्टुतिं गव्यमाजिमस्मासु भद्रा द्रविणानि धत्त ।
इमं यज्ञं नयत देवता नो घृतस्य धारा मधुमत्पवन्ते ॥१०॥

हे याजको ! देवताओं के लिए आप श्रेष्ठ स्तुतियाँ करें । हे देवताओ ! हम याजकों के लिए आप प्रशंसनीय ऐश्वर्य, गौ तथा विजय धारण करें। हमारे इस यज्ञ को आप देवताओं के समीप पहुँचाएँ । घृत की मधुर धाराएँ प्रवाहित हो रही हैं ॥१०॥



धामन्ते विश्वं भुवनमधि श्रितमन्तः समुद्रे हृद्यन्तरायुषि ।
अपामनीके समिथे य आभृतस्तमश्याम मधुमन्तं त ऊर्मिम् ॥११॥

हे परमात्मन् !आपका तेज समुद्र के बीच में बड़वाग्नि के रूप में,
आकाश में सूर्यदेव के रूप में, हृदय के बीच में वैश्वानर के रूप में,
अन्न में प्राण के रूप में, जल में विद्युत् के रूप में तथा युद्ध में
शौर्याग्नि के रूप में विद्यमान है ।समस्त लोक आपके आश्रित हैं।
आपके उस मिठास से पूर्ण रस का उपयोग करने में हम समर्थ हों
॥११॥

॥इति चतुर्थ मण्डलं॥